ज्ञानपीठ लोकोदय-ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाङ्क—२६

शेर-ओ-सुख़न

[लखनऊ-स्कूलके वर्त्तमान शाइर]

भाग दूसरा

प्राचीन उस्ताद-शाइरोंके वर्त्तमान युगीन ख्यातिप्राप्त, प्रतिष्ठित, योग्य उत्तराधिकारी लखनवी शाइरोंका जीवन-परिचय एवं कलाम

भारतीय ज्ञानपीठ काशी

द्वितीय संस्करण

सिंहावलोकनका पूर्वार्द्ध द्वितीय भागके प्रथम सस्करणमे लगाया गया था, किन्तु अब अध्ययनकी सुविधाकी दृष्टिसे वह अश यहाँसे निकालकर पाँचवे भागमे उसके शेष अश उत्तरार्द्धके साथ दिया गया है। ताकि एक ही भागमें पूर्ण परिचय मिल सके !

इस द्वितीय सस्करणमें सशोधनके अतिरिक्त ८२८ नये मअनी, 'दिल' शाहजहाँपुरीपर ६२ पृष्ठका नया परिचय एव कलाम और २०० नये अशआर यथा-स्थान बढाये गये हैं।

१ जनवरी १६५८ ई०

अ० प्र० गोयलीय

साहू-जैन-कुल-दिवाकर

आयुष्मान् प्राणप्रिय अशोककुमार

और

सौभाग्यवती बहूरानी इन्दु-श्री को

उनके

पाणिग्रहण-संस्कारके परम पुनीत मंगलमय अवसरपर अनेक शुभ भावनाओं एवं शुभाशीर्वादोंके साथ उनकी साहित्यिक सुरुचिके सौष्ठव संवर्धनार्थ मेरी जीवन साधनाके उत्कृष्टतम शेर-ओ-सुखनके ये भाग उपहार-स्वरूप सस्नेह भेंट

१८ नवम्बर १९५२ ई०]

गोयलीय

विषय-सूची

लखनऊ-स्कूलके शाइर

उन्नीसवीं शताब्दीमें हुए जलाल, अमीर मीनाई तकका परिचय शेरो-सुख़न प्रथम भागमें दिया जा चुका है। बीसवीं शताब्दीमें ख्याति पाने-वाले इनके मुख्य-मुख्य शिष्योंका परिचय प्रस्तुत भागमें मिलेगा।

इन शाइरोंके अतिरिक्त—नज्म तबातबाई, सफी, नज़र, नातिक़, अज़ीज़ और असरका परिचय एवं कलाम भी प्रस्तुत भागमें मिलेगा।

सूचनाएँ

१—पहिले भागमें—उर्दूके प्रारम्भकालसे १९वी सदोके अन्तिमकाल तक ख्याति पानेवाले गज़लोंके माने हुए मुख्य-मुख्य उस्तादोका परिचय एव कलाम और उस युगकी शाइरीपर विस्तृत अध्ययन दिया गया है।

२—दूसरे, तीसरे, चौथे भागमें—उनके योग्य उत्तराधिकारी वर्त्तमान गज़ल-गो शाइरोका परिचय एव कलाम दिया गया है।

३—पाँचवें भागमें—गज़लका क्रमवद्ध इतिहास सिंहावलोकन और मुशाइरोका रूप प्रस्तुत किया गया है।

४—उक्त २, ३, ४ भागोमें वर्त्तमान युगीन उन वयोवृद्ध शाइरोका उल्लेख हुआ है, जो १९वी शताब्दीमें पैदा हुए और बीसवी शताब्दीके प्रारम्भिक युग १९१५-२० ई० तक ख्यातिके शिखरपर पहुँच गये और मुसल्लिम-उल-सवूत (प्रामाणिक) उस्ताद समझे गये। जिन्होने पुराने उस्तादोंकी आँखे देखी और जिनके हज़ारो शिष्य वर्त्तमान भारत और पाकिस्तानमें मशहूर हैं।

५—इनमें-से कुछ पुरातन परम्पराके अनुयायी हैं, तो कुछ नवीनताके उपासक, और कुछ ऐसे भी हैं, जिन्होंने प्राचीनता और नवीनताका अत्यन्त कलापूर्ण ढगसे सम्मिश्रण किया है। ग़रज़ सभी अपने-अपने रगके माने हुए उस्ताद हैं। इन तीनो भागोमें हर रगकी अनुपम गगा-जमुनी छटा देखनेको मिलेगी।

६—१९१५ ई० तकका काल एक तरहसे पूर्ववर्त्ती शाइरोका अनुकरण युग रहा है। उस समयतक गज़लोमें कोई विशेष परिवर्त्तन दृष्टिगोचर नही होता। हाँ हाली-ओ-आज़ादके नज़्म-आन्दोलनके जोरके कारण गज़ल कुछ जम्हाइयाँ एव करवट-सी लेती हुई मालूम होती है।

१९१५ ई० के बाद ग़ज़लमें स्पष्टतः जागृतिके चिह्न झलकने लगते है। दोनों महायुद्धोकी विभीषिकाओं, असहयोग, खिलाफत, किसान-मज़दूर-आन्दोलनों, साम्प्रदायिक-सघर्षों और स्वराज्य-प्राप्ति एव भारत-विभाजनके फलस्वरूप जो क्रान्तियाँ हुईं, उन सबका गज़लपर भी प्रभाव पडा और उसमें उत्तरोत्तर परिवर्त्तन एवं परिवर्द्धन होते गये। ग़ज़ल अपने प्रारम्भिक कालसे १९५७ ई० तक किस स्थितिसे गुज़रकर कहाँ जा पहुँची है ? उसका प्रारम्भमें कैसा रूप था और वर्त्तमानमें कैसा कायाकल्प हुआ है। यह सब तीनों भागोंमें देखनेको मिलेगा। फिर भी हमने पाठकोंकी सुविधाके लिए पाँचवें भागके सिंहावलोकनमें तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करनेका प्रयास किया है।

७—१९वी शताब्दीके उत्तरार्द्धमे विशेष ख्याति पानेवाले उस्ताद—अमीर, जलाल, तसलीम, दाग़, हाली आदिके हज़ार-हा शिष्योमें-से हमने केवल चन्द प्रसिद्ध शाइरोका परिचय एव कलाम दिया है। इससे अधिकका परिचय देना हमारी सामर्थ्य और शक्तिके परे था। बकौल मीर—

उम्र थोड़ी है और स्वाँग बहुत

८—ध्यान रहे हमने इन २, ३, ४, भागोमें उन्ही गज़लगो शाइरोका परिचय दिया है, जो १९वी शताब्दीमें उत्पन्न हुए और १९२० ई०के पूर्व ही उस्तादीकी मसनदपर आसीन हो गये। इसी युगके अन्य प्रसिद्ध-प्रसिद्ध ग़ज़लगो उस्ताद और १९२० ई०के बाद ख्याति पानेवाले गज़ल और नज़्मगो शाइरोंका परिचय 'शाइरीके नये दौर' और शाइरीके नये मोड़में दिया जा रहा है।

९—यद्यपि कई शाइर प्रस्तुत २, ३, ४ भाग लिखनेसे पूर्व और अधिकांश शाइर पुस्तक लिखते-छपते जन्नतनशी हो गये है। फिर भी हमने उनका उल्लेख वर्त्तमान युगीन शाइरोमें किया है, क्योकि वे सब इसी बीसवी सदी—दौरे-जदीद—के शाइर हैं। इसी युगमें वे परवान चढ़े, उस्तादी हैसियत प्राप्त की और फले-फूले।

१०—प्रस्तुत २, ३, ४ भागोमें वर्णित शाइरोमें—साकिब, हसरत, फानी, असगर, जिगर और सीमावका परिचय संक्षेपमें शेरो-शाइरीमे दिया जा चुका था।। फिर भी ऐतिहासिक क्रमको बनाये रखनेके लिए इनका उल्लेख इन तीन भागोमे भी किया गया है। इनके बगैर इतिहास लँगड़ा-लूला रहता। अतः हमने इनका परिचय और कलाम शेरो-शाइरीसे सर्वथा भिन्न और नवीन देनेका प्रयत्न किया है।

११—शाइरोका कलाम उनकी जिन कृतियोंसे चुना गया है, उनका नाम कलामसे पूर्व या बादमें दे दिया गया है। कृतियोंके अतिरिक्त उनका ताजे-से-ताजा कलाम भी देनेका प्रयास किया गया है, और वह जिन पत्र-पत्रिकाओंसे सकलन किया गया है, उनका भी यथास्थान उल्लेख किया गया है। जिन शाइरोंके दीवान मुद्रित नही हुए, अथवा हमें प्राप्त न हो सके, उनका कलाम हमने जिन तज़किरों और पत्रोंके अख्बारोंसे खोजा है; उनके नाम भी कलामके साथ दे दिये है। उन सबकी तालिका पृथकसे नहीं दी गई है।

१२—अक्सर हर शाइरके कलामके अन्तमें हमने तारीख दी है, ताकि लेखनकालका पता लग सके। कई जगह बहुत नज़दीकी तारीखें अकित है। उतने वक्फेमें वह मज़मून लिखा ही नही जा सकता। इसकी वजह यही है कि कई-कई मज़मून यथावश्यक और सुविधानुसार लिख लिये गये; परन्तु किसी वजहसे पूर्ण न हो सके और जब पूर्ण हुए तो लगातार होते चले गये और तभी मज़मून-समाप्तिकी तारीख डाल दी गई। शाइरोंका कलाम पढा कभी गया, उद्धृत कभी किया गया और परिचय आदि सुविधानुसार कभी लिखा गया। कुछ स्थल सुविधानुसार आगे-पीछे लिखे गये है और उन्हे बादमें क्रमबद्ध कर दिया गया है। ये २, ३, ४, ५ भाग १९४९ ई०में लिखने शुरू किये गये थे और दिन-रातके लगातार परिश्रमके बाद १९५४ ई०में पूर्ण हो सके है।[1]

---

[1]द्वितीय संस्करणके संशोधन, परिवर्त्तन एवं परिवर्द्धनमें १९५७ का पूरा वर्ष व्यतीत हुआ है।

१३—सभी शाइरोंके चित्र हमे प्राप्त नही हो सके। काफ़ी प्रयत्न करनेके वाद कुछ चित्र संकलित हो सके और वह भी ऐसी स्थितिमें कि उनके हाफटोन ब्लाक नही वन सके। अतः पहिले उन चित्रोंके शीर्षक लाइन चित्र वनाये गये, फिर ब्लाक वने हैं।

१४—अधिकाश शाइरोंका परिचय एवं कलाम हम अपनी अभिलाषानुसार विस्तारसे नही दे सके है, न उनपर विशेष प्रकाश ही डाल सके है। इसका कारण यही है कि किन्हीके दीवान प्रकाशित नही हुए तो किन्हींके वाज़ारमे प्राप्त नही। हमारे अपने भी सीमित साधन है। लिखते हुए भी ५ वर्षसे अधिक हो गये थे। स्वास्थ्य जव धोका देने लगता था, तव भय हो उठता था कि जीवनकालमें छपेंगे भी या नही। अतः अधिक प्रतीक्षा न करके जहाँ-जहाँसे जितना भी कलाम मिल सका, संकलन करनेका भरसक प्रयत्न किया गया है। पूर्ण परिश्रम करने और पूरी सावधानी रखते हुए भी अज्ञान जनित न जाने कितनी त्रुटियाँ रही होगी? मै स्वय अपनी कमियों और अल्पज्ञतासे परिचित हूँ। फिर भी पाठक इसे अपनायें तो इसके सिवा और क्या कहा जा सकता है—

"यह फ़कत आपकी इनायत है।
वरना मै क्या, मेरी हकीकत क्या?"

डालमियानगर
७ जनवरी १९५४

अ. प्र. गोयलीय

लखनऊ स्कूलके
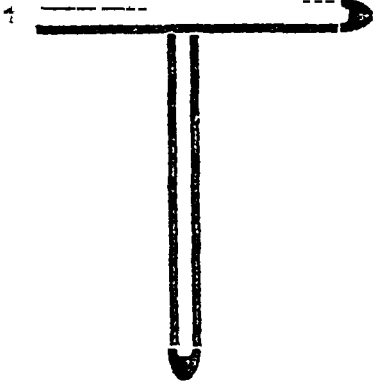
वर्त्तमान युगीन

ख्यातिप्राप्त शाइर

१. साकिब लखनवी
२. असर लखनवी
३. रियाज़ खैराबादी
४. दिल शाहजहाँपुरी
५. जलील मानिकपुरी
६. हफ़ीज़ जौनपुरी
७. सरशार लखनवी
८. शौक रैना
९. आरज़ू लखनवी
१०. उम्मीद उमेठवी
११. सफी लखनवी
१२. अज़ीज़ लखनवी
१३. नज़र लखनवी
१४. नातिक लखनवी
१५. नज्म तबातबाई

मिर्ज़ा ज़ाकिर हुसेन 'साकिब' २ जनवरी १८६९ ई० को आगरेमें उत्पन्न हुए। उसी आगरेमें, जहाँ उर्दूके अमर शाइर—मीर, गालिब और नज़ीर पैदा हुए थे। यह प्रकृतिकी अनोखी सूझ ही समझिए कि जो साकिब, मीर-ओ-गालिबकी शिष्य परम्परासे दूरका वास्ता न रखते हुए भी शाइरीमें उनके उत्तराधिकारी समझे जाते हैं; जिन्हे मीर-जैसी मधुर एव हृदयस्पर्शी भाषा और ग़ालिब-जैसी उच्च भावनाएँ और अनोखी कल्पनाएँ प्राप्त हुईं; उन्हें उनकी क्रीड़ास्थलीमें जन्म लेनेका भी सौभाग्य प्राप्त हुआ।

अभी आप छः माहके थे कि आपके पिता आगरा छोड़कर लखनऊ चले आये और कुछ दिनो नौकरीके सिलसिलेमें इधर-उधर रहकर स्थायी रूपसे लखनऊमें बस गये।

कुदरतकी सितमज़रीफी देखिए कि साकिबको बचपनसे ही जितनी ज्यादा शाइरीसे रगबत थी, उतनी ही अधिक आपके पिताको उससे चिढ थी। परिणाम इसका यह हुआ कि आपके मनोभाव मन-ही-मनमे घुटने लगे। आखिर यह घुटन कबतक चलती ? वह भापकी तरह उमड पड़ी। अभी आप १२ वर्षके थे, और शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। बुज़ुर्गोंके भयसे न तो गज़ल कह सकते थे और न किसी मुशाइरेमें क़दम रख सकते थे।

बेचारे मन मारकर रह जाते थे। आखिर आपने एक उपाय निकाल ही लिया। आप मुशाइरोके मिसरा-तरहोपर गजल कहते और अपने सह-पाठियोको मुशाइरोमें पढनेके लिए दे देते। किस शेरपर किस-किस उस्तादने दाद दी, साथियोंसे यही जानकर आत्मसतोष कर लेते थे।

१८८७ से १८९१ तक आप अग्रेजी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए आगरे रहे। खुश किस्मतीसे वहाँ आपको मोमिन हुसेनखाँ 'सफी'-जैसे योग्य उस्ताद नसीब हुए। उन्हे उर्दू, फ़ारसी, अरबी तीनो भाषाओमें शेर कहनेका बहुत अच्छा अभ्यास था। प्रतिभासपन्न 'साकिब'को उन्होने मुक्त हृदयसे शिक्षा दी और आप चन्द ही दिनोमें इस योग्य हो गये कि अपने गुरु भाइयोकी गजलोका सशोधन सफलतापूर्वक करने लगे।

मिर्ज़ा साक़िब जितनी उच्च कोटिकी गज़ल कहते थे, उतनी ही हृदय-स्पर्शी आवाज़मे पढ़ते भी थे। श्रोताओंपर जादू-सा होने लगता था, और मुशाइरे-का-मुशाइरा झूम उठता था। मुशाइरोमे पहले तरन्नुमसे[1] पढ़नेकी प्रथा नही थी, यह इसी बीसवी सदीकी देन है[2]। इस प्रथाके कारण कलाम-पर कम और तरन्नुमपर अधिक दाद मिलती है, और अक्सर देखा जाता है कि तरन्नुमसे न पढ सकनेके कारण अच्छे-से-अच्छे उस्ताद नौसिखुए छोकरोंके सामने माँद पड़ जाते है। मिर्ज़ा कभी भी तरन्नुममे गजल नही पढ़ते थे, फिर भी उनकी सादा और पुरजोश गज़ल-ख्वानीके सामने खुश गुलू और सगीत पारगत शाइर भी अपना रग नही जमा पाते थे। अक्सर दावेके साथ प्रतिद्वद्वी शाइर मुशाइरोमें गये, मगर आपके समक्ष मुँहकी खाकर बाहर निकले।

मिर्ज़ाको फिलबदीह (तात्कालिक) शेर कहनेका बहुत अच्छा अभ्यास था। एक बार लखनऊके कुछ प्रतिष्ठित साहित्य-प्रेमियोने यह आयोजन

---

[1]गाकर पढ़ना; [2]लोगोका कहना है कि तरन्नुमसे पढनेका रिवाज नवाब 'साइल' देहलवीने चालू किया। आपका परिचय चौथे भागमें मिलेगा।

किया कि मुशाइरेमे सम्मिलित होनेवाले शाइरोंके आजानेपर मिसरा-तरह देकर वही गजल कहलाई जाय, ताकि मालूम हो सके, कौन कितने पानीमें है। योजनाके अनुसार मिसरा-तरह देनेपर आपने सबसे पहले, सबसे अधिक और सबसे अच्छे शेर कहे, और आप ही विजयी घोषित हुए। आप अक्सर मार्ग-चलते हुए भी शेर कहते थे, परिणामस्वरूप कई बार सवारियोसे और राहगीरोसे टकराकर चोट खा गये।

मीर-ओ-गालिबकी तरह आप भी आर्थिक चिंताओमे ग्रसित रहे। एक हजरतके साथ अपनी समस्त जमा पूँजी लगाकर व्यापार किया तो उन्होंने सब पूँजी चौपट कर दी।

१९०६ मे यानी २७ वर्षकी उम्रमे आप कलकत्ते गये और वहाँ सुफारतखानए-ईरानमे दो वर्ष प्राइवेट सेक्रेटरी रहे। १९०८ ई० में राजा-महमूदाबादने आपको बुला लिया और ५० रु० मासिक पेंशन नियत कर दी। इस युगमे इस अल्प आयसे क्या होता है, मगर आप इतने सन्तोषी थे कि उसीमे आनन्दपूर्वक जीवन-यापन करते रहे।

मिर्जा पुरानी वजअ-कितअके बुजुर्ग थे। सरल स्वभावी, उच्च विचारक और गभीर। बहुत मिलनसार लेकिन स्वाभिमानी व्यक्ति थे। मित्रोंके समक्ष नम्र, किन्तु शत्रु-पक्षके आगे सरबुलन्द। आत्मविज्ञापनसे कोसो दूर, अपने विचारोंमें अक्सर लीन और खोये-से रहते थे। स्वतन्त्र विचारक और बातचीतमें सजीदा। दुबले-पतले। शक्लो-शबाहत भद्रता-पूर्ण। चेहरेपर सफेद फ्रेंच दाढी और आँखोपर चश्मा निहायत जेब देता था। अक्सर काली शेरवानी और गोल टोपी पहनते थे। २२ नवम्बर १९४९ को आप जन्नतनशी हुए।

मिर्ज़ाकी शाइरी

मिर्जाका समस्त जीवन प्राय लखनऊमे व्यतीत हुआ। उन्होंने अपनी किशोरावस्थामे १९ वी शताब्दीके अतिम युगोंके ख्यातिप्राप्त साहिबेकमाल उस्तादोको अपनी आँखोंसे देखा। असीर, बर्क, बहर, कलक, अमीर,

जलाल, शमशाद, इश्क, उन्स, वफा, तग्राश्शुक, रसीद, कामिल आदि सब लखनवी शाइर तब जिंदा थे।

उन दिनो लखनऊकी शाइरीपर दो प्रकारका वातावरण छाया हुआ था। एक नासिखी दूसरा बाज़ारी। यद्यपि नासिखको गुज़रे हुए ५० वर्षके क़रीब हो चुके थे, तो भी उनके शिष्य और परशिष्य नासिखी स्कूल खोले हुए बैठे थे। बाज़ारी शोख तर्ज़े-अदाने ग़ज़लको इस क़दर पतितावस्थामें पहुँचा दिया था कि भले आदमी दामन बचाकर निकलने लगे थे। मगर आम जनता इस तर्ज़े-अदापर टूटी पडती थी। संक्षेपमे यू समझिए कि जिस शहरमे नौटकी हो रही हो, तो वहाँके भद्र पुरुषोंकी तो नीद हराम हो जाती है। मगर जनसमूह उमड पडता है। वर्तमानमे सिनेमाओंके कुरुचिपूर्ण प्रदर्शनोसे लोग ऊब गये है, मगर जन-साधारणकी भीडका यह आलम रहता है कि एक-पर-एक टूट पडता है।

मिर्ज़ाने भी इसी वातावरणमे शाइरीकी चौखटपर पाँव रखा, और नासिखका जो रंग सामने था, उसीमे गोते लगाने लगे। मिर्जाका क्या ज़िक्र ? नासिखका रग तो किसी वक़्तमें इतना मकबूल हुआ कि 'आतिश'-जैसे उस्ताद उसके छीटोंसे अपने दामनको बचाये न रख सके। और आतिशको तो खैर नज़रअन्दाज़ किया भी जा सकता है, क्योंकि आखिर वह भी लखनवी थे। मगर देहलवी शाइर शाह 'नसीर' और 'ज़ौक' को क्या हुआ था जो उम्र भर डुबकियाँ मारते रहे। और-तो-और गालिब व मोमिन जैसोके पाँव भी फिसले बगैर नही रह सके। वह तो खैर हुई जो फौरन सँभल गये, वर्ना ईश्वर ही जाने आज उर्दू-गज़ल कहाँ होती ? और होती, या नही यह भी कुछ कहा नही जा सकता।

हाँ तो मिर्ज़ाने अपनी शाइरीका श्रीगणेश नासिखी स्कूलसे ही किया। दो-चार नमूने देखिए—

इश्क़े-पेचाँ क़दे-जानाँने बनाया 'साकिब'!
ऐंड़ना भूल गये, सरो-ओ-सनोबर अपना॥

मेरे लहूसे अगर होके सुर्ख़रू[1] आये।
मलो तो बर्गे-हिनामें[2] वफाकी[3] बू आये॥
देर-पा है किस क़दर 'साक़िब' हसीनोंका शबाब।
उम्रभर अपनी जवानीकी क़सम खाते रहे॥
मैं सख़्तजाँ[4] नहीं, खंजर भी तेज़ है लेकिन—
निगाहे-यास[5] है क़ातिलकी तेज़ दस्ती है॥
ज़ख्मे-जिगरसे अबरुए-क़ातिलने[6] चाल की।
दिलतक शिगाफ़[7] दे गई, छूट उस हिलालकी[8]॥
ग़ैरकी इमदादसे चमके नहीं अहले-कमाल[9]।
नामको रोग़न चिराग़े-तूरे-सीनामें न था॥

इसप्रकारके नासिख़ी शेर मिर्ज़ाके दीवानमें यत्र-तत्र काफी नज़र आते हैं। आपने अपने सोज़ो-गुदाज़से कलाममें वोह बात पैदा कर दी है कि नासिख़ी रंग घुलकर रह गया है। यही मिर्ज़ाकी शाइरीका कमाल है। हाँ, जहाँ नासिख़का रंग गहरा हो गया है, वहाँ असर और मज़ा जाता रहा है।

मिर्ज़ा साहबका तग़ज़्ज़ुलकी दुनियामें जो उच्च और महत्वपूर्ण स्थान है, उसको देखते हुए न जाने क्यों इस तरहके हलके शेर भी दीवानमें दृष्टि-गोचर होते हैं—

ख़फ़ा क्यों हो जो पैग़ामे-क़ज़ा[10] अबतक नहीं आया।
बुरे दिलसे तुम्हें ख़ुद कोसना अबतक नहीं आया॥
ग़ैरोंको दिखाया मेरा दिल खोलके यूँ ही।
मुझसे दमे-पुरसिश[11] यह कहा—"और ही कुछ है"॥
क्यों मेरे सीनेसे उठे फेरकर मुझपर छुरी?
नातवाँ[12] है दिल, मगर यह बार[13] रहने दीजिए॥

---

[1]रक्तमें भीगकर; [2]मेंहदीके पत्तेमें; [3]भलाईकी, [4]वज्र शरीर, [5]निराशापूर्ण, [6]प्रेयसीकी भँवोंने, [7]दरार; [8]दूजका चाँद; [9]कलाविद; [10]मृत्यु-सन्देश, [11]दरियाफ्त करनेके समय, [12]कमज़ोर, [13]बोझ, एहसान।

साफ़ कह दीजिए वादा ही किया था किसने।
उज़्र क्या चाहिए झूठोंको मुकरनेके लिए॥

इसप्रकारके हलके अशआर निकाल दिये जाते तो वेहतर होता, लेकिन सभव है इन अशआरके दिये जानेका कारण यह भी हो कि मिर्ज़ा जनताको यह वताना चाहते हो कि वातावरणका प्रभाव किसी-न-किसी रूपमे सभीपर पड़ता है, और मेरे जैसा सुरुचिपूर्ण और उन्नत विचारक भी तत्कालीन दूषित वातावरणसे अपने दामनको अछूता न रख सका। और इसको क्या कहिए कि इस युगमे भी जब कि शाइरी छलाँग मारती हुई कहाँ-से-कहाँ जा पहुँची है, आज भी वहुत-से शाइर इस फीकी वदमज़ा शाइरीपर सर धुनते है।

मिर्ज़ाके यहाँ कुछ कलाम क्लिष्ट और ऐसा भी मिलता है, जिसका अभिप्राय समझना कठिन होता है।

मिर्ज़ा साकिवने १९वी शताब्दीमे आँखें खोली, और उन्हे उस युगके शाइरोके रग-ढग देखनेको मिले। वीसवी सदीमें उनकी शाइरी परवान चढ़ी। अत. उनकी शाइरीमें प्राचीन और वर्त्तमान युगका ऐसा खट्टा-मीठा सम्मिश्रण हुआ है कि वह गुड और अमचूर न रहकर शन्तरा वन गई है। यानी उनकी शाइरीमे परम्पराओका निभाव, छन्द और पिंगलके व्याकरणकी पावन्दी, साथ ही आधुनिक युगकी सभी समस्याओकी झलक भी मिलेगी।

प्राचीन परम्पराके अनुसार मिर्ज़ाने भी गुलो-वुलवुल सबधी अशआर कहे है। मगर अपने युगकी स्वतन्त्रताकी माँगको इस खूवीसे व्यक्त किया है कि शेरमे तगज्जुल ज्यो-का-त्यो विद्यमान रहता है, और एक-एक शेरमे भाव ऐसे व्यक्त किये है कि गागरमे सागर भर दिया है।

स्वतन्त्रता-आन्दोलनको कुचलनेमें अग्रेज़ोने कोई कोर-कसर वाकी न रखी। देश-भक्त फाँसी चढाये गये, जेलोमे सडाये गये, उनके संदेश जनतामे गूजते ही रहे, उन्हे कोई रोक न सका, इसी भावको मिर्ज़ाने यूँ व्यक्त किया है—

बनके इबरतकी[1] जबाँ कहता रहेगा कुछ-न-कुछ।
सहने-गुलशनमें[2] अगर मेरा कोई पर रह गया॥

जेलमें नेता पटे हुए है, अग्रेज सरकार समझती है कि स्वतन्त्रता-आन्दोलन समाप्त कर दिया गया है; परन्तु उसे जनताके हृदयमें दहकती आगका पता नही लगता, वह जनताके अन्तस्थलको छूनेका प्रयत्न ही नही करती—

तमाशा सोजे-दिलका[3] देख जाकर सहने-गुलशनमें।
कफसमें हूँ, मगर शोले[4] भड़कते है नशेमनमें॥

ससारमे सुख-दुख, साथ-साथ रहते है। कोई रो रहा है, कोई हँस रहा है। एक उजड रहा है तो दूसरा बन रहा है। इसी भावको मिर्ज़ा यूँ व्यक्त करते है—

रस्मे-दुनिया है, कोई खुश हो कोई नाशाद हो।
जब उजड़ जाये नशेमन तो कफस आबाद हो॥

ज़ाहिर.मे हँसोड व्यक्ति अपने जीवनमें कितना अधिक रोता है, यह दुनिया नही जानती। सिनेमा-ससारका प्रसिद्ध हँसोड अभिनेता चार्ली चैपलिन, जो दर्शकोके पेटमें हँसाते-हँसाते बल डाल देता है, कहते है उसे अपने जीवनमे हँसना बहुत कम नसीब हुआ। हास्यरसके लेखकोको अपने हृदयका कितना रस सुखाना पड़ता है, भुक्तभोगी ही जानते है। इन हँसोड़ व्यक्तियोका मिर्ज़ाने कितना दयनीय दृश्य उपस्थित किया है—

सुबहको राज़े-गुलो-शबनम[5] खुला।
हँसनेवाले रातभर रोया किये॥

सुभाप बाबू जीवित है या स्वर्गस्थ, यह अभीतक विवादका प्रश्न बना हुआ है। मिर्ज़ाका निम्न शेर देखिए इस जगह कैसा मौजूँ होता है—

खूब था किस्सए-कफस[6] सुनते जो मेरे हमनवा[7]।
कैदमें हूँ कि मर गया, इसमें भी इख़्तलाफ़[8] है॥

---

[1]नसीहत, आदर्शकी; [2]उपवनके आँगनमे, [3]हृदयकी अग्निका, [4]आगकी लपटे, चिनगारियाँ; [5]फूल और शबनमका रहस्य, [6]बन्दी जीवनकी कहानी; [7]सहयोगी, साथी (सम भाषा-भाषी); [8]मतभेद, विरोध।

2093

भारत-विभाजनके ५-६ माह पूर्व जो देशकी स्थिति थी, उसे देखते हुए स्वतन्त्रताका स्वप्न तो भग हो ही गया था। सम्प्रदायके मोहमें पड़कर लोग अपने-अपने सम्प्रदायकी खैर मना रहे थे। देश डूबे या रहे, इसकी सम्प्रदायवादियोंको तनिक भी चिन्ता नही थी। तब मिर्ज़ाका यह शेर हम अक्सर गुनगुनाया करते थे—

हमदम! चमनकी ख़ैर मना, आशियाँ तो क्या?
दो-चार दिन अगर यह हवा और चल गई॥

और बापूकी वह अहिंसा, जिसकी साधना वे निरंतर ३२ वर्षोंसे करते आ रहे थे, मुस्लिम लीगियोके तनिक-से संकेतपर कितनी बिलखी, यह मिर्ज़ाके ही ज़बानेमुबारकसे सुनिए—

कल एक जाँ गुदाज़[1] तबस्सुममें[2] बर्कके[3]।
बरसोंमें जो बसाई थी, बस्ती वोह जल गई॥

१९४२ ई० मे हज़ारीबाग जेलसे कुछ सत्याग्रही बन्दियोने श्री जयप्रकाशनारायण आदिको जेलसे भागनेमे सहायता दी, और बाहर निकलनेपर कुछ लोगोने उन्हे अपने यहाँ छिपा लिया। इससे उनपर काफ़ी सख्तियाँ हुईं। एक जी हुज़ूर किस्मके सज्जनसे इस बारेमें ज़िक्र आया तो बोले—"नाहक बैठे-बिठाये अपने सरपर आफ़त बुला ली, क्या ज़रूरत थी उन्हें यह दर्दे-सर मोल लेनेकी?" अब मैं उन्हे कैसे समझाता कि लुत्फ़े-असीरी (बन्दी-जीवनका आनन्द) क्या है? खुद चाहे उम्र भर कफसमें पड़ा हुआ जान हलाक कर दे, मगर किस तरकीबसे सैयादकी नींदे उचाट हो सकती है, यह हर असीरकी ख्वाहिश होती है। गरीबने मिर्ज़ाका यह शेर पढा होता तो जज़्बये-असीरी (राजनैतिक कैदियोके मनोभाव) समझ सकता।

कोई छूटा तो असीरीसे,[4] मेरी शुक्रे-खुदा।
मैं कफ़समें हूँ, मगर नींद उड़ गई सैयादकी॥

---

[1]हृदयको द्रवीभूत करनेवाली, दिलको पिघलानेवाली; [2]मुसकान, हँसीमें; [3]बिजलीके; [4]कैद रहनेसे।

और सचमुच सुभाष बाबू और जयप्रकाशनारायण आदिके अन्तर्धान हो जानेमे अंग्रेज-शासकोंकी नीदें उड गई थी।

भारत-विभाजनके बाद पंजाब और बगालसे हिन्दू भारत चले आये। भारतका कुछ हिस्सा कटकर पाकिस्तान कहलाने लगा। मुल्लाओ, नवाबो, किसानों और जमींदारोंमे अस्थायी गठबन्धन हो गया। शिआ-सुन्नी, अहमदी भी घी-खिचड़ी हो गये। यह ज़ाहिरा मिल्लते-इस्लाम परवान चढ़ने लगी। मगर जो दूरअन्देश थे, वे अक्सर मिर्ज़ाका यह शेर गुनगुनाते होंगे—

फूलोंसे तो छुटा मैं, हाँ अब यह देखना है।
कबतक बनी रहेगी, गुलचीं-ओ-बाग़बाँमें?

स्वदेशी-आन्दोलनपर मिर्ज़ाका यह शेर कैसा चस्पाँ होता है? कुछ जी-हुज़ूर विलायती कपडोमें सजे हुए किसी खद्दरके कपडे पहने हुए व्यक्तिका मज़ाक़ उडाते है। तो वह गरीब मिर्ज़ाका यह शेर सुनाकर उनकी बोलती बन्द कर देता है—

कफसकी तीलियाँ अच्छी है, तिनकोंसे नशेमनके।
यह सब कुछ है मगर, सैयाद! दिलपर क्या इजारा है?

हुस्नो-इश्क

मिर्ज़ाके यहाँ हुस्नो-इश्कका आसन बहुत ऊँचा है। इश्क़के लिए बहुत अधिक साधना और तप करने पडते है। जो विरहकी आँच बर्दाश्त नही कर सकते, ऐसे विषयासक्त इश्क करने योग्य नही—

इश्कमें सहल थी फरहादको तकलीद[1] मगर।
यह मेरी हिम्मते-आलीको[2] गवारा[3] न हुआ॥

इश्क तो वह रग है कि जिसपर चढा, फिर कभी न उतरा। चाहे

---

[1]अनुकरण, नक़ल, [2]पवित्र साहसको, उच्च विचारोंको; [3]पसन्द।

मिलनकी वेला हो या विरह-रात्रि, आशिक तो दोनो ही हालतोंमें बेचैन रहता है—

विसालो-हिज्रमें छुपता है दिलका हाल कहीं?
बुझे तो प्यास सिवा हो, जले तो बू आये॥

जो अपने मन-मन्दिरमें प्रेम-ज्योति जला लेता है, वह चारो तरफसे किवाड बन्द करके, सुध-बुध खोकर अपने हबीबको निहारता रहता है। भिलनी अपने रामको देखकर बोलनेकी शक्ति बिसार बैठी, और बुद्धि जो थोड़ी-बहुत पास थी, उसे भी खोकर एक टक निहारने लगी। प्रेमके आवेगमे उसे यह भी ध्यान नही रहा कि वह अपने हबीबको जो बेर खानेको दे रही है, वह स्वय जूठे करके दे रही है। भला जूठी चीज़ भी किसी मेह-मानको खिलाई जाती है? मगर इश्कके तो करिश्मे ही जुदा है—

इक लबे-ख़ामोश बनकर इश्क़ गोयाई रहा।
हम्द करता कौन? आ़लम महवे-यकताई रहा॥

[जिस इश्कमे बोलनेकी शक्ति थी, वह लब सीकर रह गया। प्रेयसी-की प्रशंसा करनेकी सामर्थ्य ही कहाँ रही, वह तो उसके यकता हुस्नपर महव होकर रह गया]।

मिर्ज़ा आवारोकी तरह न तो कूचये-जानाँमें चक्कर लगाते है, और न वे दिल फेंक तमाशबीनोकी तरह इश्कका ढिंढोरा पीटते हैं—

उ़म्र भर जलता रहा दिल और ख़ामोशीके साथ।
शमअ़को इक रातकी सोज़े-दिलीपर नाज़ था॥

जनकपुरीके उद्यानमे घूमते हुए राम-सीता अनजानेमे ही एक-दूसरेको दिल दे बैठे। उनकी समझमे यह नही आया कि अचानक यह क्या हो गया। किसीसे पूछ भी नही सकते। भला ऐसा रोग भी कोई किसीपर प्रकट करता है—

दिलने रग-रगसे छुपा रक्खा है, राज़े-इश्क़े-दोस्त!
जिसको कहदे नब्ज़ ऐसी मेरी बीमारी नहीं॥

मिर्ज़ाका हबीब मानवीय न होकर कहीं-कहीं ईश्वरीय नज़र आता है—

छुपाओ आपको जिस रंग या जिस भेसमें चाहो।
मगर चश्मे-हकीकतबींसे[1] पर्दा हो नहीं सकता॥
तमाशा चश्मे-दिलसे[2] अहले-इरफ़ाँ[3] देख ही लेंगे।
किसी पर्देमें हो तसवीरे-जानाँ[4] देख ही लेंगे॥

मिर्ज़ा इश्कको रुसवाईका बाइस न समझकर उसे ज़ीनत समझते हैं—

'साकिब' ! सियाह खानए-दिलमें[5] यह दाग़े-इश्क[6]।
एक चान्द है कि ज़ीनते-काशाना[7] हो गया॥
क्यों मेरे दाग़े-दिलकी है दुश्मन हवाए-दहर[8]।
ऐसे चिराग़ बुझ नहीं सकते ज़मानेमें॥

मिर्ज़ाका हबीब बाज़ारी नहीं, अपितु हयापरवर सुशीला नारी है—

उमीदो-बीममें[9] रक्खा तमाम रात मुझे।
कभी नकाब उठाई, कभी हिजाब[10] आया॥

मन स्वस्थ होगा तो विचार भी स्वस्थ होंगे। वह अस्वस्थ हुआ तो सब चौपट हुआ। अत अपने मन-मन्दिरको ऐसा बनाओ कि मन-मूरतको रहनेमे वहाँ असुविधा या सकोच न हो। जब मन-मन्दिरमें ही अँधेरा कर रखा है, तो प्रीतम उसमें कैसे जलवागर होगा ?

शामे-ग़म[11] जिसमें रहे बरसों, वहाँ क्या ईद हो ?
वोह तो आजाते मगर, यह दिल ही इस काबिल न था॥

हबीबका तसव्वुर

फैला है हुस्ने-आरिज़े-रोशन[12] नकाबमें।
क्या-क्या तड़प रही है, तजल्ली[13] हिजाबमें[14]॥

---

[1]दिव्य दृष्टाओंसे; [2]हृदय-नेत्रोंसे; [3]ज्ञानी, [4]प्रियतम या प्रियतमा; [5]हृदयके अँधेरे कोनेमें, [6]प्रेम-चिह्न; [7]दिल रूपी मकानकी शोभा, गौरव, [8]ससारकी हवा, [9]आशा-निराशामें; [10]सकोच, लाज; [11]रज, दुःखरूपी अँधेरा; [12]प्रकाशमान कपोलोका सौन्दर्य, [13]जलवा, रोशनी, झलक चमक; [14]लाजमें।

शबे - वसलतमें[1] भी इक हिज्रका[2] अन्दाज़ पैदा है।
इधर मैं हूँ, उधर वोह है, हया हाइल[3] है, पर्दा है॥

दीदये-दोस्त[4] तेरी चश्म-नुमाईकी[5] क़सम।
मै तो समझा था कि दर[6] खुल गया मैख़ानेका[7]॥

वोह उठे अँगड़ाइयाँ लेते हुए।
मै यह समझा हश्र बरपा[8] हो गया॥

हुस्नके हाथ बँधे तो, वोह ज़रा देर सही।
मुझे पै एहसाँ तेरी आई हुई अँगड़ाईका॥

अँगड़ाईमें ही सही, हुस्नके हाथ तनिक-सी देरको बँधे तो! कितनी अछूती और प्यारी कल्पना है!!

मिर्ज़ाकी भाषा

शाइरीका निर्माण भाषा और भावके सम्मिश्रणसे होता है। केवल एक चीज़से निर्माण नही हो सकता है। शाइरके भाव जब कल्पना-क्षेत्रमें उडान भरनेको उद्यत होते है तो भाषा रूपी पख उसकी सहायताको उद्यत होते है। न भावरूपी आत्माके बग़ैर केवल पंख ही उड सकते है, न भाषा रूपी पंखोंके बिना भाव। दोनोका आत्मा और शरीर-जैसा संबंध है। जिस शाइरकी भाषा जितनी अधिक अकृत्रिम, रसीली, प्रवाहयुक्त, सरल, सार्थक, लचकदार होगी और भाव मौलिक, उच्च और हृदयस्पर्शी होंगे, वह उतना ही अधिक सफल होगा। आइए पहले मिर्ज़ाकी भाषाकी बहार देखें, मालूम होता है कोई फूल बखेर रहा है।

बहुत-सी उम्र मिटाकर जिसे बनाया था।
मकाँ वोह जल गया, थोड़ी-सी रोशनीके लिए॥

---

[1]मिलन-रात्रिमें; [2]विरहका; [3]बीचमें अड़ी हुई है; [4]प्रियतमाकी आँख; [5]चमकीकी; [6]द्वार; [7]मदिरालयका; [8]प्रलय आ गई।

वही रात मेरी, वही रात उनकी।
कहीं बढ़ गई है, कहीं घट गई है॥

लूटनेवाले हमारी नींदके।
किस मज़ेसे रातभर सोया किये॥

ग़मे-ज़िन्दगी जा-बजा हो रहा है।
अरे मरनेवालो! यह क्या हो रहा है?

इश्कमें दिल गँवाके हाल यह है।
कुछ मैं खोया हुआ-सा रहता हूँ॥

हिचकियोंसे राज़े-उल्फत खुल गया।
आगई मुँहपर जो दिलमें बात थी॥

कहाँतक जफा हुस्नवालोंकी सहते।
जवानी जो रहती तो फिर हम न रहते॥

हँसके भी रोके भी कहा लेकिन।
मतलबे-दिल कभी अदा न हुआ॥
हसरते-जिब्ह रह गई 'साक़िब'!
यह फरीज़ा मेरा अदा न हुआ॥

यास-ओ-उम्मीदके मावैन हुई ख़त्म हयात।
एकने शाद किया, एकने नाशाद किया॥

गुलशनमें कहीं बूए-दमसाज़ नहीं आती।
अल्लाहरे सन्नाटा! आवाज़ नहीं आती॥
बरगश्ता हुई दुनिया रस्मो-रहे-उल्फतसे।
इक मेरी तबीअत है, जो बाज़ नहीं आती॥

ज़माना बड़े शौकसे सुन रहा था।
हमीं सोगये दास्ताँ कहते-कहते॥

उक्त कलाम पढ़कर ऐसा महसूस होता है कि ऐसे अशआर तो हम भी कह सकते हैं। मगर तवअ् आजमाई करनेपर पता चलता है कि यह कितना बड़ा आर्ट है।

मिर्ज़ाको 'मीर' जैसी जबान अता हुई है, और ग़ालिब-जैसी उच्च भाव-प्रदर्शनकी क्षमता। आपको लोग मीर-ओ-ग़ालिबका जाँनशीन कहते हैं।

लेकिन मिर्ज़ाने नम्रतापूर्वक इस प्रसिद्धिके सबबमें १६३४ मे फर्माया था—"छप्पन साल शाइरीकी खिदमत की, इस तवील मुद्दतमे यह कोशिश रही कि ज़बान 'मीर' की और तख़ैयुल 'ग़ालिब'का-सा हो। मालूम नहीं यह सई मशकूर हुई या ग़ैर मशकूर।···इतनी उम्रमे सिर्फ इतना-सा ख़याल करनेका गुनहगार हूँ कि शायद चन्द शेर उन दोनो बा-कमालोके रंगमें नज्म हो सके हैं। दुनिया इस जुर्मको माफ कर दे तो उसका एहसान है।

जाँ नशीनी मीरो-ग़ालिबकी कहाँ, और मैं कहाँ?
वोह खुदाए-फ़न थे, उनसे मुझको निसबत कुछ नहीं[1]॥

मुहावरोंका प्रयोग

मिर्ज़ाकी ज़बान लखनऊकी टकसाली ज़बान है, और वह 'मीर' के व्यथापूर्ण रसमे डूबी हुई। शब्दोकी सादगी, उपमाओकी झड़ी, मुहावरोकी बन्दिश, भाषाका प्रवाह, और भावोकी बुलन्दी—यह सब मिलकर मिर्ज़ाके कलाममें ऐसे घुल-मिल जाते हैं कि कुछ न पूछिए। उपरोक्त अशआरमें भाषाका सारल्य और लालित्य तो देखा, आगे दो-चार मुहावरोका प्रयोग मुलाहिज़ा हो।

मुँहपर हाथ रखना, मुहावरा है, जो चुप करनेके स्थानपर बोला जाता है। निम्न शेरमें यह मुहावरा देखिए किस सलीकेसे नज्म हुआ है—

---

[1] अर्ज़ेहाल दीवाने-साकिब, पृ० ७।

लहदपर चलनेवाले थम कि हम कुछ कह नहीं सकते।
ज़मीं रखती है मुँहपर हाथ जब फ़रियाद करते हैं॥

किसी वस्तुपर तकिया करना, भरोसा करनेके स्थानपर बोला जाता है—

बाग़बांने आग दी जब आशियानेको मेरे।
जिनपै तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे॥

जामेसे बाहर हो जाना, यानी आपेसे बाहर हो जाना, अपने ऊपर अख़्तियार न रखना, इस मुहावरेने क्या लुत्फ पैदा किया है—

वोह उलटकर जो आस्तीं निकले।
ज़ुल्म जामेसे अपने बाहर था॥

दम लेना, यह मुहावरा ठहरनेकी जगह बोला जाता है—

इश्कके बाद अब हवादिसको[1] ज़रूरत क्या रही।
आस्मां दम ले, मेरे मरनेका सामां हो गया॥

तुलनात्मक कलाम

अब तक मिर्ज़ाकी भाषाके चटख़ारे लिये। अब आइए हम आपको मीर, दर्द, ग़ालिब आदिके साथ मिर्ज़ाके भावोद्यानकी सैर करायें। ताकि आप जान सकें कि शाइरीमें मिर्ज़ाका आसन कितना ऊँचा है। वे किस जाँफिशानीसे उर्दूके अमर कलाकारोंके शाने-ब-शाने चलनेका प्रयत्न करते रहे और किस हदतक सफल हुए। यहाँ कुछ तुलनात्मक अशआर सैयद अकबरअलीद्वारा सकलित दीवाने-साकिबसे साभार दिये जा रहे हैं—

मीर— उसके फ़रोग़े-हुस्नसे झमके है सबमें नूर।
शमए-हरम[2] हो या कि दिया सोमनाथका॥

---

[1]मुसीबतोंको; [2]मस्जिदका दीपक।

साकिब— बताइए, रहेगी शमअ़ किस तरह हिजाबमें ?
यह क्या समझके हुस्नको छुपा दिया नक़ाबमें ॥

ज़ौक़— तुझे हमने बहुत ढूंडा न पाया।
अगर पाया तो खोज अपना न पाया ॥

ग़ालिब— थक-थकके हर मुक़ामपै दो-चार रह गये।
तेरा पता न पायें तो नाचार[1] क्या करें ?

अमीर— उसकी हसरत[2] है, जिसे दिलसे भुला भी न सकूं।
ढूंडने उसको चला हूं, जिसे पा भी न सकूं ॥

साकिब— अपनी क़िस्मतसे बिगड़ जाऊं कि दौरे-चर्ख़से[3]।
मैं तो वोह ढूंढा किया जो जेबे-दुनियामें[4] न था ॥

ग़ालिब— मेरी तअ़मीरमें मुज़मिर है इक सूरत ख़राबीकी।
हयूला बर्क़े-ख़िरमनका है ख़ूने-गर्म दहक़ाँका[5] ॥

साकिब— अपने ही दिलकी आगमें आख़िर पिघल गई।
शमए-हयात[6] मौतके साँचेमें ढल गई ॥

दर्द— हो गया मेहमाँ सराए[7]-कसरते-मौहूम[8] आह !
वोह दिले-ख़ाली[9] जो तेरा ख़ास ख़िलवतख़ाना[10] था ॥

साकिब— जो कुछ हुआ आलममें, होता न तो क्या होता ?
बहतर था बिगड़नेको यह दिल न बना होता ॥

---

[1]बेचारे, असमर्थ; [2]अभिलाषा; [3]आस्मानके चक्रसे; [4]विश्वके पास; [5]मेरे निर्माणमे ही मेरे विनाशके तत्त्व निहित हैं। किसानके घोर परिश्रममें ही बिजलीके वे तत्त्व समाये हुए है, जो उसके अनाजके ढेरको जला देते हैं। तात्पर्य यह है कि हमारी समृद्धि और सुखके सामानोंमें हमारे विनाशके तत्त्व छिपे हुए हैं; [6]जीवन-दीप; [7]अतिथि गृह; [8]वहमकी अधिकतासे; [9]रिक्त हृदय; [10]एकान्तवास। (जिस मन-मंदिरमें केवल एक ईश्वरका रूप सामाया था वहाँ अब करोड़ो देवता बास करते हैं)।

दर्द— वाये नादानी कि वक़्ते-मर्ग यह साबित हुआ।
ख्वाब था जो कुछ कि देखा, जो सुना अफसाना था॥

साकिब— अफसोस है कि उम्रे-फ़ानीने[1] ख़त्म होकर।
मुझको वही बताया जिसको मैं जानता था॥

कायम— किस्मत तो देखिए कि कहाँ टूटी है कमन्द।
कुछ दूर अपने हाथसे जब बाम[2] रह गया॥

साकिब— मेरी क़ैदका दिलशिकन[3] माजरा था।
बहार आई थी आशियाँ बन चुका था॥

सौदा— ऐ हमसफीर[4]! फ़ायदा नाहक़के शोरका?
हम तो कफसमें आनके खामोश हो गये॥
साक़िब— कफसमें चुप न रहूँ तो मैं क्या करूँ कि यह क़ैद।
न दोस्तीके लिए है न दुश्मनीके लिए॥

दर्द— जगमें कोई न टुक हँसा होगा।
कि न हँसते ही रो दिया होगा॥
साकिब— शादीमें भी कुछ ग़मके पहलू निकल आते हैं।
बे-साख्ता हँसनेमें आँसू निकल आते हैं॥

दर्द— गो नाला ना-रसा[5] हो, न हो आहमें असर।
मैंने तो दर गुज़र न की जो मुझसे हो सका॥
साकिब— शुक्रगुज़ार दर्द हो, दिलकी ख़बर पहुँच गई।
तू जो नहीं, नहीं सही, नाला तो बारयाब[6] है॥

---

[1]मिटनेवाली जिन्दगी, नश्वर शरीरने; [2]प्रेयसीकी छतकी मुंडेर; [3]हृदयको व्यथित करनेवाला; [4]यक्साँ बोली बोलनेवाले, साथी; [5]प्रेयसीतक न पहुँचनेवाला; [6]प्रेयसीतक पहुँचनेमें सफल।

दर्द— आती है दिलमें और ही सूरत नज़र मुझे।
शायद यह आइना भी किसीके हुज़ूर है॥

साकिब— हटे यह आइना महफ़िलसे और तू आए।
कोई तो हो जो मेरे दिलके रूबरू आए॥

मीर— जो इस शोरसे 'मीर' रोता रहेगा।
तो काहेको हमसाया[1] सोता रहेगा॥

साकिब— हिज्रकी शब नालए‌दिल[2] वोह सदा देने लगे।
सुनने वाले रात कटनेकी दुआ देने लगे॥

दर्द— हस्तीने तो टुक जगा दिया था।
फिर खुलते ही आँख सो गये हम॥

साकिब— उम्र भर ग़फ़लत रही हस्तीए-बे-बुनियादसे[3]।
उठ गये इक नींद लेकर आलमे-ईजादसे[4]॥

दर्द— वाइज़! किसे डराये है, यौमुल-हिसाबसे[5]।
गिरया[6] मेरा तो नामए-अअ्माल[7] धो गया॥

साकिब— इस तरह पाक किया अश्केनदामतने[8] मुझे।
इससे पहले कभी जैसे मैं गुनहगार न था॥

दर्द— बला है नशए-दुनिया[9], कि ता-क़यामत[10] आह।
सब अहले-क़ब्र[11] उसीका ख़ुमार[12] रखते हैं॥

साकिब— क्या चीज़ है हयात[13] कि मरनेके बाद भी।
जो चुप हुआ वोह गोश-बर[14] आवाज़े-सूर[15] था॥

---

[1]पड़ोसी; [2]दिलकी आहें, हृदयकी चीत्कार; [3]निःसार जीवनसे; [4]संसारसे; [5]कर्मोंका लेखा लेनेके लिए नियत किया हुआ दिन; [6]रुदन; [7]कर्म-लेख; [8]पश्चात्तापके आँसुओंने; [9]संसार आसक्तिका नशा; [10]प्रलयतक; [11]क़ब्रमें पड़े हुए मृतक; [12]नशा, ख़याल; [13]ज़िन्दगी; [14]कर्णमय, सुननेको उत्सुक; [15]नरसिंहा बाजेकी आवाज़पर।

दर्द— जिन्होंके दिलमें जगह की है नक़्शे-इबरतने[1]।
सदा नज़रमें वोह लौहे-मज़ार[2] रखते हैं॥

साकिब— नज़दीक समझ, हश्र हो या पैके-अजल हो।
मिलना जिसे मंज़ूर है वोह दूर नहीं है॥
इबरते-दहर[3] हो गया जबसे छुपा मज़ारमें।
ख़ैर जगह तो मिल गई दीदए-एतबारमें[4]॥

दर्द— कीजिए क्या, आह किधर जाइए।
छूटिए इस दुःखसे जो मर जाइए॥

ज़ौक़— अब तो घबराके यह कहते हैं कि मर जायेंगे।
मरके भी चैन न पाया तो किधर जायेंगे॥

साकिब— एक दम था जो किसी सूरत निकलता ही न था।
इश्क़के हाथोंसे यह मुश्किल भी आसाँ हो गई॥

दर्द— गर मअ्रिफतका[5] चश्मेबसीरतमें[6] नूर है।
तो जिस तरफको देखिए उसका ज़हूर[7] है॥

साक़िब— छुपाओ आपको जिस रंग या जिस भेसमें चाहो।
मगर चश्मे-हक़ीक़तबींसे[8] पर्दा हो नहीं सकता॥

दर्द— बस है यही मज़ारपै मेरे कि गाह-गाह।
जाए-चिराग़[9] कोई दिले-मेहरबाँ[10] जले॥

साकिब— बहुत-से याद हैं महफिलके बैठनेवाले।
कभी तो भूलके कोई सरे-मज़ार आये॥

---

[1]नसीहत या ख़ौफने; [2]मृत्युका ध्यान (क़ब्रके सिरहाने गडा हुआ पत्थर, जिसपर मृतकके नामके अतिरिक्त कुछ शिक्षाप्रद शब्द भी अंकित रहते हैं); [3]जिनसे दुनिया सबक हासिल कर सके; [4]विश्वासभरी आँखोंमें; [5]ईश्वरीय, [6]दिव्य दृष्टिमें; [7]प्रकाश, अस्तित्व; [8]दिव्य दृष्टिसे, [9]दीपकके बजाय; [10]हितैषी-हृदय।

दर्द— हमने तो एक मआसियत[1] चाही छुपे न छुप सकी।
अपने गुनाहको तेरा अफ़ूही[2] पर्दापोश है॥

साकिब— पर्दा-पोशीपै तेरे नाज़ हैं ऐ ज़र्रा-नवाज़!
हश्रमें ढाँप लिया मुँह मेरा रुसवाईने॥

दर्द— मआलकार सुझाया कबूरने[3] हमको।
यह नक़्द माल लगा हाथ इस दफ़ीनेसे[4]॥

साकिब— रोशनी डालके दुनियाका दिखाता था मआल[5]।
यह चिरागे-सरे-तुरबत मेरा बेकार न था॥

दर्द— मुझे यह डर है दिले-ज़िन्दा तू न मर जाये।
कि ज़िन्दगानी इबारत[6] है तेरे जीनेसे॥

साकिब— दिले-मुर्दा कभी जीनेका तलबगार[7] न था।
होशियारीको समझता था पै हुशियार न था॥
ज़िंदगी अच्छी सही, लेकिन इसे समझे तो कौन?
दिल नहीं तो आलमे-ईजादमें[8] क्या रह गया?

मीर— मरता था मैं तो बाज़ रखा मरनेसे मुझे।
यह कहके—"कोई ऐसा करे है, अरे! अरे!!"

ग़ालिब— मैंने चाहा था कि अन्दोहे-वफ़ासे[9] छूटूं।
वोह सितमगर मेरे मरनेपै भी राज़ी न हुआ॥

साकिब— दर्दसे इक आह भी करने नहीं देते मुझे।
मौत है आसाँ मगर मरने नहीं देते मुझे॥

---

[1]पाप-गुनाहगारी, भूल; [2]दरगुज़र, क्षमाशीलता; [3]क़ब्रोने; [4]खज़ानेसे; [5]परिणाम; [6]दिल शब्द है और जीवन वाक्य है, यदि शब्द नही तो फिर वाक्यका अस्तित्व नहीं; [7]इच्छुक; [8]ससारमें; [9]सुशीलताके ग़मसे।

ग़ालिब— कोई वीरानी-सी वीरानी है।
दश्तको[1] देखके घर याद आया॥

साकिब— वीराना जहाँ देख लिया राहे-सफ़रमें।
बढ़ता हूँ उसी सिम्तको[2] शायद मेरा घर हो॥

ग़ालिब— नाले अ़दममें चन्द हमारे सुपुर्द थे।
जो वाँ न खिंच सके सो वोह् याँ आके दम हुए॥

साकिब— वोह रूहबख़्शे-जाँ[3] थे, जाँकाह[4] बनके निकले।
कुछ दम[5] थे पास मेरे जो आह बनके निकले॥

ग़ालिब— क़ैदे-हयात, बन्दे-ग़म, अस्लमें दोनों एक हैं।
मौतसे पहले आदमी ग़मसे निजात पाए क्यों?

साकिब— उक़्दाहाये गमसे वाबस्ता है अपनी ज़िन्दगी।
हम कहाँ? यह मुश्किलें जिस वक़्त आसाँ हो गईं॥

ग़ालिब— हमने माना कि तग़ाफ़ुल न करोगे लेकिन—
ख़ाक हो जायेंगे हम तुमको ख़बर होनेतक॥

साकिब— सद्द हादिसए-दहरकी[6] टूटी न अजलसे[7]।
जाती नहीं उनतक मेरे मरनेकी ख़बर भी॥

मीर— दुनियाकी क़द्र क्या जो तलबगार हो कोई।
कुछ चीज़ माल हो तो ख़रीदार हो कोई॥

साक़िब— उरूसे-दहरको[8] दिल देके आज़माऊँ क्या?
सँवारनेमें जो बिगड़े उसे बनाऊँ क्या?

मीर— अबकी जुनूँमें फ़ासिला शायद न कुछ रहे।
दामनके चाक और गरेबाँके चाकमें॥

साकिब— रास्ता वहशतको आख़िर मिल गया तंगीमें भी।
यह गरेबाँ था कि दो हाथोंमें दामाँ हो गया॥

---

[1]जंगलको; [2]तरफ़को; [3]जान या आत्माको प्रफुल्ल करनेवाले; [4]जान लेवा; [5]स्वाँस; [6]संसारके कष्टोंकी दीवार; [7]मृत्युसे; [8]संसाररूपी दुलहिनको।

मीर— दीदनी[1] है शिकस्तगी[2] दिलकी।
क्या इमारत ग़मोंने ढाई है॥

साकिब— हम जभी समझे थे अंजाम कि जब फ़ितरतने।
ख़ाक और ख़ूनसे तैयार किया ख़ूने-दिल॥

मीर— हम कहते थे यूँ कहते, यूँ कहते जो वोह आता।
यह कहनेकी बातें थीं, कुछ भी न कहा जाता॥

साकिब— बयाने-हालका[3] नैरंगे-इश्क दुश्मन है।
इधर वोह सामने आये, उधर गिला[4] न रहा॥
उनकी बज़्मे-नाज़में तो सांस भी दिलने न ली।
नालाकश बरसोंका इक तसवीर बनके रह गया॥

मीर— 'मीर' साहबसे ख़ुदा जाने हुई क्या तकसीर[5]।
जिससे इस ज़ुल्मे-नुमायाँके[6] सज़ावार हुए॥

ग़ालिब— हद चाहिए सज़ामें उक़ूबतके[7] वास्ते।
आख़िर गुनाहगार हूँ, काफ़िर[8] नहीं हूँ मैं॥

साकिब— था न था उनके सिवा दहरमें[9] ज़ालिम कोई।
था सिवा मेरे कोई और गुनहगार न था॥

मीर— तेरा है वहम कि मैं अपने पैरहनमें[10] हूँ।
निगाह ग़ौरसे कर मुझमें कुछ रहा भी है?

साकिब— यह ज़ौकका आलम[11] है कि तकदीरका लिक्खा।
बिस्तरपै हूँ मैं या कोई तसवीर पड़ी है॥

---

[1]देखने योग्य; [2]दिलकी ख़स्ताहाली, [3]अपनी स्थिति बयान करनेका; [4]शिकायत; [5]अपराध; [6]ज़ाहिरासितमके; [7]सख़्तीके लिए, दु:खके लिए; [8]नास्तिक; [9]संसारमें; [10]लिबासमें; [11]रुचिकी परिस्थित।

मीर— आगे किसूके क्या करें दस्ते-तमअ़[1] दराज़[2]।
यह हाथ सो गया है सिरहाने धरे-धरे॥

साकिब— अपना-सा ज़ोर करके थके मुन्‌अ़िमाने-दहर[3]।
मुट्ठी न खुल सकी मेरे दस्ते-सवालकी॥

मीर— हाले-बद[4] गुफ़्तनी[5] नहीं अपना।
तुमने पूछा तो मेहर्बानी की॥

साकिब— किस मुँहसे ज़बाँ करती इज़हारे-परेशानी[6]।
जब तुमने मेरी हालत सूरतसे न पहचानी॥

मीर— पोशीदा[7] राज़ेइश्क़[8] चला जाये था सो आज।
नाताक़तीने[9] दिलका वोह, पर्दा उठा दिया॥

साकिब— गिरने लगी है क़ीमते-दिल आँसुओंके साथ।
किसने उलट दिया वरक़े-एअ़तबारको[10]?

मीर— आह हर ग़ैरसे ताचन्द[11] कहूँ दिलकी बात।
इश्कका राज़[12] तो कहते नहीं महरमसे[13] भी॥

साकिब— दिलने रग-रगसे छुपा रक्खा है तेरा राज़े-इश्क़।
जिसको कहदे नब्ज़ ऐसी मेरी बीमारी नहीं॥

मीर— दिलके तईं आतिशे-हिजराँसे[14] बचाया न गया।
घर जला सामने और हमसे बुझाया न गया॥

साकिब— मुख़्तार है बन्दा कोई मजबूर नहीं है।
फिर क्या है जो दिलपर मेरा मक़दूर[15] नहीं है॥
हवास,[16] सोज़े-ग़मे[17] दिलकी ताब ला न सके।
वोह आग घरमें लगी थी कि हम बुझा न सके॥

---

[1]अभिलाषापूर्ण हाथ, [2]लम्बा, पसारना, [3]संसारके धनिक, [4]बुराहाल; [5]कहने योग्य; [6]परेशानियोंका वर्णन; [7]गुप्त, छिपा हुआ; [8]प्रेमका भेद; [9]निर्बलता, कमज़ोरीने, [10]विश्वासरूपी पृष्ठको; [11]कितनी भी; [12]भेद; [13]अन्तरंग साथीसे, [14]विरहाग्निसे; [15]क़ाबू; [16]औसान; [17]दुखरूपी अग्निकी।

दर्द— तुझमें कुछ देखा न हमने जुज़जफा[1]।
पर्दा क्या कुछ था कि जीको भा गया॥

साक़िब— जफा उठानेको आदत पड़ी तो क्योंकर जाय?
सितम सहे, मगर इतने कहाँ कि जी भर जाय॥

दर्द— मेरी-सी नालातराशी न कर सका फ़रहाद।
अगर्चे उसने भी इक उम्र तेशारानी[2] की॥

साकिब— दिले-ग़मनाक ऐसा है कि दर्द ईजाद[3] करता है।
ज़माना रो रहा है यूँ कोई फ़रियाद करता है॥

गालिब— है आदमी बजाये खुद इक महशरे-ख़याल।
हम अंजुमन समझते हैं ख़िलवत ही क्यों न हो॥

साकिब— आओ तो हम दिखायें तुम्हें इक नया जहाँ।
आबाद है ख़यालमें दुनिया विसालकी॥

दर्द— उठती नहीं है ख़ानए-ज़ंजीरसे[4] सदा[5]।
देखो तो क्या सभी यह गिरफ़्तार सो गये॥

साकिब— काबिले-जुम्बिश था जबतक रो चुकीं कड़ियाँ मुझे।
आज सन्नाटा पड़ा है ख़ानए-ज़ंजीरमें॥

दर्द— हम इतनी उम्रमें दुनियासे हो गये बेज़ार।
अजब है ख़िज्रने क्योंकरके जिन्दगानी की?

साकिब— यहाँ दम भरका जीना भी है दूभर।
कोई ख़ुश होगा उम्रे-जाविदाँसे[6]॥

गालिब— दहरमें[7] नक़्शे-वफा[8] वजहे-तसल्ली न हुआ।
है यह वोह लफ़्ज़ कि शरमिन्दए-मअ़नी न हुआ॥

साकिब— उभरा हुआ न देखा नक़्शे-वफ़ा किसीका।
ख़ुद दिल मिला न कोई इस लफ़्ज़े-बे-निशाँसे॥

---

[1]सितमके सिवा; [2]कुदालसे पहाड तोडकर नहर निकाली; [3]आविष्कार; [4]ज़ंजीरकी कडियोसे, [5]आवाज़; [6]अमर जीवनसे; [7]संसारमे; [8]निभानेका चिह्न।

दर्द— 'दर्द' अपने हालसे तुझे आगाह क्या करे?
जो साँस भी न ले सके वोह आह क्या करे?
साक़िब— ख़मोशीपर मेरे क्यों बदगुमानी है मेरे दिलसे?
वोह क्या नाले करे जो साँस भी लेता हो मुश्किलसे॥

दर्द— कोई भी शख़्स उसका मारा हुआ न पनपा।
दिल मत कहीं लगाना उलफ़त बुरी बला है॥
साक़िब— तड़पना किसका देखोगे, जो ज़िन्दा हूँ तो सब कुछ हो।
बलाए-इश्कका मारा कभी बिस्मिल नहीं होता॥

दर्द— दिल भी तेरा ही ढंग सीखा है।
आनमें कुछ है, आनमें कुछ है॥
साक़िब— हरदम है अब नई ख़लिशे-ग़म[1] कि दिल मेरा।
सूरतनुमा - ए - जलवए - जानाना[2] हो गया॥

ग़ालिब— हैफ़ उस चार गिरह कपड़ेकी क़िस्मत 'ग़ालिब'!
जिसकी क़िस्मतमें हो आशिकका गरेबाँ होना॥
साक़िब— हाथोंकी ख़ता हो कि मुक़द्दरकी जफ़ा हो।
जो चाक न होता वो गरेबाँ नहीं देखा॥

शहनशाहहुसेन रज़वीद्वारा संकलित कुछ तुलनात्मक अशआर—

दर्द— पड़ी है ख़ाकपर यह लाश उस रश्के-शहीदाँकी[3]।
लहूके आँसुओं रोया है जिसको देखकर ख़ूनी॥
साक़िब— हमारी दास्ताने-ग़म रुलाती है ज़मानेको।
वोह हम हैं जो ज़बाने-ग़ैरसे फ़रियाद करते हैं॥

---

[1]दुःखकी फाँस; [2]प्रेयसीकी छटा दिखानेवाला; [3]शहीदोंकी ईर्ष्या योग्य।

दर्द— अश्कने मेरे मिलाये कितने ही दरियाके पाट।
दामने-सहरामें[1] वर्ना इस कदर कव घेर था?

साकिव— वोह काँटे जिनको चुन लाया हूँ मैं वादीए-वहशतसे[2]।
निकालूंगा अगर वुसअ़त[3] हुई सहराके दामनमें॥

दर्द— वाद मरनेके भी वोह वात नहीं आती नज़र।
जिस तवक़्क़ोअ़पै[4] कि हम अब तईं[5] याँ जीते हैं॥

साकिव— परदए-हश्र उठा फिर भी तमन्ना है वईद[6]।
काम मुश्किल था जो मरनेपै भी आसाँ न हुआ॥

दर्द— कवतक आँसू कोई पिये जाये?
इस मुहव्वतने जी वहुत खाया॥

साकिव— जव ख़ूनमें है जोश तो पी जाइये क्योंकर?
ज़ख़्मोका लहू वाद-ए-अंगूर[7] नहीं है॥

दर्द— आगे जो वला आई थी सो दिलपै टली थी।
अवकी तो मेरी जान ही पै आन वनी है॥

साकिव— या इलाही कौन-सी विजली गिरी थी वागमें।
जो नशेमनसे सरककर मेरे दिलपर आगई॥
शवे-फ़िराक,[8] मैं दिल फूँककर सहर[9] की थी।
शवे-मज़ार[10] तो वह भी नहीं, जलाऊँ क्या?

दर्द— वाद मरनेके मेरे होगी मेरे रोनेकी क़द्र।
तव कहा कीजिएगा लोगोंसे—"वोह वरसातें कहाँ?"

साकिव— मिट चुके यह दिल तो फिर पूछें मिज़ाजे-हुस्ने-दोस्त।
सैद ही[11] नावूद[12] हो तो किस लिए सैयाद हो॥

---

[1]जंगलके विस्तारमें, [2]उन्मादकी घाटीसे या उन्मादावस्थामें; [3]विस्तीर्णता; [4]आशापर; [5]अवतक, [6]दूर, [7]अंगूरी शराव, [8]विरह-रात्रिमें; [9]सुवह; [10]कब्रके अँधेरेमें; [11]जिसका शिकार किया जाय; [12]अस्तित्वहीन

गालिब— बेदरो-दीवार-सा इक घर बनाना चाहिए।
कोई हमसाया[1] न हो और पासवाँ[2] कोई न हो॥

साकिब— वीराना ही अच्छा है कि वीराँ तो न होगा।
घर हो तो न दीवार हो उस घरमें, न दर हो॥

मीर— बार-हा[3] वादोकी रातें आइयाँ।
तालओने[4] सुबह कर दिखलाइयाँ॥

मुसहफी— शाहिद[5] रहियो तू ऐ शबे-हिज्र[6]!
झपकी नहीं आँख 'मुसहफी'की॥

साकिब— उम्रभर जलता रहा दिल, और खामोशीके साथ।
शमअको इक रातकी सोजे-दिलीपर[7] नाज़[8] था॥
सहरको[9] भी मेरी महफिलमें बरहमी[10] न हुई।
तमाम रात हुई, दर्दमें कमी न हुई॥

मूनिस— शब[11] जो जिंदाँमें[12] हुई ताज़ा गिरफ़्तारोंको।
सर वोह टकराये कि दर[13] कर दिया दीवारोंको॥

साकिब— शबको जिन्दाँमें मेरा सर फोड़ना अच्छा हुआ।
आज कुछ-कुछ रोशनी आने लगी दीवारसे॥

नफीस— अपने ही अअ्ज़ाने[14] की आखिरको हमसे दुश्मनी।
दोस्तोंकी दोस्तीका हाल हमपर खुल गया॥

साकिब— बाग़बाँने आग दी जब आशियानेको मेरे।
जिनपै तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे॥

ग़ालिब— समझके करते हैं बाज़ारमें वोह पुरसिशेहाल[15]।
कि यह कहे कि सरे-रहगुज़र[16] है क्या कहिए॥

साकिब— कब उसने की है पुरसिशेग़महाय-जाँगुसल।
जब हाले-दिल बयानके काबिल नहीं रहा॥

---

[1]पड़ोसी; [2]रक्षक चौकीदार; [3]बार-बार; [4]भाग्यने; [5]साक्षी, [6]विरहरात्रि; [7]दिलजलानेपर, जलनपर; [8]घमण्ड; [9]सुबहको; [10]नाराज़ी, [11]रात्रि, [12]बन्दीगृहमें; [13]दर्वाज़ा, [14]इन्द्रियोंने; [15]हाल पूछते हैं; [16]रास्ता है।

दर्द— वहदतने[1] हर तरफ़ तेरे जलवे दिखा दिये।
पर्दे तअ़य्युनातके[2] जो थे उठा दिये॥

साकिब— शबेग़मकी तनहाइयोंको न पूछो।
जिधर देखता था ख़ुदा ही ख़ुदा था॥
इज़ाफा[3] कुछ न हो अपने यक़ींमें।
अगर उठ जाये पर्दा दरमियाँ से॥

दर्द— पूछ मत काफ़िलए-इश्क[4] किधर जाता है।
राहरव[5] आपसे उस रहमें गुज़र जाता है॥

साकिब— ऐ किर्दिगारे[6]-इश्क! किधर जा रहा हूँ मैं।
हर सिम्त यह सदा है कि "दीवाना हो गया"॥

दर्द— हर आह[7] शररबार[8] है जूं सर्द चिराग़ाँ।
क्या आग इलाही मेरे सीनेमें भरी है॥

साकिब— सीनए-सोज़ाँमें 'साक़िब' घुट रहा है वोह धुआँ।
उफ़ करूँ तो आग दुनियाकी हवा देने लगे॥

१९३४ मे प्रकाशित दीवाने 'साकिब' ४२४ पृष्ठका हमारे समक्ष है। आगे हम मिर्ज़ाके सभी रगके चुने हुए अशआर दे रहे हैं—

एक उनपर क्या ज़मानेपर है मेरा दारे-ख़ूँ[9]।
ज़िबह[10] मैं होता गया आ़लम तमाशाई रहा॥
फूलको तोड़के देखो, असरे-वस्लो-फिराक़[11]।
मौत है चाहनेवालोंसे जुदा हो जाना॥
अहले-बातिल[12] डालते है तफ्रक़-ए-चश्मे-हक़[13]।
वरना काबेमें वोह क्या था, जो कलीसामें न था?

---

[1]एक-ईश्वरवादने; [2]सीमाओंके बन्धन; [3]वृद्धि, बढौतरी; [4]प्रेमियोका दल; [5]यात्री; [6]प्रेमरूपी ईश्वर; [7]साँस; [8]चिनगारियाँ बरसानेवाली; [9]क़त्ल करनेका अभियोग; [10]कत्ल; [11]मिलन और विरहका प्रभाव; [12]मायावी; [13]वास्तविकतामें भेद।

हुस्न और इश्कके नैरंग खुदा ही जाने।
शमअ् जलती है कि दिल जलता है परवानेका॥

जमानेवालोंको पहचानने दिया न कभी।
बदल-बदलके लिबास अपने इनकलाब आया॥
सिवाय यास[1] न कुछ गुम्बदे-फलकसे[2] मिला।
सदा[3] भी दी तो पलटकर वही जवाब आया॥

मैं नहीं, लेकिन मेरा अफसाना उनके दिलमें है।
जानता हूँ मैं कि किस रगमें यह नश्तर रह गया॥
आशियानेके तनज्जुलसे[4] बहुत खुश हूँ कि वोह।
इस कदर उतरा कि फूलोंके बराबर रह गया॥

जीते जी साय-ए-दीवारे-चमन[5] तक न गया।
मरके क्या फूलका शरमिन्दए-एहसाँ होता॥

कुछ सम्भल जाता, अगर करवट बदल जाता मेरी।
यह मुझे दुश्वार था, उसके लिए मुश्किल न था॥

जो अच्छा कर नहीं सकते,तो क्यों तड़पूँ मैं बिस्तरपर।
दुआ देना नहीं आता तो सीखो बद्दुआ देना॥

इज्जतसे बज्मे-गुलमें रहा आशियाँ मेरा।
तिनकोंकी क्या बिसात मगर नाम हो गया॥
इक मेरा आशियाँ है कि जलकर है बेनिशाँ।
इक तूर है कि जबसे जला नाम हो गया॥

मेरे पहलूसे अगर निकला तो मेरा क्या गया?
गुम शुदा दिल आप ही का एक मखफीराज[6] था॥

---

[1]निराशा; [2]आकाशसे; [3]अवाज़; [4]पतनसे; [5]उपवनकी दीवारकी छाया; [6]छुपा हुआ भेद।

होश ही मुझको न था जब पहलुओंमें लूट थी।
मुझको क्या मालूम, क्या जाता रहा, क्या रह गया ?

सुबह समझे थे किसे ? 'साक़िब' शबेग़म है तवील[1]।
दिलका कोई दाग़ होगा, जो चमककर रह गया।।

शहीदे-ग़मकी लाशपर न सर झुकाके रोइए।
वोह आँसुओंको क्या करे, जो मुँह लहूसे धो चुका।।

कोई तो दाद देता इस दर्दे-दिलकी आख़िर।
जब तुम न बोलते थे, तब मैं कराहता था।।

क़ैद करता मुझको लेकिन जब गुज़र जाती बहार।
क्या बिगड़ जाता ज़रा-सी देरमें सैयादका।।

चोट देकर आज़माते हो दिले-आशिकका सब्र।
काम शीशेसे नहीं लेता कोई फ़ौलादका।।

आये हो वक़्ते-दफ़्न तो शाना[2] हिलाके जाओ।
आँख उसकी लग गई है, जिसे इन्तज़ार था।।

मैयत[3] तो उठ गई वोह न आये नहीं सही।
'साक़िब' किसीके दिलपै, कोई इख़्तियार था ?

खोया इस इख़्तलाफ़ने[4] लुत्फ़े-विसाल[5] भी।
उनमें न इन्किसार[6] न मुझमें ग़ुरूर[7] था।।

बताइए मुझे कामयाब इश्क़ है कि जमाल[8]।
चमनमें फूल मिले मेरा एक पर न मिला।।

---

[1]बहुत लम्बी; [2]कन्धा; [3]अर्थी; [4]मतभेदने; [5]मिलन-आनन्द; [6]विनय; [7]घमण्ड; [8]रूप।

मेरी ज़बान उनके दहनमें[1] हो ऐ करीम[2]!
होता है फ़ैसला जो उन्हींके बयानपर॥
'साक़िब'! जहांमें इश्ककी राहें हैं बेशुमार।
हैरान अक़्ल है कि चलूं किस निशानपर?

महशरमें कोई फूलनेवाला तो मिल गया।
रहमत बढ़ी है मुझको गुनहगार देखकर॥
उन दोस्तोंमें वोह न हो या रब! जो वक़्ते-दीद[3]।
बीमार हो गये रुख़े-बीमार[4] देखकर॥

ज़रा देख परवाने करवट बदलकर।
सती हो गई शमअ़ महफ़िलमें जलकर॥

क़द्रदां पाके बदल जाते हैं आवारा-वतन।
जब तो निकले हुए मोतीको अ़दन याद नहीं॥

असीर[5] म तो हो चुका, ख़बर लो अपने पांवकी।
कमरसे आगे बढ़ चली है, ज़ुल्फ़ पेचोताबमें॥

नाम मालूम हैं क़ातिलका मगर हश्रके दिन।
जाननेवालोंसे कहता हूं मुझे याद नहीं॥

अब और इसके सिवा, क्या असर हो नालोंका।
कि फ़र्क़ आ गया, ज़ालिमके ख़्वाबे-राहतमें[6]॥

अ़दू,[7] सैयादो-गुलचीं क्यों हुए मेरे नशेमनके?
यह तिनके भी हैं इस क़ाबिल? जिन्हें बरबाद करते हैं॥

---

[1]मुंहमें; [2]ईश्वर; [3]देखनेके समय; [4]बीमारका चेहरा; [5]बन्दी; [6]सुखकी नींदमें; [7]शत्रु।

चमनवालो ! यह तिनके आशियांके चुभ नहीं सकते।
निशानी कुछ तो वहरे-खानुमाँ-वरबाद[1] रहने दो॥

सैकड़ों नाले करूँ लेकिन नतीजा भी तो हो।
याद दिलवाऊँ किसे जब कोई भूला भी तो हो॥
उनपै दावा क़त्लका महशरमें आसाँ है मगर।
वावफ़ाका ख़ून है, ख़ंजरपै ज़ाहिर भी तो हो॥

रोनेसे हया शमअ़की ज़ाहिर हो तो क्योंकर ?
उ़रियाँ[2] है मग़र वीचमें महफ़िलके खड़ी है॥*

दौरे-फ़लक था जिसके वुझानेकी फ़िक्रमें।
वोह शमअ़ रात सुवहसे पहले ही जल गई॥

काटना पत्थरका भी अच्छा नहीं क्या ज़िक्रे-दिल ?
धार उलटी हो गई थी तेशए-फ़रहादकी॥

वातें अहले-फ़क्रसे[3] क्यों हो कि है खौफे-सवाल।
मुनअ़मो[4] ! यह होशियारी नशए-दौलतमें[5] भी है ! !

जलवए-हुस्न[6] इक इशारेमें वहुत कुछ कह गया।
मैं नहीं समझा मगर हाँ दिल तड़पकर रह गया॥

---

*घूरते हैं सैकड़ों परवाने उ़रियाँ देखकर।
मारे ग़ैरतके गड़ी जाती है महफिलमें शमअ़॥ —अज्ञात

[1]घरवार लुटनेकी; [2]नग्न, [3]भिक्षुकोंसे; [4]धनिको; [5]दौलतका नशा होने पर भी इतनी होशियारी कि गरीवोंसे इस भयसे वात नही करते कि कुछ सवाल न कर वैठें, [6]रूपका चमत्कार।

हादिसोंके[1] जलजलेसे[2] जामेदिल[3] छलका किया।
एक चुल्लू ख़ून ही क्या ? वहते-बहते बह गया॥*

मुझको यकीने-वादए-फरदा[4] जरूर था।
मुश्किल यह आ पडी थी कि दिल नासबूर[5] था॥

मेरी दास्तानेगमको, वोह ग़लत समझ रहे हैं।
कुछ उन्हींकी बात बनती अगर एतबार होता॥
दिले पारा-पारा तुझको कोई यूँ तो दफ़्न करता।
वोह जिधर निगाह करते उधर इक मज़ार होता॥

खुश है सैयाद नशेमन मेरा जल जानेसे।
मुझको बतलाये वोह आबाद जो वीराँ न हुआ॥

शरीके कैद थे जज़बाते-दिल,[6] मगर बेकार।
कफस था ऐसा कि नालोंको रास्ता न मिला॥

दिलसे मैं कह रहा हूँ—"तुझपर हुआ फिदा[7] मैं"
दिल मुझसे कह रहा है—"ओ बेख़बर ! जला मैं"
फिर और किस तरहसे उजड़े मकाँको सजता।
कसरे-लहदमें[8] जाकर तसवीर हो गया हूँ॥
कूवते-ग़म देख, ज़ोरे-नातवानीपर[9] न जा।
जलज़ले[10] आलममें थे, जब दिल मेरा बेताब था॥

---

*दिलकी बिसात क्या थी निगाहे-जमालमें।
यह आईना था टूट गया देख-भालमें॥
—सीमाब अकबराबादी

[1]दुर्घटनाओंके; [2]कम्पनसे, [3]हृदय-पात्र; [4]आगामी वादेका यकीन; [5]बेसब्र, [6]हृदय-भाव; [7]आसक्त, अनुरक्त; [8]कब्ररूपी महलमें; [9]निर्बलताकी अधिकतापर, [10]भूकम्प।

यह एक वादिये-पुरख़ारे-इश्क़[1] थी 'साकिब'!
उलझके रह गई हर दिलमें गुफ़्तगू मेरी॥

जो आँख हो तो देखिए, न पूछिए कि क्या किया।
चिरागे-बज़्म[2] हो गया, जला किया, हँसा किया॥

उसकी रहमतपै[3] गिरे पड़ते हैं इसियाँवाले[4]।
हश्र काहेको है इक जलस-ए-रिन्दाना[5] है॥

रोज़े-महशरके उजालेमें खिला मेरा लहू।
तुम तो तुम, धब्बा है दामाने-शबे-फ़ुरक़तपै भी॥

खुद उनका हुस्न मेरी दादख़्वाही[6] उनसे करता है।
वोह आइना लिये हैं और मुझको याद करते हैं॥

सदायें[7] देके हमने एक दुनिया आज़मा देखी।
यही सुनते चले आये—"बढ़ो आगे, यहाँ क्या है"॥

किसको शौक़े-दीदे[8]-बेताबी[9] नहीं?
दिल न ठहरा इक तमाशा हो गया॥

यह है बहते हुए दरियाकी आवाज़।
"वहीं जाना है आये थे जहाँसे"॥

मैं रो रहा हूँ जो दिलको तो बेकसीके लिए।
वगर्ना मौत तो दुनियामें है सभीके लिए॥

---

[1]प्रेमकी कण्टकाकीर्ण घाटी; [2]महफिलका दीपक; [3]दयापर; [4]अपराधी; [5]मद्यपोंका मेला; [6]हुस्न अपने सौंदर्यकी प्रशंसा आशिकसे सुननेका अभिलाषी है; [7]आवाज़ें; [8]देखनेकी लालसा; [9]उत्सुकता।

चिरागे-अक़्ल भी गुल है शबेग़मकी सियाहीसे।
न मैं मालूम होता हूं, न तू मालूम होता है॥

इक नया दिल जुल्म सहनेको बनाना चाहिए।
हो तो सकता है मगर उसको जमाना चाहिए॥

हँसनेवाला रो रहा है, आफ़रीं[1] ऐ वक़्ते-नज़अ़[2]!
कुछ कहा शायद मेरी डूबी हुई आवाज़ने॥

गुलशनकी तरफ मुंह किये बैठा हूं क़फसमें।
शायद कोई दमसाज़[3] निकल आये इधर भी॥

इबरतसे[4] देख पंजएक़ातिल[5] रँगा हुआ।
रहगीरोंसे न पूछ कि दिल मेरा क्या हुआ॥

नहीं मालूम पाये-सईमें[6] कांटे कहांसे हैं?
मुरादें[7] हटके चलती हैं निकलता हूं जिधर होकर॥

क्या देखता आसारे-सहर[8] मैं शबे-फुरक़त[9]।
वोह जोशपर आंसू थे कि दिल डूब रहा था॥

सिज्देका[10] काम आज न लेंगे जबींसे[11] हम।
नक़्शे-क़दम[12] उठायेंगे उनके ज़मींसे हम॥

लहदपर[13] तास्सुफके[14] मअ़नी न समझा।
यह काहेका रोना है जब मैं बुरा था?

नादां भी हो गये मेरे नालोंसे होशियार।
अब आपके सिवा कोई गाफ़िल नहीं रहा॥

---

[1]शाबास; [2]मृत्यु-समय, [3]मित्र, साथी; [4]नसीहत हासिल करनेकी नज़रसे; [5]खूनीके हाथको; [6]सफलताके पांवमें, [7]अभिलाषायें; [8]सुबह होनेकी रूपरेखा; [9]विरह रात्रिमें; [10]मस्तक झुकानेका; [11]मस्तकसे; [12]चरण चिह्न; [13]कब्रपर; [14]पश्चात्तापके।

सहने-जिंदाँ-ओ-चमन[1] मेरी नजरमें एक है।
कैदसे घबराये वोह् जो रजसे आज़ाद था॥

कम-से-कमपर आज राजी है शहीदोके मजार।
आप हँस देंगे तो समझेंगे चिरागाँ[2] हो गया॥

ख्वाहिशे - दुनिया - ए - हुस्नो - इश्क[3] है।
वर्ना फिर मैं किसलिए, तू किसलिए?

दिलके होते भी कहीं दर्द जुदा होता है।
इक फ़कत मौतके आजानेसे क्या होता है?

पेशे-अरबाबे-करम[4] हाथ वोह् क्या फैलाता?
जिसको तिनकेका भी एहसान गवारा[5] न हुआ॥

जवाब जख्मे-जिगर दे रहा है हँस-हँसकर—
"वही तो दिल है कि जो खुश रहे मुसीबतमें"॥

बढाई जिसने तेरी नींद मुझको तड़पाकर।
वोह मेरी उम्रे-गुज़िश्ता[6] न थी, कहानी थी॥

न जागते न सही, सुनके नींद तो आती।
युँ ही सही मेरा किस्सा कभी बयाँ होता॥

मेरी तरह है हाल मेरा, उनका खैर-ख्वाह।
आशिक है उनकी नींद मेरी दास्तान पर॥

---

[1]कारागारका आँगन और उपवन, [2]दीपावलि; [3]रूप और प्रेमका ससार चाहता हूँ; [4]दानवीरोके सामने, [5]पसन्द; [6]आप बीती घटना।

दिलने अपनी हसरतोंके काफिले ठहरा दिये।
इस कदर आबाद पहले कूचए-कातिल न था॥

ख़िलवत-पसन्द[1] हश्रसे[2] ख़ुश होके क्या करे?
वादेका रोज जलवागहे-आम[3] हो गया॥

उसके सुननेके लिए जमा हुआ है महशर।
रह गया था जो फ़साना मेरी रुसवाईका॥

नज़अ[4] इक ईद है, वोह रोते हुए आये हैं।
ऐ दिलेज़ार यही वक़्त है मर जानेका॥

नशेमन आगसे बचता तो ख़ौफ़ बर्कका था।
जो बाग़बाँ भी न होता तो आस्माँ होता॥

मकाँ मुनअ़िमका[5] सोनेसे, यह ख़ूने-दिलसे बनता है।
ख़सो-ख़ाशाकका घर[6] भी बड़ी मुश्किलसे बनता है॥

किसीका रंज देखूं यह नहीं होगा मेरे दिलसे।
नजर सैयादकी झपके तो कुछ कह दूं अनादिलसे[7]॥
बर्कके गिरनेसे मातम एक ही होता तो ख़ैर।
आशियाँके साथ आँच आई मेरी हसरतपै भी॥

हो गये बरसों कि आँखोंकी खटक जाती नहीं।
जब कोई तिनका उड़ा घर अपना याद आया मुझे॥

ग़नीमत है कफस, फ़िक्रे रिहाई क्या करें हमदम!
नहीं मालूम अब कैसी हवा चलती है गुलशनमें॥

---

[1]एकान्तके इच्छुक, [2]प्रलयके बादकी स्थितिसे; [3]जनसमूह एकत्र होनेका स्थान; (एकान्त प्रिय अपनी प्रेयसीको जन समूहमें देखकर कैसे प्रसन्न हो) [4]मृत्युका वक़्त, [5]धनिकका महल, [6]गरीबका झोपडा; [7]बुलबुलोंसे।

देखा किये वोह चान्दको अपने गुमानपर।
मै खुश हुआ कि तीर चले आस्मानपर॥

गुस्सेके बाद तेग़जनीका[1] महल[2] नहीं।
पहले ही जिबह[3] होगये चीने-जबींसे[4] हम॥

कुछ वफ़ा कुछ जुल्मके आसार रहने दीजिए।
खूनमें डूबी हुई तलवार रहने दीजिए॥

शिकायत जुल्मे-खंजरकी नहीं, ग़म है तो इतना है।
जबाने-ग़ैरसे क्यों मौतका पैग़ाम आता है॥

दाग़ेदिल क़ब्रकी जुल्मतमें है बेनूर ऐसा।
जैसे देखा हो चिराग़ आपने वीरानेका॥ *

क्या कहे बेज़बाँ असीरे-कफ़स[5]।
क्यों हुआ क़ैद, क्यों रिहा न हुआ॥

बदल-बदलके जहाँ एतबार खो बैठा।
ख़ुशीमें भी मेरे दिलको मलाल होता है॥

हिज्र के दर्दको बढ़ने दे कि है मुज़दए-वस्ल[6]।
वही घटता है जहाँमें जो सिवा होता है॥

---

*रोशन है इस तरह दिले-वीराँमें एक दाग़।
उजड़े नगरमें जैसे जले है चिराग एक॥

—मीर

[1]तलवार चलानेका; [2]समय, मौका-महल; [3]घायल, क़त्ल; [4]त्योरी पड़े मस्तकसे; [5]पिंजरेका बेज़बान पक्षी; [6]मिलनका शुभ संदेश।

इस दर्दे-मुहब्बतके[1] अन्दाज़ निराले हैं।
घटता तो मरज़ होता, बढ़ता तो दवा होता॥

क़हक़हे हमने सुने दुनियामें और फ़रियाद भी।
एक ही रस्तेसे गुज़रे शाद[2] भी नाशाद[3] भी॥

नब्ज़ हो या दिल हो इसका क्या इलाज?
डूबनेवाला उभर सकता नहीं॥

न आँख बन्द करूँ मैं तो क्या करूँ या रब!
वोह आ रहे हैं तमाशाए-जाँ-कनीके[4] लिए॥

मुट्ठियोंमें ख़ाक लेकर दोस्त आये वक़्ते-दफ़्न।
ज़िन्दगी भरकी मुहब्बतका सिला देने लगे॥

लहद[5] सियाह है 'साक़िब' कोई चिराग़ नहीं।
और इसपै शाम हुई है दयारे-ग़ुरबतमें[6]॥

न समझा मदफ़निए-गोरो-कफ़न समझा तो यह समझा।
थका था मैं लिपटकर सो रहा दामाने-मंज़िलसे॥

कहनेको मुश्ते-परकी[7] असीरी[8] तो थी मगर।
ख़ामोश हो गया है, चमन बोलता हुआ॥

यूँ तो मुश्ते-ख़ाक था दिल, ख़ून होकर बह गया।
लेकिन इस क़तरेमें वोह कुछ था, जो दरियामें न था॥

---

[1]प्रेम-टीसके; [2]प्रसन्न; [3]अप्रसन्न; [4]मृत्युकी छटपटाहट देखनेको; [5]क़ब्र; [6]परदेशमें, सफ़रमें; [7]मुट्ठीभर परोंकी; [8]क़ैद।

तीरगी[1] नाम है दिलवालोंके उठ जानेका।
जिसको शव[2] कहते हैं मकतल[3] है वोह परवानोंका॥

वला है अ़हदे-जवानीसे ख़ुश न हो ऐ दिल!
सँभल कि उ़म्रकी दुनियामें इनकलाव आया॥

यह किसने ग़मकदा[4] दुनियाका नाम रक्खा है?
हमें तो कोई यहाँ दर्द-आश्ना[5] न मिला॥

नहीं मालूम, वोह मैं हूँ कि कोई और असीर[6]।
सुन रहा हूँ कि गिरफ़्तारको आज़ाद किया॥

मेरे ज़ुल्मतकदेमें रोज़े-रोशनका[7] गुज़र कैसा?
सलामत है शवे-ग़म तो, उजाला हो नहीं सकता॥

नाज़ो-अदाकी[8] चोटें, सहना तो और शै है।
ज़ख़्मोंको देख लेता कोई, तो देखता मैं॥
वर्क़े-जमाले-वहदत[9]! तू ही मुझे वता दे!
शोला[10] तो दूर भड़का, फिर किसलिए जला मैं?

ज़िन्दगीमें क्या मुझे मिलती वलाओंसे निजात[11]।
जो दुआ़एँ कीं, वोह सव तेरी निगहवाँ[12] हो गईं॥
कम न समझो दहरमें[13] सरमाय-ए-अरवावे-ग़म[14]।
चार वूँदें आँसुओंकी, वढ़के तूफ़ाँ हो गईं॥

जुज़-ज़मीने-कूए-जानाँ[15] कुछ नहीं पेशे-निगाह[16]।
जिसका दर्वाज़ा नज़र आया सदा[17] देने लगे॥

---

[1]अँधेरा; [2]रात्रि; [3]वधस्थल; [4]दुखोंका स्थान, [5]दुखोंसे परिचित; [6]क़ैदी; [7]प्रकाशका; [8]हाव-भावों, नख़रोंकी; [9]एकेश्वरवादरूपी सौन्दर्यकी विजली; [10]चिन्गारी; [11]छुटकारा; [12]रक्षक, [13]संसारमें; [14]मित्रोंका सहृदयता-रूपीधन; [15]प्रेयसीके कूचेके अतिरिक्त; [16]दृष्टिमें; [17]आवाज़।

दिलके किस्से कहाँ नहीं होते ?
हाँ, वोह सबसे बयाँ नहीं होते॥

कहूँ क्योंकर कि मैं कुछ भूल आया हूँ नशेमनमें।
मेरा सैयाद कहता है कि "क्या रक्खा है गुलशनमें ?"

जिसमें भरा हुआ है मेरी जिंदगीका हाल।
दुनियाको नींद आती है अब उस फ़सानेमें॥

दुआएँ दें मेरे बाद आनेवाले मेरी वहशतको।
बहुत काँटे निकल आये, मेरे हमराह मंज़िलसे॥

नाले करता जा कि ज़ोरे-नातवानी है बहुत।
झुक चला है चर्ख़ गिर जायेगा दो-इक तीरमें॥

तड़पा दिया है दिलको, शाबाश हम सफ़ीरो!
यूँ ही फिर इक सदा दो, टूटा कफ़स, चला मैं॥

आशियाँ

गुलचीं बुरा किया जो यह तिनके जला दिये।
था आशियाँ मगर तेरे फूलोंसे दूर था॥

१० मई १९५२ ई०]
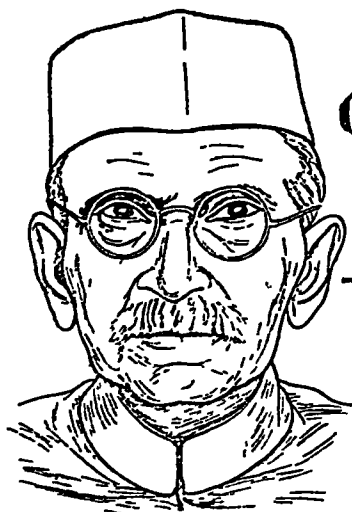
ख़ानबहादुर मिर्ज़ा जाफरअलीख़ाँ 'असर', लखनऊके एक प्रतिष्ठित और शिक्षित वशमें १२ जुलाई १८८५ ई० में उत्पन्न हुए। जिनकी गोदियोंमे आपका लालन-पालन हुआ, वे उर्दू ज़वानके मालिक थे। यही कारण है कि आप उर्दूके, विशेषकर लखनवी उर्दूके अधिकारी एव प्रामाणिक विद्वान् समझे जाते है। ख्याति प्राप्त शाइर होनेके अतिरिक्त आप उच्चकोटिके आलोचक एव गद्य-लेखक भी है। आपके अनेक महत्त्वपूर्ण लेखों और आलोचनाओंका सकलन 'छानवीन' हमारी नज़रसे गुज़रा है। उसमें आपने देहलवी-लखनवी शब्दोके ठीकरूप वताने और उनके वास्तविक अन्तरको समझानेका सफल प्रयत्न किया है। आप 'मीर'के वहुत बड़े भक्त है। उनके कलामको अपनी महत्त्वपूर्ण प्रस्तावनाके साथ 'मज़ामीर' शीर्षकसे दो भागोमें प्रकाशित कराया है। आपका 'मीर' और 'ग़ालिव' पर एक महत्त्वपूर्ण और विस्तृत लेख जो 'आजकल' उर्दूमें

कई अंकोमे क्रमशः प्रकाशित हुआ था, उससे ही आपके गंभीर अध्ययन और विशाल सुरुचिका आभास मिल जाता है।

१९०६ ई० में आप बी० ए० हुए। १९०९ में डिप्टी कलेक्टर हुए और १९४० ई० मे कलेक्टरी-पदसे पेंशन प्राप्त की, किंतु उसीके बाद इलाहाबादके एडीशनल कमिश्नरके पदपर अस्थाई तौरपर नियुक्त किये गये। चन्द साल काश्मीरमें गृह मन्त्री भी रहे। इतने उच्च राजकीय पदोपर रहते हुए भी बातचीत या पत्र-व्यवहारमें उर्दू भाषाका ही प्रयोग करते रहे है। बहुत ही आवश्यकता पड़नेपर अंग्रेज़ी भाषाका व्यवहार करते हैं। आप 'अज़ीज़'के शिष्य है, किन्तु कलाम उनसे जुदागाना रंगमे उनसे बेहतर कहते है।

भाषाकी सादगी

'असर'का अन्दाज़े-बयान सरल, स्वच्छ और प्रवाह-युक्त है। उनके दीवानको पढते हुए ऐसा प्रतीत होने लगता है कि किसी ऐसे चश्मेके किनारे बैठे हुए है, जो कल-कल करता हुआ अविराम गतिसे बहता हुआ जा रहा है। उनके सीधे-सादे शब्दों और छोटी-छोटी बहरोमें गागरमें सागर भरा होता है—

जैसे वह सुन रहे हैं, बैठे हुए मुकाबिल।
और दर्दे-दिल हम अपना उनको सुना रहे हैं॥
फिर हम कहाँ, कहाँ तुम, जी भरके देखने दो।
अल्लाह! कितनी मुद्दत तुमसे जुदा रहे हैं॥

यूँ उनकी याद है दिले-हैराँ[1] लिये हुए।
जैसे नसीम[2] गुंच-ओ-गुलके कनारमें[3]॥

जिन्दगी और जिंदगीकी यादगार।
पर्दा और पर्देपै कुछ परछाइयाँ॥

---

[1]आश्चर्य-चकित हृदय; [2]प्रात कालीन पवन; [3]गोदमें, अर्थात् फूलोमे बसी हुई।

जब कहा उसने—"मुद्दआ[1] कहिए"।
सोचते रह गये कि क्या कहिए॥

फिर तुम्हें फ़ुरसत न हो या मै ही आपेमें न हूँ।
यह बताते जाओ मेरे हक़में क्या मंज़ूर है?

अपनी बिसातभर तो हमने कमी नहीं की।
अब तुम बताओ क्योंकर रस्मे-वफा निभाएँ?

दिल दुखाया है जिसने, शाद रहे।
और अब क्या दुआ करे कोई॥

करवटें क्यों बदल रहे हैं हुज़ूर?
अभी आग़ाज़[2] है कहानीका॥

मरनेका भी न सलीका आया।
यह तो दुश्वार कोई काम न था॥

खुद लिपटती रही दुनिया उससे।
जिसको दुनियासे कोई काम न था॥

रंगे-मीर

'असर' 'मीर'के प्रशसक ही नही, उनके अनुयायी भी है। आपके कलाममे वही 'मीर'-जैसा सोज़ोगुदाज़ और अन्दाज़े-बयान है। 'मीर' और 'असर'के अशआर अगर खल्त-मल्त कर दिये जाये तो फिर उनको अलग-अलग करना आसान काम नही। बानगी देखिए—

नाम अलबत्ता सुनते आये हैं।
हम नहीं जानते खुशी क्या है?

ज़रा देर दम लेने दे ऐ फ़लक!
मुसीबतका एहसास[3] कम हो गया॥

---

[1]अभिप्राय; [2]प्रारम्भ; [3]ज्ञान, अनुभूति।

हर-इक रहगुज़रमें[1] है सरगोशियाँ[2]।
ख़ुदा जाने किसपर सितम हो गया ?

आ ! मेरे काटे अब नहीं कटतीं।
बेवफ़ा तेरे हिज्र की[3] घड़ियाँ॥

हमने रो-रोके रात काटी है।
आँसुओंपर यह रंग तब आया॥

साँस भी ले सँभलके ऐ नादाँ !
सख़्त मुश्किल है रिश्ता उल्फ़तका॥

ख़ूगरे-दर्द[4] हो अगर इन्साँ।
रंजमें भी मज़ा है राहतका[5]॥

हम समझते थे कि उल्फ़त खेल है।
यह ख़बर क्या थी लहू रुलवाएगी॥

मौतमें ज़ीस्त[6] देखनेवालो !
देखलो ज़ीस्तमें फ़ना[7] हैं हम॥

मैं अगर उससे कहूँ भी तो बताओ क्या कहूँ ?
जब उसे मालूम है जो कुछ कि मेरे दिल में है॥

मेरा हँसना है ज़ख़्मकी सूरत।
जो मुझे देखता है रोता है॥

डब-डबा आईं ख़ुद-ब-ख़ुद आँखें।
बार-हा ऐसा इत्तिफ़ाक़ हुआ॥

आँखमें अश्के-नदामत[8] डब-डबाकर रह गये।
हम यूँ ही अक्सर दुआको हाथ उठाकर रह गये॥

---

[1]मार्गमे; [2]कानाफूसी; [3]वियोगकी; [4]दुखोंका अभ्यस्त; [5]सुख-चैनका; [6]ज़िन्दगी; [7]मृतक; [8]गुनाहगारीकी शर्मसे आये हुए आँसू।

घुट-घुटके मर न जाये तो बतलाओ क्या करे?
वह बदनसीब जिसका कोई आसरा न हो॥

सौन्दर्य-वर्णन

जमालियाती (सौन्दर्य-विषयक) कलाम उर्दूशाइरीमे काफी मिलता है। खासकर पुराने लखनवी शाइरोके यहाँ तो जमालियाती रगकी भरमार है। मगर उनके यहाँ स्वाभाविक और दिलनशी शेर आटेमें नमक जितने मिलते है। अधिकांश अस्वाभाविक और अश्लीलतासे ओत-प्रोत है। कघी-चोटी, सुर्मा-मिस्सी, चोली-दामन, ज़ेवर-लिवास आदिका कुरुचिपूर्ण वर्णन और रान-काँख, वाल-खाल (तिल) आदिका अश्लील और घिनौना चित्रण पाया जाता है। ऐसे ही शाइरोको लक्ष करके मौलाना 'हाली'ने कुछ इस तरहके उद्गार प्रकट किये थे कि ससारमें ऐसा कोई मूर्ख नही जो अपनी प्रियतमाके गुप्तागोका वर्णन किसीके सामनें करे। मगर आश्चर्य है कि हमारे शाइर दिन-रात इसी कार्यमे लीन हैं। उन्हे जग-हँसाईकी कोई चिन्ता नही।

'असर'ने भी इस नाजुक आर्टपर तूलिका चलाई है। मगर इस कौशलसे कि जो भी देखेगा, देखता रह जायगा और दिलमें कहेगा कि ऐसी वहन, वेटी, पत्नी, मुझे भी नसीव हो।

एक उछालछक्को और चर्वज़वान औरतके नक़्श न उभारकर आपने एक ऐसी पवित्र, लजीली और कोमलागीको चित्रित किया है कि हर व्यक्तिको ऐसी पुत्री, वहन और पत्नीपर अभिमान होगा। उसके क़दमोंसे जन्नत लगी चलेगी—

अब मैं समझा मुराद जन्नतसे।
आप जिस राहसे गुज़र जायें॥

प्रेयसीकी चालको पुराने शाइरोने कयामतवरपा होना कहा है। यानी उसकी चालसे प्रलयकारी तूफान उठ खड़े होते है। गोया प्रेयसी न हुई चुड़ैल या जिन हुई कि जिधरसे भी गुज़र जाये हड़वोंग मच जाये।

उसी कयामतवरपा चालको 'असर'ने उक्त शेरमे इतने पवित्र और
ुक ढँगसे व्यक्त किया है कि दाद देनेको उपयुक्त शब्द नही मिल पा
है। सचमुच प्रेयसीकी 'राहगुजर' ही जन्नत है। पवित्र आत्माये
ांसे भी निकल जायें, वही मार्ग स्वर्ग बन जाता है।

प्रियतमा लाजके मारे पसीने-पसीने हुई जा रही है। इस नारी
म लज्जाका देखिए क्या हू-ब-हू चित्र खीचा है—

फूल डूबा हुआ गुलाबमें था।
उफ़! वोह चेहरा हिजाब आलूदा[1]!!

किशोरावस्था जब जवानीकी सरहदोको छूने लगती है तो कुछ
तरहका आलम होता है—

गुलोंकी गोदमें जैसे नसीम[2] आकर मचल जाये।
उसी अन्दाज़से उन पुरख़ुमार आँखोमें ख़्वाब[3] आया॥

नीदभरे नयनोमें क्या भरा होता है, यह कोई कैसे बताये? यह
देखने और समझनेसे सम्बन्ध रखता है—

उस घड़ी देखो उनका आलम।
नींदसे हों जब भारी आँखें॥

मोमिनका एक शेर है—

मेरे तग़ैयुरे-रंगको मत देख।
तुझको अपनी नज़र न हो जाये[4]॥

---

[1]शर्मसे भीगा हुआ; [2]प्रातःकालीन वायु; [3]मदभरे नयनोमें स्वप्न;
री यह दयनीय स्थिति तेरे सौन्दर्यके कारण हुई है। न मैं तुझे
ता न बीमार पड़ता। अत. मेरे उस तग़ैयुरे-रग (अवस्था परिवर्तन)को
देख, अन्यथा स्वय तुझे अपनी नज़र लग जायगी। क्योकि अभीतक
तू अपने सौन्दर्य-प्रभावसे अपरिचित है। मुझे देखनेसे तुझे अपनी करिश्मा-
ज़ियोका पता लग जायगा और स्वय तुझे अपनी नज़र लग जायगी।

इसी भावको देखिए 'असर' कितने दिलकश और सीधे-सादे शब्दोंमें व्यक्त करते हैं—

देखो न आँख भरके किसीकी तरफ़ कभी।
तुमको खबर नहीं जो तुम्हारी नज़रमें है॥

प्रेयसीकी चादरे-गुलकी कितनी अछूती उपमा दी है?

झिलमिलाते हुए तारे क्या हैं?
मल्गजे फूल तेरे विस्तरके॥

चन्द जमालियाती शेर और मुलाहिज़ा हो—

दमे-ख़्वाब[1] है दस्तेनाज़ुक[2] जबींपर[3]।
किरन चाँदकी गोदमें सो रही है॥

वोह तेरा शबाब कि अल्हज़र,[4] वोह तेरा ख़िराम[5] कि अलअमाँ।
न यह रंग झलके बहारमें न यह कैफ टपके शराबसे॥

बसा फूलोंकी नकहतमें,[6] लिये मस्ती शराबोंकी।
महकता, लहलहाता, एक काफिरका शबाब आया॥

चाल वोह दिलकश जैसे आये—
ठण्डी हवामें नींदका झोंका॥

उस वक़्त कोई देखे वोह नींदसे जब उट्ठें।
हर नज़्मे-सहर[7] आँखें मलता नज़र आता है॥

---

[1]सोते समय; [2]कोमल हाथ; [3]मस्तकपर; [4]खुदाकी पनाह, ईश्वर बचाये; [5]चाल; [6]सुवासमें; [7]प्रात:कालीन व्यवस्था।

मस्त आँखोमें घनी पलकोका साया यूँ था।
कि हो मैखानेपै घनघोर घटा छाई हुई॥
जैसे नग़मेमें[1] नया फन कोई ईजाद करे।
उफ! वोह आवाज़, जो थी नींदमें भर्राई हुई॥

उन लबोंपर झलक तबस्सुमकी[2]।
जैसे निकहतमें[3] जान पड जाये॥

खुमखान-ए-निशात[4] है वोह सुर्ख अँखड़ियाँ।
अँगड़ाइयोंमें इत्र खिचा है खुमारका॥
पुरकैफ[5] किस कदर है सितमगरकी गुफ्तगू?
सागर छलक रहा है मएखुशगवारका[6]॥

फूल सिज्देमें गिरे शाखें झुकीं।
देखके गुलशनमें तुझको बेनकाब॥

वोह लचक ऐसी कहाँसे लायेगी।
शाखेगुल कदसे तेरे शरमायेगी॥

खन्दएगुलपर[7] बहुत सुबहेचमनको नाज़ है।
हाँ, ज़रा फिर मुसकराकर मुझसे पर्दा कीजिए॥
इधर आ कलेजेमें तुझको छुपा लूँ।
खुद अपनी अदाओंसे शर्मानेवाले॥

इश्क़का हमला

इश्कका पहला वार बहुत दिलचस्प और मासूमाना होता है। यह हज़रत इस अन्दाज़ और सलीकेसे हमला करते है कि ऐसे वार खाते रहने-

---

[1]संगीतमे, [2]मुसकानकी; [3]सुगधमें; [4]आनन्द-मधुशाला; [5]आनन्दवर्द्धक, नशीली; [6]दिलपसन्द शराबका; [7]फूलकी मुसकानपर।

को दिल बेकरार हो उठता है। यहाँतक कि किसीके समझानेसे भी बाज़ नहीं आता। मगर जहाँ दिलपर एक बार इश्कका कब्जा हुआ कि फिर ता-उम्र टलनेका हज़रत नाम नही लेते।

हज़रते-दाग जहाँ बैठ गये, बैठ गये।

इश्ककी इसी मासूमाना कैफियतको 'असर' यूँ बयान करते हैं—

सहमी हुई थी सुब्हकी पहली किरनकी तरह।
उनकी तरफ़ निगाह जो पहले-पहल गई॥

जैसा कि हमने ऊपर अभी कहा है कि इश्कके यह दिलचस्प और मासूमाना वार खाते रहनेको दिल बेकरार हो उठता है, और समझानेसे भी बाज नही आता। बाज़ न आने की वजह एव मजबूरी 'असर' यूँ बयान करते हैं—

इश्कसे लोग मनअ़ करते हैं।
जैसे कुछ इख़्तियार है अपना॥

अदब लाख था, फ़िर भी उसकी तरफ।
नज़र मेरी अक्सर बहकती रही॥

इश्क जब दिलमें दाग बनकर बैठ जाता है तो जिस्मको धीरे-धीरे सुलगाकर ख़ाक करता ही है, उसके अलावा और भी करिश्मा-साज़ियाँ करता रहता है। कभी रोना, कभी हँसना, कभी आहो-फुगाँ करना, कभी दीवानावार जगलोमे घूमना, यह अलामते भी मरीजे-इश्कमे पाई जाती है। मगर कब रोना चाहिए और कब आँसू पी जाना चाहिए, यह नया मरीजे-इश्क नही जान पाता। यह तजर्बा तो देरीना मरीज़को ही नसीब होता है—

जो इश्कके फ़नके माहिर हैं, उनसे पूछो, तुम क्या जानो?
कब अश्क बहाना मुश्किल है, और कब पी जाना मुश्किल है॥

इश्क़का मर्तबा

असरके यहाँ इश्कका मर्तबा बहुत बुलन्द और पाकीजा है। उनका तजर्बा है कि—

इन्सानको बेइश्क सलीका नहीं आता।
जीना तो बड़ी चीज है, मरना नहीं आता॥

दिलमें है दर्द, दर्दमें इक लज्ज़ते-ख़लिश।
आज़ारे-इश्क़ने मुझे इन्सां बना दिया॥

और जब इश्ककी बदौलत इन्सानियत-जैसी बेशबहा निधि नसीब हो गई तो उससे किसीकी दिलआज़ारी नामुम्किन। जिसका रोम-रोम प्रेममें भीगा हुआ हो, उसे हर वस्तुमें अपने प्यारेका जलवा नजर आता है—

न जाने बात यह क्या है? तुम्हें जिस दिनसे देखा है।
मेरी नजरोंमें दुनिया भर हसीं मालूम होती है॥

और जिसे हर वस्तुमें अपने प्यारेका जलवा नजर आयेगा, वह विनष्ट करनेके बजाय हर वस्तुको प्यार करेगा। यहाँतक कि वह फूलकी पत्तीको भी सदमा नहीं पहुँचाना चाहेगा—

पाकबाज़ाने-मुहब्बत हैं यहाँतक मुह्तात[1]।
गुलपै भी दीदा-ए-शबनमसे[2] नजर करते हैं॥

---

[1]इहतियात रखनेवाले, सावधानी बरतनेवाले, [2]अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे (भाव यह है कि जैसे ओसके पड़नेसे फूलका अनिष्ट नहीं होता, अत हम फूलोंकी तरफ भी इस सावधानीसे देखते हैं कि उनका कहीं अनिष्ट न हो जाय। किसीका भी दिल न दुखे, इस तरहका हम सदैव प्रयत्न करते हैं)।

अक्सर लोगोका आम-खयाल है कि इश्क इन्सानको ज़लीलो-ख्वार कर देता है। इश्क तो इन्सानको इन्सानका मर्त्तबा बख्शता है। जलीलोख्वार तो बुलहविसी (भौंरा-जैसी लोलुप कामुकता) करती है, जो इश्कका छद्म-वेष बनाये घूमती है। गोमुखी व्याघ्रसे भयभीत वास्तविक गायसे भी डरने लगे तो इसमे गायका क्या दोष ? इश्क अगर बेगरज़ और बेआर्जू हो तो उसके मर्त्तबेका क्या कहना ?

इश्क है इक निशाते-बेपायाँ[1]।
शर्त यह है कि आर्जू न रहे॥

सीमाओका बन्धन और तू-मैंका भेद प्रेम-मार्गके कण्टक है। प्रेमी इनको दूर किये बगैर अपने चरम लक्षतक नही पहुँच सकता। इसी भावको रंगे-तगज्जुलमें देखिए 'असर' किस खूबीसे व्यक्त करते है—

उठा दे कैद सुबू-ओ-शराब-ओ-साग़रकी।
बुलन्द और ज़रा कर मज़ाके-रिन्दाना॥

विरहपर शेर सुनिए—

हर साँस एक ताजा जिराहतका[2] है पयाम[3]।
नश्तर बनी हुई है, रगेजाँ तेरे बगैर॥

फिर न आये जो वादा करके गये।
आजका दिन है और वोह दिन है॥

कुछ रोज यह भी रंग रहा इन्तज़ारका।
आँख उठ गई जिधर बस उधर देखते रहे॥

---

[1]गहरी खुशी, स्थायी सुख; [2]घावका बेचैनी, कष्टका; [3]सन्देश।

उक्त तीनों शेअ्‌रोमें कितनी वेदना और कितनी व्यथा भरी हुई है, यह भुक्तभोगी ही महसूस कर सकता है। जिस स्त्रीका पति या पुत्र परदेशमें रोज़ी कमाने चला जाय और जानेके बाद न पातियाँ भेजे, न कोई सँदेसा, और न फिर कभी लौटे, उस नारीके दिलसे कोई पूछे कि उसने किस तरह एड़ियाँ रगड़-रगडकर उम्र काटी है। वह किस बेकरारीसे गाँवके रास्तेपर पलक-पाँवड़े बिछाये बैठी रही है, और रात-बिरातको जब भी दर्वाज़ा खट-खटानेका वहम हुआ है, लपक-लपककर द्वार खोला है।

जिन सौभाग्यशालियोंको यह प्रतिक्षाजन्य कष्ट उठानेका कभी अवसर नहीं मिला, वे श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदीद्वारा लिखित और भारतीय ज्ञानपीठद्वारा प्रकाशित 'रेखाचित्र'में 'लल्लू कब लौटेंगे' और "बाइस वर्ष बाद" पढकर इस विरह-वेदनाका किंचित आभास पा सकते हैं।[१]

उस कुँवारी लड़कीकी मनोव्यथाका अनुमान लगाइए जो अपने प्रियतमकी प्रतीक्षामें बूढी हो गई। घरवालोंके लाख सर पटकनेपर भी न किसी दूसरेसे शादी की, न किसी गैरको आँख भरकर देखा। उम्रभर उसीकी माला जपती रही। उम्रभरकी तपस्याके फलस्वरूप वह

---

[१]इस विरह-वेदनाकी टीस और बेचैनी इन दोहोंमे देखिए कैसी बिलख रही है—

सोना लेने पिउ गये सूना कर गये देस।
सोना मिला न पिऊ फिरे रूपा हो गये केस॥

—अज्ञात

मेरा हाय देख बरहमना! मेरे पिउ मुझसे मिलेंगे कब?
तेरे मुँहसे निकले खुदा करे, "इसी सालमें, इसी माहमें"॥

—अज्ञात

वापिस आया भी तो हायरे भाग्य वह अपने साथ किसी और स्त्रीको ले आया[1] और उसकी तरफ आँख उठाकर भी न देखा। सूखी खेतीपर बादल आये भी मगर बेसूद, एक बूंद गेरे बगैर उमड-घुमडकर किनारा काट गये।

तमाम उम्र 'असर' ! जिसकी राह देखी थी।
इधरसे आज वोह गुज़रे तो मिस्ले-बेगाना॥

हबीबका रुत्बा

तुम्हीं हो रौनके-गुलशन, तुम्हीं हो रंगे-बहार।
मगर किसीको तुम्हारा गुमाँ नहीं होता॥

उक्त शेर रंगे-तसव्वुफमें कहा गया है। यानी इस शेअ़रमें 'असर'का महबूब खुदा नजर आता है, और उनका यह कामिल यकीन है कि सारी दुनियामें खुदाका जलवा है। इस यकीनको एक और शेअ़रमें आप यूँ उजागर करते हैं—

ज़िंदगी बक़फ़ा है तेरे हिज्रका।
मर्ग तेरे वस्लका पैगाम है॥

खुदाकी पहचान

खुदाकी तलाशमें लोग वनो-पर्वतोकी खाक छानते है। मन्दिरो-मस्जिदोमें भटकते है। मगर खुदा नही मिलता। अगर किसीको

---

[1]इस तरहकी घटनाये अक्सर होती रहती है। आज़ाद हिन्द फौजके एक ख्यातिप्राप्त कर्नल साहबकी मँगेतर उनकी प्रतीक्षा करती रही। उसके भाग्यसे वे लडाईसे और फाँसीके तख्तेसे बचे और ख्यातिके उच्च शिखरपर पहुँचे तो उन्होने शादी उस प्रतीक्षकासे करनेके बजाय एक परित्यक्तासे कर ली। इसीतरह पजावके एक प्रसिद्ध क्रातिकारी जब १० वर्ष बाद जेलसे मुक्त हुए तो उन्होने वियोगिनीके आँसू पूछनेके बजाय दूसरी शादी करके उसे उम्रभर जलने-सिसकनेके लिए मजबूर कर दिया।

मिलता भी है तो वह उसे पहचानता नहीं और इस तरह उसके दर्शनेच्छु दुनियामें भटकते हुए अपनी ज़िन्दगी बरबाद कर रहे हैं। ऐसे ही भटके हुए लोगोंके लिए देखिए 'असर' ख़ुदाकी कितनी आसान पहचान बताते हैं—

हम उसीको ख़ुदा समझते हैं।
जो मुसीबतमें याद आ जाये॥

ख़बरदार, उक्त शेअ्रके 'याद'को 'काम' न बना लीजिए। वर्ना शेअ्रकी लताफ़त तो जाती ही रहेगी, आप भी ऐसे बदज़ौक़ और ख़ुदगरज़ तसव्वुर कर लिये जायेंगे, जो हर जगह और हर शक्लमें अपने 'काम' निकालनेकी फ़िक्रमें लगे रहते हैं।

मैंने यह शेअ्र अपने परमस्नेही मित्र सुमत साहबको लिखकर भेजा तो उन्होंने अपने यहाँ दिये गये एक 'डिनर'पर एक मुहज़्ज़ब उर्दू-अदीबको उक्त शेअ्र सुनाया तो वे सुनते ही बोले "याद आ जाये" क्या, "काम आ जाये" कहिए साहब! सुमत साहब सुनकर चुप हो गये। उनकी नज़रोंमें डिनरका सारा मज़ा किर-किरा हो गया और वे उस व्यक्तिके बारेमें सोचते रहे कि यह भी कैसा बदज़ौक़ है, जो 'याद' जैसी लतीफ़ चीज़से ज़्यादा 'काम'को अहमियत देता है।

मज़हबी दूकानें

बहकके नशेमें मस्जिदको समझा मैख़ाना।
ग़ज़ब हुआ था मेरा सर ही झुक गया होता॥
मस्जिदों और ख़ानक़ाहोंका तमाशा देखकर।
मैं फिरा दिलकी तरफ़ शुक्रे-ख़ुदा करता हुआ[1]॥

---

[1]इसी मज़मूनपर 'असगर' गोण्डवीने क्या बलाका शेअ्र कहा है—

दैरो-हरम भी कूच-ए-जानांमें आये थे।
पर शुक्र है कि बढ़ गये दामन बचाके हम॥

ज़ाहिद

उर्दू-शाइरोने ज़ाहिदो-नासेहकी पगड़ी उछालनेमें कोई कोर-कसर नही रखी है। कोई उनकी पगड़ी गिरवी रखवाता है, कोई उनके मुँडे हुए सरपर चपत जडनेसे बाज़ नही आता। कोई उनसे शराबसे भीगे हुए कपडे धुलवाना चाहता है तो कोई उनके मुँहपर शराबके कुल्ले करनेसे नही हिचकता। गोया शेख़ो-ज़ाहिद होलीके भड़वे है कि हर शख्स उन्हें बनाना ज़रूरी समझता है। 'असर' भी परम्पराके अनुसार उन्हे छेडते है। मगर इस सलीक़ेसे कि न तो उनकी दिलआज़ारी हो और न अदबका दामन हाथसे छूटने पाये।

ज़ाहिदको एअ्तबार है फ़िरदौसो-हूरका।
दुनिया-ए-रंगोबूका तमाशा किये बग़ैर॥
हविस[1] बिहिश्तकी[2] और इश्तियाक़[3] हूरोंका।
जनाबे ज़ाहिदे-इस्मतपनाह[4] क्या कहना॥

हुस्ने-बयान

'असर'का यह हुस्ने-बयान और जिद्दत देखिए कि रूठी हुई प्रियतमासे ही उसके मनानेका उपाय पूछ रहे है—

इक बात भला पूछें "किस तरह मनाओगे?
जैसे कोई रूठा हो और तुमको मनाना है॥"

मालूम नही 'असर' साहबकी प्रियतमाने उन्हे मनानेका उपाय बताया या नही और बताया तो वे उसे अमलमें लाकर कामयाब हुए या नहीं। मगर मैंने इसे ऐसा कारगर पाया कि इसकी करिश्मा-साज़ियोंके क्या कहने?

---

[1]तृष्णा; [2]स्वर्गकी, जन्नतकी; [3]आकांक्षा; [4]शील-चारित्रका ढोंग करनेवाले।

मैंने इसका तजर्बा एक वयोवृद्ध आदरणीय साहित्यिक तपस्वीपर किया। बात यह थी कि उनकी पुस्तक ज्ञानपीठसे प्रकाशित होनी थी। समूची पुस्तकके प्रूफ उनके पास करीब दो वर्षसे पडे हुए थे। व्यस्तताके कारण न स्वयं प्रूफ देखते थे और न प्रकाशकको वापिस ही भेजते थे। रजिस्टर्ड पत्रोंका उत्तर तक न देते थे। प्रेसके तकाज़ोंसे नाकमे दम था। एक रोज़ बैठे-बिठाये उक्त शेअ्र ज़ेहनमें आया तो तजर्बा कर ही डाला। उनको निम्न पत्र लिखा गया—

आदरणीय ......जी,

'असर' लखनवीका एक शेअ्र सुनिए—

इक बात भला पूछें किस तरह मनाओगे?
जैसे कोई रूठा है और तुमको मनाना है॥

इसी शेअ्रके अनुसार आपसे एक सलाह लेनी है, और वह यह कि—हिन्दीके एक बहुत ख्यातिप्राप्त लेखकके पास ज्ञानपीठके करीब १॥ वर्षमे ७००-८०० पृष्ठके प्रूफ पडे हुए हैं। वह न स्वय पढते हैं और न प्रकाशकको ही पढनेकी इजाज़त देते हैं। वह सम्पादक-लेखक-शोषित-सघ आदि सस्थाओंके सचालक हैं। उनके सम्बन्धमे कहीं भी शिकायत करना अपनी फज़ीहत कराना है। किसी पत्रमे भी उनके सम्बन्धमें नही लिखा जा सकता, क्योंकि प्रायः सभी पत्रोमे उनके लेख निकलते हैं। शासक-वर्ग भी हमारी पुकार नही सुन सकता, क्योंकि वह राज्य-परिषदके भी सदस्य हैं। ऐसी स्थितिमे आप हमें एक हिन्दी-हितैषीके नाते सलाह दीजिए कि क्या करना चाहिए। यदि आप उन्हे जानते भी हो तो हमें आपसे पक्षपातकी उम्मीद नहीं।

सुना है बनारसके एक न्यायी मजिस्ट्रेटकी पत्नीने अपनी मेहतरानीको गाली दी तो उन्होंने मेहतरानीकी ओरसे गवाही दी थी, और उनकी पत्नी-पर अदालतसे जुर्माना हुआ था। सैकडो पत्र उनके पास अनुनय-विनयके

पहुँचाये गये, किन्तु अब उन्होने पत्रोत्तर देनेकी भी कसम खा ली है। कृपया नेक सलाह दीजिए।

आपका

.. ... .

शेअरने जादूका काम किया। १५ रोजके अन्दर समूचे प्रूफ सशोधित होकर लौट आये और उन सहृदय तपस्वीने मुक्त हृदयसे दाद भी दी।

'असर'का एक शेअर और सुनाना चाहता हूँ। मगर एक गुज़रे हुए वाकेअ़ेके साथ, ताकि शेअरका पूरा लुत्फ उठाया जा सके।

मेरे एक परिचित युवककी शादी थी। युवक महाशय एम० ए० थे और अच्छे-खासे खुशपोश थे। बारातकी रवानगीपर इत्तिफाक देखिए कि उनके मुँहपर ततैयेने काट लिया। ससुराल पहुँचते-पहुँचते मुंह कुप्पा हो गया। मुँह, नाक, आँख सब यकसाँ नजर आते थे। ससुरालमे अच्छे खासे टेसू बनाये गये। दो रोज वहाँ उसी धजामे रहे। शादीका सारा मज़ा किर-किरा हो गया। तीसरे रोज़ घर पहुँचे तो फिर पहली हालतमे आ गये, क्योंकि ततैयेके काटनेका वरम तीन रोज बाद उतर जाता है। मिलनेपर मैंने इस घटनापर अफसोस जाहिर किया तो 'असर'-का यह शेअ़र सुनाकर हजरत हँसने लगे—

यह इत्तिफ़ाक तो देखो बहार जब आई।
हमारे जोशे-जुनूँका वही जमाना था॥

नैतिक कलाम

'असर'की गजलोमे इस तरहके नैतिक अशआर काफी मिलते है—

तुमको है फ़िक्रे-तन-आसानी[1] 'असर'।
ज़िंदगी क़ुर्बानियोंका नाम है॥

---

[1]शारीरिक सुविधाओकी चिन्ता।

टुक तूफानकी मौजोंसे उलझ।
नाखुदा[1] कौन ? सफ़ीना[2] कैसा ?
किसीके काम न आये तो आदमी क्या है ?
जो अपनी फ़िक्रमें गुज़रे वोह ज़िंदगी क्या है ?
हुई ख़िदमते-ख़ल्क़[3] जिन-जिनका मज़हब।
ख़ुदाके वही बन्दे मक़बूल[4] निकले॥
जो दर्दसे वाक़िफ़ हैं, वोह खूब समझते हैं।
राहतमें तुझे खोया, तकलीफ़में पाया है॥

'असर' कुछ काम कर जाओ, जहाँमें नाम कर जाओ।
रगड़कर ऐड़ियाँ मरनेमें इज़्ज़त हो नहीं सकती॥
शमए-ख़मोशकी तरह ज़िन्दा रहा कोई तो क्या ?
राज़े-हयात है निहाँ सोज़के साथ साज़में॥

प्रेरणात्मक

अकर्मण्य और कापुरुषोको इस शाइराना अन्दाज़मे प्रेरणा की है कि बात दिलमें भी उतर जाय और कहनेवाला मौलवियाना एव नसीहताना ऐबसे भी बच जाय—

न हौसला, न तमन्ना, न वलवला, न उमंग।
यह बेहिसी[1] नहीं ऐ दिल ! तो बेहिसी क्या है ?
जज़बए-मसूर[6] कैसा ! बेहिसी यह है 'असर'।
दअ़वते-दारोरसनपर[7] अंजुमन ख़ामोश है॥
अहले हिम्मतने हुसूले-मुद्दआ़में[8] जान दी।
और हम बैठे हुए रोया किये तकदीरको॥

---

[1]मल्लाह, [2]नाव; [3]जनताकी सेवा; [4]प्रिय; [5]अकर्मण्यता; [6]फाँसीपर झूलनेकी उमग, [7]बलिदान-निमन्त्रणपर, [8]लक्ष्य-प्राप्तिमें।

यह सोचते ही रहे और बहार ख़त्म हुई।
कहाँ चमनमें नशेमन बने कहाँ न बने॥

(देश विजित भी हो गया और हम मोर्चेके उपयुक्त स्थानकी तलाश ही करते रहे।)

ये नेता

जिन नेताओंकी वदौलत भारत-विभाजनके वक़्त साम्प्रदायिक नरमेव-यज्ञ हुआ, उनपर 'असर'का यह शेअ़र कितना सही चस्पाँ होता है—

अपने वोह रहनुमा[1] हैं कि मंजिल तो दरकिनार।
काँटे रहेतलवमें[2] बिछाते चले गये॥

काश यह सम्प्रदायवादी 'असर'के इस शेअ़रपर अमल करते—

क़ाफ़िलेवालो! जरसके शोरमें क्या इम्तियाज़[3]।
गूँजने दो जयके नअ़रे और तकवीरें कहीं॥

(मन्दिरोंमे भी अज़ान हो और मस्जिदोमे भी शंख वजने लगे तो फिर इन मज़हवी दीवानोको कौन पूछे ?)

भारत-विभाजनके वाद एक मुसलमान साहित्यिकको शरणार्थी कैम्पसे पाकिस्तान भेजा जाने लगा तो उसने जानेसे कतई इन्कार कर दिया और जब न जानेका सवव पूछा तो वोला—"मुझे मेरे वतनमे अब रहनेको स्थान न मिले तो न सही, क़ब्रके लिए तो गज़भर ज़मीन मिलेगी! अपने वतनमे मैं इतने दिन जिया हूँ, तो मरने अब मैं कहाँ जाऊँगा ?" अब असरका एक शेअ़र सुनिए—

यहीं पै उ़म्र गुज़ारी, यहीं पै मरने दो।
तुम्हारे दरके सिवा और दर मैं क्या जानूँ ?

---

[1]नेता; [2]लक्षके मार्गमे; [3]भेद-भाव।

और जब विश्वस्त और परखे हुए साथियोंसे भी आये दिन वफ़ादारीके हलफ उठवाये जानेकी बात चलती रहती है तो 'असर' झल्लाकर कहते हैं—

ठुकराये जा रहे हैं ख़ुद अपने दयारमें।
और इसलिए कि भटकें न राहे-वफ़ासे हम॥

स्वतंत्र भारतमे रहे हुए मुसलमान एक घुटन-सी महसूस करते है। उसका आभास अगस्त १९५१ मे कहे गये 'असर'के इन दो शेअ़्रोमे मिलेगा।

गुलशनमें जब कहीं कोई जाए-अमाँ न हो।
फिर क्यों बहार अपनी नजरमें ख़िज़ाँ न हो?
वोह ताएरे-असीर कहाँ जाय क्या करे।
आज़ाद होके जिसको नसीब आशियाँ न हो॥

१९३९ में प्रकाशित 'असर'की ग़ज़लोंके ४८० पृष्ठके संकलन 'बहारां और इन्तिखावे असरिस्तानसे' और 'निगार', 'शाइर', 'माहेनौ' आदि पत्रोमे प्रकाशित अगस्त १९५१ तक कही गई गज़लोंके चन्द अशआ़र चुनकर दिये जा रहे है—

इस तरह शोर मचाती हुई आई है बहार।
बेड़ियाँ आप पहन लीं तेरे सौदाईने[1]॥

है इश्क जिन्हें, दिलका वोह कहना नहीं करते।
मर जाएँ मगर अर्ज़ेतमन्ना[2] नहीं करते॥

यूँ तड़प ऐ क़ल्बे-मुज़तर[3] यूँ निकल ऐ जाने-ज़ार[4]।
ख़ंजरे-क़ातिल सदा-ए-मरहबा[5] देने लगे॥

---

[1]प्रेमोन्मत्तने; [2]अभिलाषाप्रकट; [3]बेचैन दिल; [4]निर्बल आत्मा; [5]साधुवाद।

इक फूल है अन्देशा नहीं जिसको खिज़ाँका।
वोह ज़ख्म जिसे आपने दामनसे हवा दी॥

अपनी ही जुस्तजूमें[1] आवारा चारसू[2] हूँ।
जो मिट गया उभर कर, वोह नक़्शे-आरज़ू[3] हूँ॥

हुए जो शिकस्ता[4] ओ-मुन्तशिर[5] यह उन्हींसे ज़ीनते-दहर[6] है।
जो हैं आइने, वोह सजे हुए हैं दुकाने-आइना-साज़में॥

कभी इस तरह भी हो जलवागर कि गुमाँ हो तुझपै है तू वशर।
तुझे यूँ तो देखा हज़ार वार, इसी वज़्मगाहे-मजाज़में॥

है हरेक साँस रुकी हुई, है हरेक नब्ज़ थमी हुई।
यह कहाँका दर्द भरा हुआ था दिले-शिकस्ताके साज़में॥

जज़्व करले जो तजल्लीको[7] वोह दिल पैदाकर।
सहल है सीनेको दाग़ोसे चिराग़ाँ[8] करना॥

मेरे नियाज़ेइश्क़की[9] मजबूरियाँ न पूछ।
रोना है जिसको मनअ़ वोह चश्मे-पुरआव[10] हूँ॥

मेरी ज़वान और है मेरा वयान और।
है शरह[11] जिसको दर्द, वोह ग़मकी किताव हूँ॥

वरवाद कर चुके वोह, मैं वरवाद हो चुका।
अव क्या रहा है ? रोऊँ और उनको रुलाऊँ मैं॥

लाचुक नसीमे-सुवह[12] पयामे-विसाले-दोस्त[13]।
कवतक मिसाले-ग़मअ़ रगे-जाँ जलाऊँ मैं ?

---

[1]तलाशमे; [2]चारो तरफ, हर समय; [3]इच्छाओका चिह्न; [4]-[5]टूटे और विखरे हुए; [6]ससारकी शोभा; [7]प्रकाशको; [8]दीपावली; [9]विनयपूर्ण प्रेमकी; [10]अश्रुपूर्ण नेत्र; [11]भाष्य, टीका; [12]प्रात कालीन वायु; [13]प्रेयसी-मिलनका सदेश।

खुद मेरे जौके-असीरीने[1] मुझे रक्खा असीर।
उसने तो कैदे-मुहब्बतसे किया आज़ाद भी॥
किस तरह तड़पे जिसे यह डर लगा हो हमनशीं[2]!
दर्दमें शामिल न हो जाये किसीकी याद भी॥

शौक बढ़ता गया गुनाहोंका।
लज़्ज़ते-इन्फिआलने[3] मारा॥

ऐ दिलके आईनेमें छुपकर सँवरने वाले।
आँखें भी काश देखें, हुस्ने-तमाम तेरा॥

तरसी हुई निगाहें किस तरह तुझको देखें।
माना रगे-गुलू भी है इक मुकाम तेरा॥

जहाँ पलकोंके सायेमें हज़ारों फितने सोते थे।
वहीं फ़ितरतने चुपके-से निगाहे-शरमगीं[4] रख दी॥

विनाए-मस्जिदेनौ[5] इसलिए हुई वाइज़[6]!
वहाँसे फेरका रस्ता शराबख़ाना था॥

दिलका है रोना खेल नहीं है मुंहको कलेजा आने दो।
थमते ही थमते अश्क थमेंगे, नासेहको समझाने दो*॥

जहाँ हो दुरंगी बहारो-ख़िज़ांकी।
चमन वोह नहीं आशियानेके काबिल॥

नामावरको मैं क्या पता बतलाऊँ?
ग़ैरसे घर नहीं उनका कोई॥

---

[1]बन्दी होनेके चावने, [2]पड़ोसी, [3]पापोंकी शर्मके चस्केने, [4]शरमीली आँखें, [5]नवीन मस्जिदका निर्माण, [6]उपदेशक।

*थमते-थमते थमेंगे आँसू।—
रोना है कुछ हँसी नहीं है॥
—सम्भवतः मीरका शेअ़र है

पूछनेवाले दर्दे-पिनहांके।
अपने चेहरेका रंग भी देखा?

यादे-चमनकी जाये क्या? चैन क़फ़समें आये क्या?
हमसे छुटा जब आशियाँ दिन थे वही बहारके॥

बहरे-हस्तीसे सुबकबार गुजरना सीखो।
तुमको जीना नहीं आता है तो मरना सीखो॥

माजराए-शबेगम दिलको सँभालूँ तो कहूँ।
ठहरो-ठहरो मैं जरा होशमें आलूँ तो कहूँ॥

तासीर दर्देदिलमें या रब! कहाँकी भर दी।
उसने भी आज आखिर चुपके-से आह कर दी॥

आन-की-आन उनको देखा था।
जबसे थर्रा रही है नब्ज़े-निगाह॥

वोह कामकर, बुलन्द हो जिससे मजाके-जीस्त।
दिन जिंदगीके गिनते नहीं माहो-सालसे॥
(बहारांसे)

उभर न बहरे-जहाँमें[1] हुबाबके[2] मानिन्द।
जो तहनशीं[3] हुआ क़तरा दुरेयगाना[4] हुआ॥

भूलता ही नहीं वह नाजसे कहना तेरा—
"खैरसे इन दिनो कुछ कम तो है सौदा तेरा"॥

बेहोशियोंमें अहदेजवानी बसर हुआ।
पीरी[5] चली है उम्रे-रवाँके[6] सुरागमें॥

ग़म नहीं तो लज्जते-शादी नहीं।
बे-असीरी लुत्फे-आज़ादी नहीं॥

---

[1]संसार-सागरमे, [2]बुलबुलेकी, [3]दरियाके नीचे; [4]अनमोल मोती; [5]बुढापा; [6]गई हुई जिन्दगीके, बीते दिनोंके; [7]खोजमें।

महशरसे यूं चले हैं गुनहगारे जुर्मे-इश्क।
गोया उन्हींमें बँट गया जितना गुरूर था॥

दिलमें है दर्द, दर्दमें इक लज्जते-ख़लिश[1]।
आज़ारे-इश्कने[2] मुझे इन्सां बना दिया॥

हायरे तेरी जुस्तजूका[3] फरेब।
हर कदम पर गुमाने-मंज़िल[4] था॥

उसकी बेदादका[5] नहीं शिकवा।
मेरा ही शौक मेरा क़ातिल था॥

नज़अमें[6] जब हम सुनेंगे तेरी बातें प्यारकी।
दिल ठहरता जायगा और दम निकलता जायगा॥

शाहिदे-सुबहने[7] हँसकर जो ज़रा देख लिया।
कोहो-सेहरापै[8] फटा पड़ता है जोबन कैसा?

मिटे हैं किसपै किसीको गुमाँ[9] नहीं होता।
मज़ाके-इश्क हमारा अयाँ[10] नहीं होता॥

तुम्हीं हो रौनके-गुलशन, तुम्हीं हो रंगे-बहार।
मगर किसीको तुम्हारा गुमां नहीं होता॥

तुम आईनेकी तरफ़ गौरसे कभी देखो।
हमें जो मद्दे-नज़र[11] है बयां नहीं होता॥

बेताबियोंने आह गुनहगार कर दिया।
दिलको लगीसे उनको ख़बरदार कर दिया॥

मेरी इस आर्ज़ूने कि हो तर्के-आर्ज़ू।
जो काम सहल था उसे दुश्वार कर दिया॥

---

[1]चुभनका आनन्द; [2]प्रेम-रोगने; [3]खोजकी उत्सुकता, [4]लक्ष्यपर पहुँचनेका विश्वास, [5]जुल्मका, [6]मृत्यु-समयमें; [7]प्रातःकालरूपी सुन्दरीने; [8]पर्वतों-जगलोंपर, [9]शक; [10]प्रकट; [11]पसन्द है, इष्ट।

तुझसे कहते थे कि ऐ दिल! हिज्रमें[1] आँसू न पी।
क़तरा-क़तरा जमा होकर मौजज़न दरिया हुआ॥

मुझे हर ख़ाकके ज़र्रेपै यह लिक्खा नज़र आया—
"मुसाफ़िर हूँ अ़दमका और फ़ना है कारवाँ मेरा"॥

वफ़ा कैसी, नहीं मजबूर था वोह वअ़दा करने पर।
यही एहसान क्या कम है कि दिल तो रख लिया मेरा॥

नहाकर निखरना तेरा याद है।
पसीनेमें डूबा गुलाब आगया॥

उठे वादाकश झूमकर नअ़राज़न।
दमे-वअ़ज़[2] नामे-शराब आगया॥

मरनेका भी न सलीका आया।
यह तो दुश्वार कोई काम न था॥

ख़ुद लिपटती रही दुनिया उससे।
जिसको दुनियासे कोई काम न था॥

पूछते क्या हो कि रातें हिज्रकी क्योंकर कटीं?
ख़ुद मुझे एहसास अपने हालका मुश्किल हुआ॥

साँस भी ले सँभलके ऐ नादाँ!
सख़्त नाज़ुक है रिश्ता उल्फ़तका॥

ख़ूगरे-दर्द[3] हो अगर इन्साँ।
रंजमें भी मज़ा है राहतका[4]॥

शोख़ीसे उसने बातका लहजा बदल दिया।
इक़रार लबतक आते ही इनकार हो गया॥

---

[1]वियोगमे; [2]व्याख्यानके प्रसगमे, [3]दुखोंका आदी, [4]सुख-चैनका।

है उनका शौक बर्क़के[1] परदेमें मुज़्तरिब[2]।
मूसा समझ रहे हैं कि दीदार[3] हो गया॥

वअ़देके दिन गुज़र गये फिर भी हैं मुन्तज़िर[4]।
कुछ हमको इन्तज़ारका आज़ार[5] हो गया॥

हाय वोह दिल जिसके अरमाँ सर्फ़ेमातम[6] हो गये।
हाय वोह महफ़िल ग़मोंने जिसको बरहम[7] कर दिया॥

करवटें क्यों बदल रहे हैं हुज़ूर!
अभी आग़ाज़[8] है कहानीका॥

वफ़ाका सीखले तुमसे कोई सिला देना।
बजाय फ़ातिहा नक़्शे-लहद[9] मिटा देना॥

हर एक हसरते-मुर्दामें फिरसे जान आई।
ग़ज़ब था नज़अ़में काफ़िरका मुसकरा देना॥

किसीका हाय यह कहना 'असर'से वक़्ते-विदाअ़—
"जो हो सके तो हमें दिलसे तुम भुला देना"॥

ख़ुम ख़ाना-ए-निशात[10] हैं वोह सुर्ख़ अँखड़ियाँ।
अँगड़ाइयोंमें इत्र खिंचा है ख़ुमारका॥

पुरकैफ़ किस क़दर है सितमगरकी गुफ़्तगू।
साग़र छलक रहा है मए-ख़ुश गवारमें॥

चन्द किस्में जुनूँकी[11] हैं नासेह!
तुमको सौदाए-चश्ओ-पन्द[12] हुआ॥

---

[1]बिजलीके, [2]बेचैन, [3]दर्शन; [4]प्रतीक्षा करते हुए; [5]रोग; [6]शोक करनेमे नष्ट; [7]छिन्न-भिन्न; [8]प्रारम्भ; [9]कब्रका निशान, [10]आनन्दरूपी मदिरालय, [11]पागलपनकी, [12]भाषण-देने, नसीहत करनेकी सनक।

बेखुदी[1] परदादारे-ग़फ़लत[2] है।
ग़म उठानेका हौसला न रहा॥

आबले दिलके बहे यूँ फूटकर।
जिस तरह दरियामें उठ-उठकर हुबाब[3]॥

तुम जब उसे सुनोगे सर देरतक धुनोगे।
पुरदर्द इस कदर है, अफ़सानए-मुहब्बत॥

आह किससे कहें कि हम क्या थे?
सब यही देखते है कि क्या है हम॥

मौतमें ज़ीस्त[4] देखने वालो।
देख लो ज़ीस्तमें फ़ना[5] है हम॥

दमे-आखिर भी आप क्यों आये?
जाइए-जाइए खफा है हम॥

अब करमकी[6] भी दिलको ताब[7] नहीं।
किस तरह कुश्तए-जफा[8] है हम॥

सख्तियाँ झेलके तकमीले-मुहब्बत क्या खूब?
इश्कबाजी है 'असर' पेशएमजदूर नहीं॥

ताएरे-जाँको[9] परे परवाज है यह कैदे-तन।
हम लिये फिरते है अपने साथ ज़िंदाँ,[10] क्या करें?

उसकी रहमतको[11] हया आने लगी।
किस कदर आलूदए-तकसीर[12] हूँ॥

---

[1]तन्मयता, आत्म-विस्मृति, [2]गफलतोंका पर्दा, [3]बुलबुले; [4]ज़िन्दगी, [5]मृत्यु; [6]कृपाओंके; [7]सहनेकी शक्ति, [8]अत्याचारोंसे मिटे हुए; [9]जीवनरूपी परिन्देको; [10]शरीररूपी पिंजरा, [11]ईश्वरीय दयाको; [12]पापोंमे लथ-पथ ।

बिजली बनेंगे ख़ानए-सैयादके लिए।
तिनके बचे हुए जो मेरे आशियाँके हैं॥

बेरब्त होगई थी इबारत कहीं-कहीं।
काफ़िरने नक़्ल की वही ख़तके जवाबमें॥

पज़मुर्दा[1] होके फूल गिरा शाख़से तो क्या ?
वोह मौत है हसीन जो आये शबाबमें[2]॥

हंगामए-फ़िराक़में[3] थी दिलकी क्या बिसात।
इक आबला था फूट गया, इज़्तराबमें[4]×॥

कभी मौत कहती है अलहज़र[5], कभी दर्द कहता है रहम कर।
मैं वोह राह चलता हूँ पुरख़तर[6] कि जहाँ फ़नाका[7] गुज़र नहीं॥

ख़बर अपनी नहीं इबरतके[8] क़ाबिल रंगे-गुलशन है।
हँसी आती है फूलोंको जो ग़ुंचे मुसकराते हैं॥

रहा है साबिका[9] ग़मसे यहाँतक हमनशीं[10]! मुझको।
ख़ुशीके नामसे भी अश्क आँखोंमें भर आते हैं॥

मैं अब सिज्दे[11] करूँ, दिलको सँभालूँ या बढ़ूँ आगे।
नज़र आता है कोसोंसे किसीका आस्ताँ[12] मुझको॥

गुज़ारी उम्र सारी राज़े-हस्तीके[13] समझनेमें।
परस्तिश[14] तेरी करता, इतनी फ़ुरसत थी कहाँ मुझको ?

×दिलकी बिसात क्या थी निगाहे-जमालमें।
इक आईना था टूट गया देख-भालमें॥

—'सीमाब' अकबराबादी

[1]मुर्झाकर; [2]जवानीमें, [3]विरहके तूफानमें; [4]बेचैनीमें; [5]ख़ुदाकी पनाह, बचाओ, [6]संकटोंसे भरी हुई, [7]मृत्यु भी जहाँ चलते भयभीत हो, [8]सम्मोहित होने योग्य; [9]वास्ता; [10]पड़ोसी, मित्र, [11]साष्टांग प्रणाम; [12]ड्योढ़ी; [13]जीवन-भरके भेद, [14]उपासना।

वोह तड़पता नहीं कभी ज़ालिम !
जिसने भरपूर चोट खाई हो॥

इस सादगीपै जान मेरी क्यों फ़िदा न हो।
जब दिल दुखाके तू कहे—"अच्छा, ख़फ़ा न हो"॥

घुट-घुटके मर न जाये तो बतलाओ क्या करे।
वह बदनसीब जिसका कोई आसरा न हो॥

जिस दरपै मैं गया यह सदा आई—"दूर-दूर"।
ऐसा भी कोई तेरी नज़रसे गिरा न हो॥

क्या-क्या दुआएँ माँगते हैं सब मगर 'असर' !
अपनी यही दुआ है, कोई मुद्दआ[1] न हो॥

ऐ महवेशौक़[2] आये भी वोह और चले गये।
क्यों तूल दे रहा है अ़बस[3] इन्तज़ारको॥

अहले वतनपै यह भी गिराँ[4] हो न ऐ सबा[5] !
बर्बाद रहने दे मेरे मुश्ते-ग़ुबारको[6]॥

बूए-वफ़ा न फूटे कहीं, उनको ख़ौफ़ है।
फूलोंसे ढक रहे हैं, हमारे मज़ारको॥

रोइए यासपर[7] उस कुश्तएग़मको[8] कि जिसे।
ज़ौक़े-फ़रियाद[9] न हो, हसरते-बेदाद[10] न हो॥

क़ैसके नज़दीक लैला पर्द-ए-महमिलमें है।
कौन दीवानेको समझाये कि तेरे दिलमें है॥

---

[1]इच्छा; [2]दर्शनोकी उत्सुकतामे लीन; [3]व्यर्थ; [4]बोझ, भारी; [5]हवा; [6]मुट्ठीभर धूलको; [7]निराशापर; [8]दु:खोसे मिटे हुएपर; [9]न्याय पानेके लिए, पुकार करनेकी उत्कण्ठा; [10]ज़ुल्म-सहनकी पश्चात्ताप।

मैं अगर उससे कहूँ भी तो बताओ क्या कहूँ।
जब उसे मालूम है जो कुछ कि मेरे दिलमें है॥

उसकी रहमतने कहा—"जो माँगना हो माँगले"।
मेरी ग़ैरत बोल उठी "तू ही दिले-साइलमें[1] है"॥

मेरा हँसना है ज़ख़्मकी सूरत।
जो मुझे देखता है रोता है॥

दीदएगुल[2] ये सुबहको नमनाक[3]।
जो भी हँसता है बहुत रोता है॥

वोह लचक ऐसी कहाँसे लायेगी।
शाख़े-गुल कदसे तेरे शर्मायेगी॥

हम समझते थे कि उल्फ़त खेल है।
यह ख़बर क्या थी लहू रुलवायेगी॥

झोलियाँ भरती है क्यों बादे-सहर ?
फूल किसकी क़ब्रपर बरसायेगी ?

छोड़ दीजे मुझको मेरे हालपर।
जो गुज़रती है गुज़र ही जायेगी॥

उनसे बेताबीमें हम कहनेको सब कुछ कह गये।
दिलके टुकड़े होके लेकिन आँसुओंमें बह गये॥

ऐ हमीं! हम वाकिफ़े-आदाबे-मजलिस हैं मगर—
इस क़दर प्यार आ गया मुंह तेरा तकते रह गये॥

माना ख़िरामेनाज़[4] भी दिलकश है इक अदा।
हम तुमको देखते कि क़यामतको देखते॥

---

[1]भिक्षुकके हृदयमें, [2]फूलोंके नेत्र; [3]अश्रुपूर्ण, [4]प्रेयसीकी चाल।

उकता न जाते बादे-सहरकी जो छेड़से।
फूलोंमें छुपके तेरी नज़ाकतको देखते॥

मैं इधर चुप हूँ, वोह उधर चुप हैं।
इक तमाशा हुआ हया न हुई॥

उसकी रहमतको नाज़ हो जिसपर।
तुझसे ऐसी 'असर' ख़ता न हुई॥

क़ैसके[1] जज्ब-ए-उल्फ़तकी[2] ल्ताफ़तके निसार[3]।
पर्दा महमिलका[4] न उट्ठा कभी दीवानेसे॥

नौहाख्वाँ[5] रहते हैं रातोंको मेरी तुरबतपर।
नींद आ जाती थी जिनको मेरे अफ़सानेसे॥

क्या मुबारक है यह आलम नज़अ़का[6], आये हैं वोह।
फिर मुरत्तब हो निज़ामे-ज़िन्दगी मेरे लिए॥

फिर क़त्लगहमें आये हैं कुछ मुजरिमाने-इश्क़।
सरको बुलन्द सीनेको उरियाँ किये हुए॥

इतना तो सोच ज़ालिम! जौरोजफ़ासे पहले।
यह रस्म दोस्तीकी दुनियासे उठ न जाये॥

ज़ाहिद इधर खड़े हैं, गुनहगार उस तरफ़।
देखें तेरे करमका सज़ावार कौन है॥

फिर तुम्हें फ़ुर्सत न हो या मैं ही आपेमें न हूँ।
यह बताते जाओ मेरे हक़में क्या मंज़ूर है॥

ख़न्द-ए-गुलपर[7] बहुत सुबहे-चमनको नाज़ है।
हाँ ज़रा फिर मुसकरा कर मुझसे पर्दा कीजिए॥

---

[1]मजनूके; [2]प्रेम-भावकी सुरुचिपर; [3]न्योछावर, क़ुर्बान; [4]लैलीके महमिलका पर्दा, [5]शोक, सन्ताप, रोते हुए; [6]मृत्युका समय; [7]फूलकी मुसकानपर।

कोई इस गुलशने-हस्तीमें क्या महवेतमाशा हो।
चटकनेमें कलीके नज़अ़का आ़लम निकलता है॥

होश मेरे उड़ गये जब यह सुना—
"हश्र है, दीदार उनका आ़म है"॥

हिज्रमें राहत-सी राहत है नसीब।
दर्द दिलमें लबपै तेरा नाम है॥

अ़दमसे मंज़िले-हस्तीमें यूँ हम नातवाँ आये।
सबाके साथ जैसे बूएगुलका कारवाँ आये॥
इमामे-मस्जिदेजामअ़ शबे-आदीना[1] मैख़ाना।
कोई पूछे तो हज़रत आप रिन्दोंमें कहाँ आये॥
मैं अपना दर्दे-दिल कहता हूँ, वोह मुँह फेरे हँसते हैं।
ख़ुदा बन्दा यह कैसे दर्दे-दिलके क़द्रदाँ आये॥
वतन अफ़साना था जब हम असीराने-कुहन छूटे।
चमन वीराना था जब ढूँढते हम आशियाँ आये॥
ज़बाँ खुलते ही बस काफ़िरने यह कहकर ज़बाँ सीदी।
'असर' अच्छा न होगा, अब जो शिकवे दरमियाँ आये॥

यह महवियतका आ़लम है किसीसे भी मुख़ातिब हूँ।
ज़बांपर बेतहाशा आप ही का नाम आता है॥

तुम्हारी यादमें जीना, तुम्हींपर जान दे देना।
हमें कुछ काम आता है तो इतना काम आता है॥

अजलने गोरे-ग़रीबांकी[2] सिम्त[3] इशारा किया।
ज़मीन ढूंढता फिरता था मैं मकांके लिए।

---

[1]जुमेअ़रात, [2]क़ब्रिस्तानकी, [3]तरफ़।

ख़ुद-ब-ख़ुद दिलका दाग़ जलता है।
बे जलाये चिराग़ जलता है॥
दागे-दिल आज लौ नहीं देता।
कुछ बुझा-सा चिराग जलता है।
आहें भड़का रही हैं शोल-ए-इश्क़।
आँधियोंमें चिराग जलता है॥
ज़ुल्फ़ें बिखरी हुई हैं आ़रिज़पर।
बदलियोंमें चिराग जलता है।

बुतको अल्लाह बनाकर छोड़ा।
काम कुछ कर गये, करने वाले॥

तेरी मर्ज़ी हो जहाँ भेज दे ऐ दावरे-हश्र[1]!
मुझसे दुहराई न जायेंगी खतायें अपनी*॥
कोहो-सहरामें[2] जहाँ बैठके मैं रोया था।
उन मुकामोंसे सुना जाता है दरिया निकले॥

अदा है याद तेरे मुसकराके आनेकी।
और उसके बाद वोह दामन छुड़ाके जानेकी॥
जहाँपै रास्ता भूला है बार-हा ज़ाहिद।
वहींसे राह मुड़ी है शराबखानेकी॥

सिसकते रहे जाँ-ब-लब[3] कैसे-कैसे?
अ़यादतको[4] आते रहे आनेवाले॥

---

*मेरी रुसवाईका आ़लम दावरे-महशर न पूछ।
मैं भरी महफ़िलमें यह किस्सा सुना सकता नहीं॥
—'जोश' मलसियानी

[1]ईश्वर; [2]पर्वतों-जंगलोंमें; [3]मृत्यु-आसन्न; [4]मिज़ाजपुर्सीको, रोगीकी खबर लेनेवाले।

इधर आ कलेजेमें तुझको छुपालूँ।
खुद अपनी अदाओंसे शर्माने वाले॥

यह कहके उसने फिर आँसू न पूँछे।
"तुझे रोनेकी आदत पड़ गई है"॥

फ़नाऐ जिसकी विना[1] है वह है वका[2] मेरी।
यह इब्तदा[3] है तो क्या होगी इन्तहा[4] मेरी?

फिर उसके बाद वोह शर्माये और बहुत शर्माये।
गदा[5] समझके सुना तो किये सदा[6] मेरी॥

बुताने-संग दिलसे दिल लगाके।
मिला क्या तुझको ओ बन्दे खुदाके?
खयाले-जन्नत नाला, पासे-उल्फत।
मुसीबतमें पडा हूँ दिल लगाके॥

तुम्हारा हुस्न आराइश[7] तुम्हारी सादगी जेवर।
तुम्हें कोई जरूरत ही नहीं बनने-सँवरनेकी॥

यूँ गुजरते हो कभी गोया शनासाई[8] न थी।
दिल-नवाजीके[9] वोह सब अगले तरीके क्या हुए॥

मुझको अपनी खबर नहीं ऐ दोस्त!
हाय! किस वक़्तमें तू आया है॥

है तसव्वुरकी भी निराली शान।
जो है नादीदा[10] उसको पाया है॥

---

[1]मृत्यु ही जिसकी नींव है, [2]जिन्दगी, [3]प्रारम्भ, शुरुआत; [4]अन्त, [5]फ़कीर, [6]बोली, बात, [7]शृंगार, [8]जान-पहिचान; [9]सहृदयताके, [10]जो दिखाई न दे सके।

इसलिए देखता हूँ तेरी निगहकी गर्दिश।
देखना है मुझे दुनियाकी हक़ीक़त क्या है॥

अ़बस[1] दैरो-हरमका[2] अ़ज़्म[3] है क्या तुमको सौदा[4] है।
'असर' जिसकी तमन्ना है वह तेरे दिलमें रहता है॥

हसरतें दिलकी मुझे रो भी चुकीं देर हुई।
आप अब पूछते हैं "तेरी तमन्ना क्या है"?

किसकी निगाहें-लुत्फ़ने रोशन किया दिमाग़।
तफ़सीर[5] लिख रहा हूँ मैं अपने गुनाहकी॥

झोलियाँ भरती है क्यों बादेसहर।
फूल किसकी क़ब्रपर बरसायगी?

—इन्तेख़ावे असरिस्तानसे

वोह गुज़रा इधरसे जो बेगानावार[6]।
चिराग़ेलहद[7] झिलमलाने लगा॥

क्या हसरते-दीदार[8] है? हरबार यह समझा।
गोया कभी दीदार मयस्सर न हुआ था॥

जिन ख़यालातसे हो जाती है वहशत दूनी।
कुछ उन्हींसे दिले-दीवाना बहलते देखा॥
नज़रें उठीं और उठके झुकीं तमकनतके साथ।
गोया यही जवाब था मेरे सवालका॥

ऐसी तौबासे तो मैख़्वार ही रहना था 'असर'!
दिलपै इक हाथ है, इक हाथमें साग़र टूटा॥

---

[1]व्यर्थ; [2]मन्दिर-मस्जिदका; [3]इरादा; [4]उन्माद; [5]भाष्य, टीका; [6]अपरिचितोंकी तरह; [7]क़ब्रका दीपक; [8]देखनेकी लालसा।

तुमने पूछा इस तरह हाले-दिले खाना-खराब।
याद अब कुछ भी नहीं, अब तक बहुत कुछ याद था॥

यह कौन मुग़न्नी[1] था, यह किसका था फसाना।
कहते हैं धुआँ जुम्बिशे-मिज़राबसे[2] निकला॥

सैयादने छेड़ा वहीं अफसानए-गुलशन।
जब कस्द असीरोंने[3] किया तर्के-फुग़ाँका[4]॥

मुकद्दरने जो पहुँचाया भी उनके आस्तानेतक[5]।
यही दिल है तो हमको होश लिज्देका कहाँ होगा?

हमवारियेबफासे[6] उलझने लगा था दम।
खुश हूँ कि तुमने कस्द किया इम्तहानका॥

वोह ग़ौर बात-बातपै, वोह शकभरी नज़र।
या रब! न मुझमे साफ हो दिल बदगुमानका॥

चमन है, शाख़ेगुल है, आशियाँ है, फिर नहीं कुछ भी।
गज़ब है ताएरे-आज़ादका[7] बे दालोपर होना॥

वह मेरा न कहनेमें कह जाना सब कुछ।
वह उनका अचानक इधर देख लेना॥

समझ तो अर्ज़े-तमन्नाको मसलहत हमदम[8]!
ख़ामोश रहनेसे वोह और बदगुमाँ होता॥

जहाँकी हर इक शै है, फानी[9] मगर—
बनानेमें क्या-क्या तकल्लुफ किया॥

---

[1]गायक; [2]सितार बजानेका वह तार जो वादक उँगलीमे लगाये रहते हैं; [3]बन्दियोंने; [4]आह न करनेका; [5]चौखटतक, [6]निरन्तरकी भलाईसे; [7]स्वतन्त्र पक्षीका; [8]मित्र; [9]नष्ट होनेवाली।

हरइक रहगुज़रमें है सरगोशियाँ।
ख़ुदा जाने किसपर सितम हो गया?

निगाहे-शौक लगातार न यूँ देखे जा।
हो गये सुर्ख़ वोह लबहाये-मै आलूद[1] बहुत॥

रहे दाग होकर, बहे ख़ून होकर।
'असर' है वह दिल कामयाबे-मुहब्बत॥

कोई दिलपर हाथ रखकर उठ गया।
हाथ अब दिलसे उठाऊँ किस तरह॥

भूलने वालेसे कोई पूछता।
मैं तुझे दिलसे भुलाऊँ किस तरह?

आज कुछ मेहर्बान है सैयाद।
क्या नशेमन भी हो गया बर्बाद?

हर साँस एक ताज़ा जराहतका है पयाम।
नश्तर बनी हुई है रगे-जाँ तेरे बग़ैर॥

सूरते-मौज हो सरगर्मे-सफ़र।
साहिल आ जाये तो कतराके गुज़र॥

थे जो ख़फ़ा, है वोह ख़फ़ा आजतक।
क्यों है ख़फ़ा? यह न खुला आजतक॥

उसने किस लुत्फ़से पूछा कि 'असर' कैसे हो?
बेख़ुदीका हो बुरा, कह दिया "कुछ याद नहीं"॥

---

[1] मदिरासे तर ओठ।

पूछनेवाले तूने पूछा, लुत्फ़ेकरम, एहसान किया।
लबपर आये हर्फ़-तमन्ना, इश्कके यह आदाब नहीं॥

अहले दिलसे पूछो 'असर' क्या लज़्ज़त है नाकामीमें।
हाथ उठा बैठे मतलबसे, मतलब गो नायाब नहीं॥

तासीर[1] पेशे-रू थी बाबे-कुबूल[2] वा[3] था।
माँगी गई न मुझसे माँगी हुई दुआएँ॥

अश्क मिज़गाँपै रह गया होगा।
मेरे ग़म-ख़ानेमें चिराग़ कहाँ?

रास्ते बन्द हैं, किधर जायें?
तुम हो पेशे-नज़र, किधर जायें॥

'असर' तेरे कूचेसे बच-बचके निकला।
अभी होश इतना है दीवानगीमें॥

कौन 'असर' की नज़रमें समाये।
देखी हैं उसने तुम्हारी आँखें॥

हवामें कुछ धुआँ-सा उठके फ़ौरन फैल जाता है।
कफ़समें याद जब आता है मेरा आशियाँ मुझको॥

ख़ूबिएनाज़[4] तो देखो कि उन्होंने न सुना।
जिसने अफ़साना बनाया मेरे अफ़सानेको॥

इसी उलझनमें उन्हें लिखा न अब तक नामा[5]।
कोई मज़मून शिकायतका रकम[6] हो कि न हो॥

---

[1]हमारे इश्कका प्रभाव उनके समक्ष था, [2-3]स्वीकृतिका पृष्ठ खुला हुआ था, [4]उनके गर्वकी ख़ूबी; [5]पत्र, [6]लिखना।

हाल पूछा था तो इस तरह न पूछा होता।
रहगई अर्ज़े-तमन्नाकी तमन्ना मुझको॥

खोये हुए-से रहना दिनको, रोते फिरना रातोंको।
जो है आ़किल वोह क्या समझे, इ़श्क-ओ-जुनूँकी बातोंको॥

फ़ानूसके पर्देमें लौ शमअ़की थर्राई।
अल्लाहरे अन्दाज़े-जाँ-सोज़िये-परवाना[1]॥

जुनूँके जोशमें अपनी बलाएँ लेता है।
कहा जो नाज़से तुमने 'असर' को 'दीवाना'॥

तकिया कलाम ही सही, इ़श्कसे मर रहा हूँ मैं।
क्यों कहो बात-बातपर "देखभला-सा नाम है"॥

कासिद! पयाम उनका न कुछ देर अभी सुना।
रहने दे महवे-लज़्ज़ते-ज़ौके-ख़बर[2] मुझे॥

जानता हूँ कि नशेमन नहीं बाकी सैयाद!
फिर भी इक लुत्फ़े-ख़लिश[3] हसरतेपरवाज़में[4] है॥

इक रोज़ दिलमें तेरी मुहब्बत थी जागुज़ीं[5]।
अब-तू-ही तू है तेरी मुहब्बत नहीं रही॥

मैं क्या सुनाऊँ दर्दे-मुहब्बतका माजरा।
हद हो गई कि तुमसे शिकायत नहीं रही॥

---

[1]पतगेके जल-मरनेका अन्दाज़; [2]प्रेयसीके संदेश आनेके आनन्दमे लीन; [3]चुभनका आनद; [4]उड़नेकी अभिलाषामें; [5]आसीन।

हुआ तो हश्रके दिन उनका सामना लेकिन।
हुजूमे-आममें क्या अर्ज़-मुद्दआ करते॥
वोह बेवफा है कि हम बेवफा, खुदा जाने।
हयात खत्म है और उनकी आमद-आमद है॥

दूरसे गाह-गाह एक निगाह।
उसको भी मुद्दते मदीद हुई॥
दिले-नामदीदा कांप-कांप उठा।
यासके[1] बाद जब उमीद हुई॥

कौन कहता है कि मौत अंजाम होना चाहिए।
जिंदगीका-जिंदगी पैग़ाम होना चाहिए॥

आग़ाज़े-मुहब्बतकी लज़्ज़त, अंजाममें पाना मुश्किल है।
जब दिलको मसोसे रहते थे, अब हाथ लगाना मुश्किल है॥

तेरी नजर नहीं होती हरीफ़[2] शोख़ीकी।
नज़रसे आज यह किसको गिरा दिया तूने?

खता मुआफ मेरी बेकसीपै करके नज़र।
कुछ और हौसलएग़म बढ़ा दिया तूने॥

हाय उनकी शोखियां और शौककी रुसवाइयां।
देखते थे वोह हमें हम उनको क्योंकर देखते॥
उनके आनेकी बंधी थी आस जबतक हमनशीं[3]?
सुबह हो जाती थी अक्सर जानिबेदर[4] देखते॥

ईमां ग़लत, उसूल ग़लत, इद्दआ[5] ग़लत।
इन्सांकी दिलदेही[6] अगर इन्सां न कर सके॥

---

[1]निराशाके, [2]प्रतिद्वंद्वी, [3]एक ही जगह बैठने वाले पड़ोसी; [4]दरवाज़ेकी तरफ़; [5]दावा; [6]हृदयको सान्त्वना।

मिज़गाँसे[1] यूँ टपक पड़ा इक अश्के-ख़ूँ 'असर' !
पटका हो जैसे जाम किसी बादाख़्वारने[2] ॥

कुछ देर फ़िक्र आ़लमे-बालाकी छोड़ दे।
इस अंजुमनका[3] राज़[4] इसी अंजुमनमें है ॥

नज़र उस हुस्नेताबाँतक[5] ब-आसानी नहीं जाती।
मगर जाकर पलटती है तो पहचानी नहीं जाती ॥
हुई मुद्दत कि उसने नाज़से दामनको झटका था।
अभीतक नौजअ़ेगुलकी[6] परेशानी नहीं जाती ॥

कुछ और बढ़ गई है परीशाँ निगाहियाँ।
दमभर जो तेरे ग़मसे तबीअ़त बहल गई ॥

अल्लाहरी बदगुमानी[7] देता हूँ जब दुआ़एँ।
कहता है चुपके-चुपके "इसमें भी कुछ दगा है" ॥
यह भीगी रात और यह बरसातकी हवाएँ।
जितना भुला रहा हूँ, वह याद आ रहा है ॥

न पूछ सादगिये-शौक, मान जाता हूँ—
यह जानते हुए बअ़दा फ़क़त बहाना है ॥
चल गया उस निगाहका जादू।
कह गये दिलकी बात क्या कहिए ॥
जबतक उसको बातका मैं दूँ जवाब।
इतने अ़र्सेमें क़यामत हो गई ॥
याद करले भूलनेवाले मेरे।
अब तो बिछुड़े एक मुद्दत हो गई ॥

---

[1] पलकोंके बालोंसे; [2] शराबीने; [3] महफ़िलका, [4] भेद, [5] चन्द्रमुखीतक; [6] दुखी फूलोंकी; [7] अविश्वसनीयता।

न जाने बात यह क्या है, तुम्हें जिस दिनसे देखा है।
मेरी नज़रोमें दुनियाभर हसीं मालूम होती है॥

अपनी लज़्ज़तमें गुम हुए नग़मे[1]।
अब ख़मोशी सुखनसे[2] बेहतर है॥

—निगार जनवरी १९४१ ई०

यह भी नसीब! माइले-पुरसिश[3] वोह जब हुए।
जो मेरा मुद्दआ था, मुझीपर अयाँ[4] न था॥

हंगामए-हस्तीकी[5] बस इतनी हक़ीक़त थी।
इक मौज थी जो उठकर फिर मिल गई दरियासे॥

हज़ार हुस्न थे काफ़िरकी सादगीमें निहाँ।
न इश्वा[6] था, न करिश्मा, फ़क़त जवानी थी॥

न देखनेकी तरह हमने ज़िंदगी देखी।
चिराग़ बुझने लगा जब तो रोशनी देखी॥

मुद्दआ पूछनेवाले! तेरी बातोंके निसार।
अब वोह आलम है कि हसरत है न अरमाँ कोई॥

ऐसे भी लम्हे गुज़रे हैं, हैरते-जमालपर।
जलवा नज़रके सामने दिलको मगर यक़ीं नहीं॥

रहमपर ग़ैरके जीना कैसा?
ज़िंदगीका यह क़रीना कैसा?

नाख़ुदाका[7] कभी एहसान उठाया न गया।
मैं हरइक मौजे-बलाख़ेज़को[8] साहिल[9] समझा॥

---

[1]संगीत, [2]वार्तालापसे, [3]दिलका हाल जाननेको उत्सुक, [4]प्रकट, [5]जिन्दगीके शोर-ग़ोरको; [6]फरेब, रूपका अभिमान, [7]मल्लाहका, [8]भयकर लहरको, [9]किनारा।

2073

मजलिसे-वअ़ज़से[1] इक रिन्द[2] यह कहता उट्ठा—
"काफ़िर अच्छे हैं दिलआज़ार मुसलमानोंसे ।।"

मज़ाके-इश्क़ हो कामिल तो सूरते-शबनम ।
कनारे-गुलमें रहे और पाकबाज़ रहे ।।
'असर' तेरे कुर्बान, दिल लेनेवाले ।
फिर एक बार कह दे—"किसीका इजारा" ।।

अब आये बहार या न आये ।
आँखोंसे लहू टपक रहा है ।।

बहम[3] सर-गोशियाँ[4] होने लगीं तीमारदारोंमें[5] ।
तुम अपने घर सिधारो अब यहाँ कुछ और सामाँ है ।।
—शाइर जनवरी १९५० ई०

हम अपने हाले-परेशाँपे मुसकराये थे ।
ज़माना हो गया ऐसे भी मुसकराये हुए ।।

ज़बाँपे हर्फ़े-तमन्ना 'असर' न आया था ।
कि वोह निगाह फिरी, क्यों फिरी ? नहीं मालूम ।।
चमनवालो ! चमनका तुमको नज़्ज़ारा मुबारक हो ।
घुटा है मेरी आँखोंमें नशेमनका धुआँ अबतक ।।
पलकतक अश्क आता था, मगर जबसे नहीं आया ।
नज़रमें एक बिजली कौंदती मालूम देती है ।।

वोह मग़रूर अफ़सोस इतना न समझा ।
तमन्ना है इक शै अलग इल्तेजासे[6] ।।

---

[1]मौलवीका व्याख्यान सुनकर; [2]शराबी; [3]परस्पर; [4]कानाफूसी; [5]परिचर्या करनेवालोंमे; [6]प्रार्थनासे ।

वोह आये हैं पुरसिशको ऐ नामुरादी !
बहरहाल अब मुसकराना पड़ेगा ॥

इधरसे आज वह गुजरे तो मुंह फेरे हुए गुजरे।
अब उनसे भी हमारी बेकसी देखी नहीं जाती ॥

काश ! न कहते मुद्दआ खाके निगाहका फरेब।
आस थी इक बँधी हुई वह भी रही-सही गई ॥

बहाना मिल न जाये बिजलियोंको टूट पड़नेका।
कलेजा कांपता है आशियांको आशियां कहते ॥

किससे कहिए और क्या कहिए सुननेवाला कोई नहीं।
कुछ घुट-घुटकर देख लिया कुछ शोर मचाकर देखेंगे ॥

हरचन्द उसको मुन्फइले-जौर कर दिया।
दिलपर जो गुजरी बाद अजां कुछ न पूछिए ॥

—माहे-नौ फरवरी १९५१ ई०

ला चुक नसीमे-सुब्ह पयामे-विसाले-दोस्त।
कबतक मिसाले-शमअ़ रगे-जां जलाऊँ मैं ?

२७ फरवरी १९५२ ई०

सैयद रियाज़अहमद 'रियाज' लखनऊके समीप खैराबाद ज़िला सीतापुरमे १८५३ ई० मे उत्पन्न हुए। आपके पिता सैयद तुफैलअहमद पहले गोरखपुरमे कोर्ट इन्सपेक्टर, बादमे आगरेके शहर कोतवाल रहे।

रियाज़ भी पहले-पहल पुलिस-विभागमे ही गये, किन्तु आपकी साहित्यिक रुचिने वहाँ अधिक नही रहने दिया और १८७२ ई० में त्यागपत्र देकर साहित्यिक क्षेत्रमे उतर पडे। १६ वर्षकी पूरी तरह उम्र हो भी नही पाई थी कि गोरखपुरसे 'रियाजुल' अखबारका संपादन एव प्रकाशन करने लगे। थोडे ही अर्सेके बाद 'तारबर्की' दैनिक पत्र भी निकालने लगे। १८७६ ई० मे शाइरी सबधी 'गुलकदए-रियाज' का प्रकाशन प्रारंभ कर दिया। लोग आपके गद्यके काफी प्रशसक थे। बहुत-से तो केवल आपका संपादकीय पढ़नेको ही अखबार लेते थे।

रियाजको कमसिनीसे ही शाइरीका शौक हो गया था। पहले आप 'असीर'से मशविरये-सुखन लेते थे, किन्तु 'असीर' वृद्ध हो जानेके कारण शिष्योकी गज़लोका सशोधन पूरी तवज्जुहमे नही कर पाते थे। अत. उन्होने अपने सभी शिष्य, अपने प्रधान शिष्य 'अमीर' मीनाईके सुपुर्द कर दिये थे। 'अमीर' मीनाई उन दिनो ख्यातिके शिखरको छू रहे थे। तभीसे 'रियाज़' 'अमीर' मीनाईके शिष्य होकर उनका हृदयसे कलमा पढने लगे।

१९ वीं शताब्दीके इन अंतिम दिनोंमें जब कि चमने-उर्दूमें मिर्ज़ा 'दाग', मुंशी 'अमीर' मीनाई, और 'जलालकी शाइरीका तूती बोल रहा था, 'रियाज़' भी अपने उस्तादके जीवनकालमें ही ख्यातिकी सीढ़ियोंपर पाँव रखने लगे थे।

१८५७ के विप्लवके बाद दिल्ली-लखनऊकी सल्तनतें नष्ट हो चुकी थीं। प्राय सभी उच्चकोटिके राज्याश्रित कलाकारोंको रामपुरके तत्कालीन गुणज्ञ नवाबने अपने यहाँ बुला लिया था। मुनीर, उरूज, बहर, आगा, क़लक, अमीर मीनाई, जलाल, दाग—जैसे ख्यातिप्राप्त शाइर रामपुरकी रौनक बढा रहे थे। कलापारखी नवाबने 'रियाज़' को भी रामपुर बुलाकर पुरस्कृत किया, और स्थायी रूपसे रामपुरमें ही रखनेकी अभिलाषा प्रकट की, किन्तु रियाज़की स्वतन्त्र और स्वाभिमानी प्रकृतिने वहाँ रहना उचित नहीं समझा। यहाँतक कि नवाब रामपुरने दो बार अपने साहबज़ादेको रियाज़को लखनऊमें लिवा लानेको भेजा और तीसरी बार राजा नौशादअलीद्वारा प्रेरणा की, किन्तु 'रियाज़' फिर भी रामपुर नहीं जा सके। रामपुर-नवाबके अतिरिक्त नवाब-हैदराबाद और उनके प्रधान मन्त्री राजा किशनप्रसाद 'शाद' ने भी रियाज़को हैदराबाद बसनेके लिए काफ़ी ज़ोर दिया, परन्तु आप वहाँ भी नहीं गये।

बचपनसे १९०८ तक आप अधिकतर गोरखपुरमें रहे। खैराबाद बहुत कम रहे। मरते दमतक गोरखपुर नहीं छोड़ना चाहते थे, परन्तु भवितव्यको कौन टाल सकता है? महाराजा महमूदाबादके प्रेमाग्रहको आप नहीं टाल सके, और १९०८ ई० में आपको लखनऊ चला आना पड़ा। गोरखपुरसे आपको कितना प्रेम था, उसको छोड़ते समय जो व्यथा पहुँची, उसे यूँ व्यक्त किया है—

जवानी जिसमें खोई है वोह गलियाँ याद आती हैं।
बड़ी हसरतसे लबपर ज़िक्रे-गोरखपूर आता है॥

'रियाज़' थी जो मुकद्दरमें वाज़गश्तेशबाब।
जवान होनेको पीरीमें लखनऊ आये॥

'रियाज़' अपने उस्ताद 'अमीर' मीनाईको अत्यत आदर और श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे। अपने दीवानमे कई स्थलोपर मुक्त कठसे उस्तादका गुणगान किया है—

मस्ते-मीना हूँ, पिया है मैने,
जाम 'अमीर' अहमद मीनाईका॥

जब कि वे आस्माने-शाइरीपै चमक रहे थे, और शाइरीका बहुत अच्छा अभ्यास हो गया था, तब भी उस्तादको बिना दिखाये न कही कलाम पढते थे और न छपने भेजते थे। उस्तादके होते हुए कलाम न दिखायें, यह बे-अदबी रियाज़से मुम्किन ही नही थी। और यही कारण था कि उस्ताद भी उनका कलाम बहुत ध्यानपूर्वक मनसे सशोधन करते थे; और उन्हे बहुत अधिक स्नेह करते थे[1]।

उस्तादकी मृत्युसे रियाज़को इतना सदमा पहुँचा कि आपने आम मुशाइरोंमे ग़ज़ल पढनेकी कसम खा ली, और मृत्यु पर्यंत इस कसमको निभाया।

महाराजा महमूदाबादने एक मर्तबा कहा—"रियाज! इस वक्त 'अमीर' अगर ज़िन्दा होते तो तुम पर फख्र (अभिमान) करते।"

रियाज़ने अर्ज़ की—"ऐसा न फर्माइये, वे उस्ताद थे।"

महाराजा यह सुनकर भी अपनी रायपर कायम रहे तो रियाज़ने अपना यह शेअर—

---

[1]रियाज़का अमीर मीनाई कितना खयाल रखते थे, उनकी कैसी-कैसी जिदोको पूरा करते थे, यह शेरो-सुख़न प्रथम भागमे अमीर मीनाईके परिचयमें दिया जा चुका है।

नसीम आई है शमले-मज़ार गुल करने।
वोह उसके आनेसे पहले ही जल बुझी होगी॥

सुनाकर कहा—"उस्तादने सिर्फ एक लफ़्ज़ बढाकर ज़मीनको आस्मान कर दिया'—

नसीम अब आई है, शमले-मज़ार गुल करने।
वोह उसके आनेसे पहले ही जल बुझी होगी[1]॥

'रियाज़' केवल अपने उस्तादके ही भक्त न थे, उनके परिवारसे भी आत्मीयताका सबध रखते थे। 'अमीर' मीनाईके पुत्र 'अख़्तर' मीनाई लिखते है—"हम लोगोंमे उनका जो तअल्लुक था, वोह अज़ीज़ोंसे बढकर हक़ीकी भाइयोंका-सा था और अब तो हकीकी भाइयोमें भी ऐसी मुहब्बत कम होती है। उनकी रिहलत (मृत्यु)से मुहब्बत और ख़ुलूसका एक मुजस्सिम पैकर (स्नेह-सभ्यताका मूर्तमान रूप) उठ गया"।[2]

'रियाज़' नम्र, मिलन्सार खुशमिज़ाज शाइर थे। तबीअत रगीन पाई थी। फ़र्माया है—

वाह क्या रग है क्या ख़ूब तबीअत है 'रियाज़'!
हो ज़मीं कोई तुम्हें फूलते-फलते देखा॥

मुश्किल-से-मुश्किल ज़मीनमे कई-कई गज़ल कहते थे। 'अख़्तर' मीनाई आँखो देखी घटना बयान करते हुए लिखते है—"अक्सर ऐसा हुआ है कि उनको एक ही तरहमे कई-कई गज़ले कहनी पडी। एक गज़ल कही, जिसने उसकी तारीफ की उसको देदी। अपने लिए दूसरी कही, वह भी किसीने माँग ली। लेकिन क्या मजाल कि उनके तेवरपर ज़रा भी मैल आया हो। हमेशा यही कहकर टाल दिया कि "ऊँह, क्या है? और कह लेगे।[3]"

---

[1]मयख़ानए-रियाज़ पृ० ८१, [2]रियाज़े-रिज़वाँ पेशे-लफ़्ज़ पृ० ५, [3]रियाज़े-रिज़वाँ, पेशे-लफ़्ज़ पृ० ५।

'रियाज़' पर शवावका रग हमेशा छाया रहा। वुढापा भी शवावकी वाते करते गुज़रा और ८१ वर्ष की आयुमे मरते समयतक वे रौनके-महफिल वने रहे।

वही शवावकी वातें, वही शवावका रंग।
तुझे 'रियाज़' वुढ़ापेमें भी जवाँ देखा॥

अ़ल्लामा नियाज़ फतहपुरी फर्माते है—"रियाजको मैंने उस ज़मानेमे देखा, जव वोह ज़ोअ़फ-ओ-कुहूलत (वृद्धावस्था और दुर्वलता) के दौरसे गुजर रहे थे। वावजूद इसके कि ज़माना म्वाफिक न था, हालातने सख़्त दिलगीर वना रखा था, हुजूमे अफकार (चिन्ताओके समूह) ने चारो तरफसे घेर लिया था, लेकिन 'रियाज' वावजूद—सरापा गमोअलम (दु.ख-व्यथासे ओत-प्रोत) होनेके दूसरोके लिए यक्सर वहारे-शगुफ्तगी (खिले हुए उद्यान) थे। आप ख्वाह कितने ही मगमूम-ओ-मलूल (चिंतित-दु.खी) क्यो न हो, लेकिन यह मुम्किन नही कि 'रियाज़' आपको मिल जाये, और थोडी देरके लिए आप किसी और आलम (दुनिया) मे न पहुँच जाये। उनकी दिलकश-ओ-दिलनशीं (मनोरजक एव हृदयस्पर्शी) गुफ़्तगू, उनका अन्दाज़े-वयान, लतीफ वजला सजी (कोमल हास्य) और सवसे वढ़कर उनका खुलूस (सम्य-स्नेह-व्यवहार)—यह मालूम होता था कि इन्सान किसी ऐसी फज़ा (वातारवण) मे पहुँच गया है, जहाँ फिरदौस (स्वर्ग) की हवा है, कौसर-ओ-सवीलकी रवानी (जन्नतमे वहनेवाली नहरोका प्रवाह) है। वच्चोके लिए उनका वजूद गहवारा-ए-इस्तराहत (सुख-चैनका पालना) जवानोंके लिए उनकी हस्ती दास्ताने-हुस्नो-इश्क और जईफो (वृद्धो) के लिए उनकी ज़ात एक विरादराना आगोश थी। यह मुम्किन नही कि कोई शख़्स रियाज़से मिले, और अपने ज़ौक (शौक) को उनके पाससे ना-आसूदा वापिस लाये।"[1]

---

[1]रियाजे-रिज़वाँ, ऐतराफ़ात पृ० ४२।

अपनी इस जिन्दादिलीके बारेमे स्वय भी कहा है—

जिस अंजुमनमें बैठ गया रौनक आ गई।
कुछ आदमी 'रियाज़' अजब दिल्लगीका था॥

आपकी जिंदादिलीके दो नमूने मुलाहिज़ा हो—

१—दिल्ली दरबारके अवसरपर अपने एक दोस्त निज़ामके साथ घूमते-फिरते रियाज़ एक रईससे भी मिलने चले गये। अब आगेकी कहानी स्वय रियाज़ साहबकी ज़बानी सुनिए— 'दिनमे सिवा नाश्तेके कुछ खानेका इत्तिफाक नही हुआ था। मिलकर जल्द वापिस होनेका कस्द था। ८ बजे शब (रात्रि) को वापिसीकी इजाजत चाही, मगर फर्शपर दस्तरख्वान बिछ चुका था। पहले मुझसे भी खानेका इसरार किया गया, मगर मैंने मआज़िरत की (नम्रतापूर्वक इन्कार कर दिया)। जब निज़ाममे कहा गया तो वे बेतकल्लुफ दस्तरख्वानपर नजर आये (भोजनपर डट गये)। मेरी तरफ मुडकर भी न देखा कि मैं इशारेसे कुछ काम लेता। मेरे लिए सब्रके सिवा चारा क्या था। खानेके साथ सुर्ख़-सब्ज मुख्तलिफ (भिन्न-भिन्न) रगकी सदरासी शीरीनी (मिठाइयाँ) भी थी। निज़ामने इनके लिए भी इशारा न किया। दस्तरख्वान खत्म हुआ तो ख्वाबगाह (शयनागार) के अन्दर मेज़ोकी तरफ तश्तरियाँ जाती नजर पडी। कुछ देरके बाद मैंने इजाजत चाही। मेजबानने फर्माया—"शहर बहुत दूर है, रात ज्यादा हो गई है, वापिस नही जा सकते।" मैं कुछ कहने भी न पाया था कि निज़ामने मजबूर कर दिया। ख्वाबगाहमें सामाने-इस्तराहत (शयनागारमें आरामदेह बिछौना) हो गया। सब हज़रात आराम फर्माने लगे, मैं करवटें बदलने लगा। रोशनी कम करदी गई थी। मुझे कुछ सहारा था तो रंगीन शीरनीकी तश्तरियोका। जब हर तरफसे सफीरेख्वाब (खर्राटे) बुलन्द हुई, मैं उठा और दबे पांव मेजके करीब पहुँचकर हाथ बढाया। उसीका महसूस होना था कि वह मुंहके अन्दर पहुँच गई। मैं चाहता यह था कि ज़बानपर पहुँचने-से पहले हल्कमे उतर जाय। मगर वोह कम्बख्त सांपके मुंहकी छछून्दर

बन गई। न उगलनेकी न निगलनेकी। यह रंगीन शीरनीकी डली न थी, साबुनकी बट्टी थी। मेरी मुसीबतका पूरा लुत्फ उठाना हो तो कुछ देरके लिए साबुनकी टिकिया मुँहमे रखकर मुझे ममनून (आभारी) कीजिए। रूमालसे साफ़ होकर वह चीज़ वही गई, जहाँसे उठाई गई थी। पानीकी तलाशमे किसीकी आँख खुल जानेका अन्देशा था। रूमालकी कारफरमाई मुँहके अन्दर भी रही। हम इस आसानीसे पलगतक न पहुँच सके, जिस तरह वह चीज़ मुँहतक पहुँची थी। अब साबुन अपनी जगहपर था, मगर उसकी लज्जत ज़बानपर। सुबह चाय और बिस्कुट सामने आये। मैंने दो-चार घूट पीकर बिस्कुट उठाकर इतने ज्यादा पियालीमे डाले कि मेज़बानकी मेरी तरफ तवज्जह हो गई। उन्होने दूसरी पियाली बढ़ाकर कहा—"अब बिस्कुट इसमे डाले जाएँ।" निजामको हँसी आगई, जो मअ़नीखेज़ थी। ब-इस्तफसार उन्होने कहा—"आप तमाम दिन भूखे रहे थे, फिर भी शबको खानेमें तकल्लुफ किया, वापिसीका भी सहारा टूटा। अब चायमे तकल्लुफ रुख़सत हो गया।" मैं दिलमें ख़ुश था कि ख़ुदाने साबुनके वाकेअ़ेका पर्दा रख लिया।[1]"

२—ख़्वाजा फरीदुद्दीन उर्फ फद्दन साहब 'रियाज़' के बचपनके दोस्त थे। १०-१५ वर्षके बाद रियाज़ लखनऊ आये तो उनसे मिलने गये। इतनी मुद्दतके बाद सूरतमें फर्क हो ही जाता है। कुछ इस वजहसे और कुछ काममें मसरूफ होनेकी वजहसे ख़्वाजा साहबने 'रियाज़' को नही पहचाना तो फ़ौरन उन्हें एक शरारत सूझी। अदबसे सलाम करके दूर एक मूँढेपर बैठ गये। मगरिबका वक़्त था। काम ज़ियादा था, इसलिए ख़्वाजा साहब परेशान थे। उनकी तरफ मुख़ातिब न हो सके। इतना वक़्त रियाज़को मिला तो हज़रतने पूरी स्कीम तैयार कर ली। अब जो ख़्वाजा साहब मुख़ातिब हुए और पूछा आप कहाँसे तशरीफ लाये हैं तो हज़रत रियाज़ने कहा—

---

[1] मयख़ानये-रियाज़ पृ० १२१-१२३।

"हुज़ूर ! मैं शैख़ असग़रअलीके कारख़ानेसे आया हूँ, आपके यहाँ कुछ इत्र और तेल आया था उसके १४।।।) बाकी हैं।"

ख़्वाजा साहब हिसाब-किताब और लेन-देनके साफ आदमी थे। सुनकर बरहम (कुपित) हो गये। 'रियाज़' उनकी इस आदतको अच्छी तरह जानते थे।

ख़्वाजा बोले—"कैसा रुपया ? मैंने आजतक किसी जगहसे कोई चीज़ कर्ज़ नही मँगाई है।"

रियाज़—"मैं क्या जानूँ शैख़ साहब झूठ कहते होंगे।" शैख़ असगर-अली भी ख़्वाजाके गहरे दोस्त थे। उनकी शानमें यह कलमा न सुन सके। पूछा—"यह तो बताइए आप है कौन ?"

रियाज़—"एक दफा तो अर्ज़ कर चुका हूँ, कहिए तो काबेकी तरफ हाथ उठाकर कहूँ। कुरान पाकपर हाथ रखके कहूँ।"

यह जवाब सुनकर ख़्वाजा साहब आग हो गये। कहा—"तुम बडे गुस्ताख़ आदमी मालूम होते हो।"

रियाज़—"बजा है, चीज़ लेके रुपया न दें और जब तकाज़ा करने आदमी आये, तो उसको गुस्ताख़ बतायें।"

यह तू-तू मैं-मैं हो ही रही थी कि हादीअलीख़ाँ आ गये। यह भी इन दोनोंके बचपनके दोस्त थे। उन्होने रियाज़को पहचान लिया और बोल उठे—

"अरे फद्दन ! तूने नही पहचाना।" अब जो ख़्वाजाने गौरसे देखा तो दौडकर लिपट गये।'[1]

रियाज़की कलमी तसवीर तस्लीम मीनाई यूँ खीचते है—ख़ूब घनी लंबी दाढ़ी, दराज़ कामत (ऊँचा शरीर) बड़ी-बडी कटीली आँखें, होंटोपर मुस्तकिल तबस्सुम (स्थाई मुसकराहट) लबोलहजेमें चाशनी, लफ़्ज़ोंमें

---

[1]मयख़ानये रियाज़ पृ० १३३-१३४।

ञकशी और शगुफ्तगी, खयालात पाकीज़ा और सुथरे, बयानमे हलका-
ल्का-सा लतीफ मिज़ाह (मजाक) और तज़का (मीठी चुटकियाँ लेनेका)
ल्लू।"

नमाज पाँचो वक्त पढते थे, रमज़ानमे तीसो रोज़े रखते थे। मृत्यु
र्यंत ८१ वर्षकी आयुतक बगैर चश्मेके लिख लेते थे और चाँदकी रोशनीमे
ढ लेते थे।

२० जुलाई १९३४ ई० मे ८१ वर्षकी आयुमे खैराबादमे समाधि
गाई।

ऐसे चुलबुले, जिन्दादिल, खुश-मजाक और रगीन मिज़ाजकी
शाइरीका रग कुदरती तौर पर लखनवी होना था। एक तो वे स्वभावत
रगीन मिज़ाज थे, दूसरे जब उन्होने शाइरीकी चौखटपर पाँव रखा, तब
लखनवी शाइरी पूरे शबाबपर थी। तीसरे उनके उस्ताद 'अमीर' मीनाई
तत्कालीन लखनवी रगके[1] एकमात्र प्रतिनिधि समझे जाते थे। अत. 'रियाज़'
का इस रगमे शराबोर होना लाजिमी था। उन्ही दिनो मिर्जा 'दाग'की
शाइरीका आफताब पूरी आब-ओ-तावके साथ चमक रहा था। भारतके
इस सिरेसे उस सिरेतक उनके नामकी धूम थी। हर तवायफकी जबानपर,

---

[1]लखनवी शाइरी क्या है, यह 'शेर-ओ-सुखन' प्रथम भागमे पृ० २४८
से २७२ तक विस्तारके साथ लिखा जा चुका है। इसके अतिरिक्त भी
नासिख, आतिश, जुरअत, इन्शा, मुसहफी, रगीन आदि शाइरोंके
परिचय-कलाममे प्रथम भागमे यत्र-तत्र उल्लेख हुआ है। शेरोसुखनके
पाँचवे भागके सिंहावलोकनमे भी सक्षिप्त उल्लेख किया गया है। अत्युक्ति,
जनानापन, कृत्रिमता, तकल्लुफ, उपमाओ, उदाहरणोकी भरमार,
शब्दाडबर, ज़ाहिरा चमक-दमक, स्त्रियोके लिबास, जेवर, शृगार आदि-
का अश्लील वर्णन, ऐसे भाव जिनसे मनमें विकार उत्पन्न हो, शब्दोका
रख-रखाव, यही उस युगकी लखनवी शाइरी थी।

हर महफ़िलमें और हर गली-कूचेमे 'दाग'की ग़ज़लें थिरक रही थी। कहनेको मिर्ज़ा दाग देहलवी शाइर थे, मगर अपनी शोख़ बयानी, चुटीले अन्दाज़ और रंगीन मिज़ाजीकी वजहसे आम लोगोंके महबूब बने हुए थे। क्या देहलवी, क्या लखनवी, क्या हैदराबादी—सभी उनके शोख़ियाना रगको अपना रहे थे।

जिस तरह दीपक बुझनेसे पूर्व एक बारगी प्रज्वलित हो उठता है, उसी तरह मिटनेसे पूर्व लखनवी शाइरी भी, १९ वी शताब्दीके अतिम वर्षोंमे खूब चमक रही थी। लेकिन देहलवी शाइरीकी आबोताबके समक्ष इसकी चमक माँद पड़ने लगी थी। उस युगके सभी लखनवी शाइरोंने यह महसूस किया कि अब लखनवी शाइरीका बाज़ार तेज़ीसे मन्दा होता जा रहा है, अत. उन्होने धीरे-धीरे अपने लबो-लहजेको बदलना प्रारम्भ कर दिया और 'जलाल'ने तो यकबारगी ही अपने दामनसे लखनवी रग पोछ दिया। लखनऊके उस्ताद शाइर लखनवी रगसे तो बेज़ार होने लगे, मगर वे मीर, ग़ालिब, मोमिनके वास्तविक देहलवी रगको न अपनाकर मिर्ज़ा दाग़के शोख़ियाना धारेमें पड़ गये। मिर्ज़ा दागकी शाइरीमें यूँ तो देहलवी शाइरीके कितने ही गुण विद्यमान थे। मगर उनका इश्क वही लखनवी-जैसा बाज़ारी इश्क था, और इशा-जुरअत-जैसी मुआमले बन्दी। लेकिन यह रंग उन दिनों इतना मकबूल हुआ कि 'अमीर' मीनाई-जैसा सजीदा और बा-इख़लाक़ उस्ताद दागके रगीन हौज़में कूद पड़ा। फिर 'रियाज़'का तो कहना ही क्या ? वे तो कुदरतकी तरफ़से चुलबुली और रिन्दाना तबिअत ही लेकर आये थे।

उर्दू-शाइरीमे फ़ारसी-शाइरीका अनुकरण हुआ है। अतः उर्दूमें भी फ़ारसीके समान शराबका रग घुला-मिला है। कोई भी शाइर ऐसा नही गुज़रा, जिसने शराबपर न कहा हो। चाहे उसने उम्र भर शराब छूई भी न हो, और समस्त जीवन सयमी एव धार्मिक रहा हो। मगर कूचए-शाइरीमे पाँव रखनेके बाद मैख़ानेकी ज़ियारतको न जाय और

पाए-साकीपर सिज्दा न करे यह कैसे हो सकता है? क्योकि उर्दू-फारसी-शाइरीका निर्माण ही उन तन्तुओसे हुआ है, जिससे कि साकी-ओ-मैखाना बनाये गये है। यहाँतक कि पवित्र-से-पवित्र विचार, आध्यात्मिक एवं दार्शनिक बातें भी शराबके रंगमें ही कही जायेंगी। वकौल गालिब—

हर चन्द हो मुशाहिद-ए-हक़की गुफ्तगू।
बनती नहीं है बादा-ओ-साग़र कहे बग़ैर॥

यूं तो हर उर्दू-शाइरने शराबपर लिखा है, मगर उर्दू शाइरीके इस ४०० वर्षके इतिहासमे और सैकडों ख्यातिप्राप्त शाइरोमे—१ गालिब, २ दाग, ३ रियाज़, ४ जिगर, और ५ जोशने जितने अधिक और जिस खूबीसे शराबके मज़मून नज्म किये है, शेष समस्त शाइरोके दीवान मिलाकर भी उतना कलाम पेश नही कर सकते।

उक्त पाँचो शाइरोंमे 'गालिब' खुले-आम पीते थे। 'दाग'ने इस काफ़िर-को कभी मुँह न लगाया। 'जिगर' कभी पीते थे, मगर तौबा किये उन्हें अरसा हो गया है। 'जोश' अलबत्ता शौक फर्माते है। रियाज़ने कभी एक बूंदतक ज़बानपर नही रखी। फर्माते है—

गुनाह कोई न करते शराब ही पीते।
यह क्या किया कि गुनह तो किये, शराब न पी॥

लेकिन आगरेके एक शाइरका कहना है कि— "'रियाज़'ने मेरे सामने पी है और मेरे साथ पी है।"[1] केवल इस शहादतके अतिरिक्त और जितने भी रियाज़के इष्ट-मित्र और साथी है, वे सब एकमत होकर कहते है कि रियाज़ने ता-उम्र शराब नही पी। नियाज़ फतहपुरी लिखते है—

"इसका इल्म बहुत कम लोगोको होगा कि सारी उम्र खुमरियात

---

[1] नक़्दो-नज़र पृ २१५।

(शराव) की शाइरीमें मुब्तिला रहकर ज़ौके-वादा (शरावके शौक) से ना-आश्ना (अनभिज्ञ) रहनेवाला शाइर ज़िन्दगीकी तमाम शगुफ्ता सामानियो (भोगविलासके समस्त साधनो) के साथ हुस्नो-शवावके हुजूममें वेहतरीन ऐयाम गुज़ारते हुए जादा-ए-इखलाक (चारित्रके मार्ग) से कभी एक लमहाके लिए न हटनेवाला शख्स जिस तरह एक इन्सान पैदा हुआ था, वदस्तूर उमी तरह इन्सान रहा। उस ज़मानेमें भी जबकि गुनाहसे पहले उज्रे-गुनाह पैदा कर लिया जाता है।"[1] नवाव फ़साहत जग 'जलील' दीवाने—रियाज़की तारीख़ कहते हुए फर्माते हैं—

मस्तेमै कर दिया जहाँ भरको।
ख़ुद लगाया न मुँहसे साग़रको॥

'अमीर' मीनाईके सुपुत्र मुशी लतीफ अहमद 'अख्तर' मीनाई लिखते है—

"हकीकत यह है कि वह वडे पाकनफ्स और सच्चे मुसलमान थे। उनका रिन्दाना रग उनकी शाइरी ही की हद तक था। जो रग काल (वयाने-कलाम) में देखा, वह उनका हाल (वास्तविक) न था।"[2]

मौ० सैयद सुभान अल्लाह साहव प्रस्तावना लिखते हुए फ़र्माते हैं—

"हर जाननेवाला और पूरा गोरखपुर और खैरावाद कुरान लेकर दिन और रातकी सुहवतोंकी वावत कसम खानेको तैयार है कि रियाज़ने कभी एक बूंद भी शराव लवतक न आने दी।"[3]

एक बूंद कभी लवतक न आने दी, मगर तमाम उम्र शरावका गुण-गान करते रहे। किसीको यह आभास भी नही होने दिया कि रियाज़ परहेज़गार है। आभास हो जाने दे तो फिर रिन्दाना मस्ती ही कहाँ रही। जीवन भर वेपिये झूमते रहे। वकौल चकवस्त—

---

[1]रियाज़े-रिज़वाँ एअ्तराफात पृ० ४१; [2]रियाज़े-रिज़वाँ पेशे-लफ़्ज़ पृ० ५-६; [3]रियाज़े-रिज़वाँ मुक़दमा पृ० ३।

वेपिये नशा रहे जिसमें, जवानी वोह है

लेकिन रियाज़ तो वुढापेमे भी सरशार रहे। मुसीवतो, चिन्ताओं और वुढापेकी निर्वलताओंका वोझ ढोते रहे। मगर फूलोकी तरह मुसकराते रहे, ता-उम्र मादक वने रहे। शरावपर इस ख़ूवीसे लिखा कि कोई अनुमान ही नही कर सकता कि वेगैर पिये भी इस तरहके अशआर निकल सकते है, और स्वय कभी वताकर नही दिया कि शराव नही पीते है। यहाँ-तक कि उनके अतरग मित्र तक उनकी परहेज़गारीकी गध नही पा सके।

पण्डित रतननाथ 'सरशार' और 'रियाज़' गुरु-भाई होनेके अतिरिक्त परस्पर घनिष्ट मित्र थे। लेकिन 'सरशार' जैसे ख्यातिप्राप्त सुरासेवी मित्रको भी यह मालूम नही था कि रियाज़ केवल दुनियाए-शाइरीमे ही रिन्द मशहूर है, पीते-वीते नही है। एक रोज़ 'सरशार' ने रियाज़को दावत-पर वुलाया, और उनके सामने शराव भी रखी गई। शरावको देखकर रियाज़के होश उड़ गये। मगर ज़ाहिरमें झूमने लगे और यकायक 'सरशार' से 'दो मिनट' कहकर कुछ इस अन्दाज़से उठे, गोया अभी वापिस आये जाते है, और कोई वहुत जरूरी कामके लिए जाना पड़ रहा है। मगर रियाज आनेको तो गये नही थे।

सयोगकी वात उक्त घटनाके वीस वर्ष वाद हैदरावादमें 'सरशार' और रियाज़की मुलाकात हुई। खानेपर वहाँ भी शराव मौजूद थी। रियाज़ने यह कहते हुए सहर्ष हाथ वढाया—"जिगरकी ख़रावीकी वजहसे डाक्टरोने एक सालके लिए कतई मुमानिअत कर दी है। मगर देखकर रहा नही जाता।" जिगर-ख़रावीकी वात सुनी तो लोगोने हाथसे प्याला छीन लिया। ख़ूव—

रिन्द-के-रिन्द रहे हाथसे जन्नत न गई

किसीने पूछा भी कि—"हज़रत! आप पीते भी है या लिखते ही लिखते है"। तो देखिए क्या ज़ूमअनी शेअ़र कहकर उलझनमे डाला है—

शेअ़रे-तर मेरे छलकते हुए साग़र हैं 'रियाज़' !
फिर भी सब पूछते हैं—"आपने पी है कि नहीं" ॥

उक्त शेअ़रसे इकरार और इनकारकी दोनों ध्वनि निकलती हैं। एक तो यह कि जब मेरे शेअ़रोंमें भी शराब भरी हुई है तो फिर पी क्यों न होगी ? दूसरी यह कि मेरे छलकते हुए साग़र तो बस मेरे शेअ़रे-तर हैं, और किसी साग़रको मैंने हाथ नहीं लगाया।

रियाज़का दीवान १९३७ में प्रकाशित 'रियाज़े-रिज़वाँ' हमारे सामने है। इसमें ८२८ पृष्ठ हैं। जिनमें १०४ में विषय-सूची और प्रस्तावनाएँ हैं। ४८० पृष्ठोंमें ६०० गज़लें हैं, जिनमें ८१६० अशआ़र हैं। शेष २४४ पृष्ठोंमें कितेअ़, सेहरे, कसीदे, मसनवी, नअ़त, नौहा वगैरह हैं। रियाज़की इन छः सौ गज़लोंमें एक भी ऐसी ग़ज़ल नहीं, जिसमें सागरो-मीना न छल-कते हों। ८१६० अशआ़रमें १३६६ अशआ़र इसी विषयके हैं। आइए सबसे पहले मैख़ानए-रियाज़की ज़ियारत कर लें।

मैख़ाना-ए-रियाज़

शरमाओ 'रियाज़' मैकशोंसे।
लम्बी दाढ़ी है हाथ भरकी ॥

क्या-क्या ख़ुशामदें हैं कि पी लूं बहारमें।
बादलके टुकड़े सरपै मेरे छाए जाते हैं ॥

जोशे-मै और सब्ज़ाज़ारोंमें घटा छाई हुई।
बात ऐसी है कि तोबा भी है ललचाई हुई ॥

इक हमीं हैं कि बहक जाते हैं तौबाकी तरफ़।
वर्ना रिन्दोंमें बुरा चाल-चलन किसका है ?

मुझको भी इन्तज़ार था, अब्र आए तो पिऊँ।
साक़ी ! अगर यह सच है कि 'बादल उठा' तो ला ॥

मस्जिदमे मरनेकी अपेक्षा तो मैख़ानेमें मरना कही अच्छा—

रहने देगा न दमे-नज़अ[1] कोई हल्कको ख़ुश्क।
मैकदेमें हमें इतना तो सहारा होगा॥

आबे-ज़मज़मके सिवा कुछ नहीं कअ़बेमें 'रियाज़'!
मैकदा तुम जिसे समझे हो मदीना होगा॥

बज़्मे-महशर गर बने साक़ीकी बज़्म।
मैं न उट्ठूँगा अगर पीकर गिरा॥

बनाई क्या बुरी गत मैकदेमें बादानोशोंने?
'रियाज़' आए थे कल जामा पहनकर पारसाईका॥

[कर्तव्यशील और अपने धुनके मस्त व्यक्तियोके समूहमे जब कोई ढोंगी पहुँच जाता है, तब उसकी दुर्गति होना स्वाभाविक है]

दस्ते-शफ़क़त इस तरह इक रिन्दने फेरा 'रियाज़'!
बैठकर यादे-ख़ुदामें झूमना जाता रहा॥

[जब किसी पहुँचे हुए महापुरुषका वरदहस्त सरपर हो जाता है, तब यही स्थिति हो जाती है]

जब लोगोंमें दोनोंकी बुज़ुर्गी है मुसल्लम[2]।
क्या शैख़े-हरम[3] पीरेमुग़ाँ[4] हो नहीं सकता?

नमाज़े-ईद हुई मैकदेमें धूमसे आज।
'रियाज़'! बादाकशोंने हमें इमाम किया॥

जाते थे सूएमैकदा[5] निकले हरममें[6] हम।
क्या जाने आज राहमें क्या फेर हो गया॥

---

[1]मृत्युके समय, [2]मानी हुई, निश्चित; [3]मस्जिद का शैख़; [4]मधुशाला-मालिक; [5]मदिरालयकी तरफ; [6]मस्जिदमें।

सस्ते छूटे जो सरेराह अमामा[1] उतरा।
सरसे उन बादाफरोशोंका[2] तकाज़ा उतरा॥

दुनियासे अलग हमने मैख़ानेका दर देखा।
मैख़ानेका दर देखा, अल्लाहका घर देखा॥

दोनोंके मज़े लूटे, दोनोका असर देखा।
अल्लाहका घर देखा, मैख़ानेका दर देखा॥

कअ़बेमें नज़र आए जो सुबह अज़ां देते।
मैख़ानेमें रातोको उनका भी गुज़र देखा॥

कुछ काम नहीं मैंसे गो इश्क है इस शैसे।
है रिन्द 'रियाज़' ऐसे दामन भी न तर देखा॥

कयामतमें भी ऐ साकी उड़ाये काग बोतलके।
तेरे रिन्दोने क्या मैदान मारा है, कयामतका॥

यह अपनी वज़अ़ और यह दुश्नामे-मैफरोश।
सुनकर जो पी गये यह मज़ा मुफलिसीका था॥

जा-जाके बज़मेबअ़ज़में सौ बार हमने पी।
चोरी किसीकी थी न हमें डर किसीका था॥

अहले-हरम[3] भी आके हुए थे शरीके-दौर।
कुछ और रंग आज मेरी मैकशीका था॥

हम है गदाए-मैकदा[4] हमको कमी नहीं।
सब कुछ हमारे घर है खुदाका दिया हुआ॥

तौबाकी जान, खुश्क है बिजलीके ख़ौफसे।
किबलेसे[5] आज अब्रेकरम[6] है उठा हुआ॥

---

[1]पगड़ी; [2]शराब बेचनेवालोंका; [3]मस्जिदवाले; [4]मधुशाला-भिक्षुक; [5]कअ़्बेकी तरफसे; [6]कृपाका बादल (कृपा-वृष्टि हो रही है)।

तौबासे डराया मुझे साक़ीने यह कहकर—
"तौबा-शिकनीके लिए इसरार न होगा" ॥

हम गिरे जब लड़खड़ाकर बज़्ममें।
सर सुबूपर हाथ साग़रपर पड़ा ॥

हश्रमें मैकदेवालो ! जो ख़ुदाने चाहा।
यही जलसा, यही साग़र, यही मीना होगा ॥

उम्मीद है कि शबको[1] भी हो शग़्ले-मै[2] 'रियाज़'।
मुँह सुबह होते देख लिया रोज़ादारका[3] ॥

वोह हवा जन्नतकी, वोह अब्रेकरम छाया हुआ।
मैकदा जन्नत है, जन्नतमें जो पी तो क्या हुआ ?

रहमतको यह अदा मेरी शायद पसन्द आए—
डर-डरके काँप-काँपके पीना शराबका ॥

चले न काम, मएख़ाम[4] अगर न साथ चलें।
हरमकी[5] राहमें कोसों कुआँ नहीं मिलता ॥
'रियाज़' को हरम-ओ-मैकदा बराबर है।
पिये शराब वोह शबको कहाँ नहीं मिलता ?

राहसे कअबेके हमने रेज़ए-मीना[6] चुने।
क्या अजब इसके सबब हमको मिले हजका सवाब[7] ॥
ईदके दिन मैकदेमें है कोई ऐसा 'रियाज़' !
एक चुल्लू देके जो ले तीस रोज़ोंका सवाब ॥

---

[1]रात्रिको; [2]सुरापान; [3]रोज़ा रखनेवालेका; [4]ख़ालिस शराबका; [5]कअ़बेके मार्गमें; [6]सुरापात्रके टुकड़े; [7]पुण्य।

आबाद करें बादाकश अल्लाहका घर आज।
दिन जुमेअ़का है बन्द हैं मैख़ानेके दर आज॥
मैख़ाना हमारा कोई मस्जिद तो नहीं है।
तसबीह[1] लिये कौन बुज़ुर्ग आए इधर आज?

जब पी लगाके मुंह दमेइफ़्तार[2] रिन्दने।
बोतलके मुँहको आई फ़रिश्तोंको बू पसन्द॥

दिनमें चर्चे ख़ुल्दके[3] शबमें मए-कौसरके ख़्वाब[4]।
हम हरममें[5] आ रहे मैख़ाना बीरां देखकर॥

जायें-हरममें तौबा करें होके पाक-साफ़।
लत-पत हैं पहले तो सरे-ज़मज़म[6] नहायें हम॥

मेरा यही ख़याल है, गो मैंने पी नहीं।
कोई हसीं पिलाये तो यह शै बुरी नहीं॥

किसीसे हाय साक़ीका यह कहना—
"लहू मेरा पिये जो बेपिये जाय"॥

जिन्हें लोग कहते हैं दुज़्दे-मैं[7] वह ख़ुदा परस्त 'रियाज़' हैं।
यह सुना है कल कि जनाब ही पसे-ख़ुम[8] थे मह्‌व नमाज़में॥

बड़े मौकेसे थी हर चन्द वोह जन्नतके बाहर थी।
हरमसे हटके रस्तेमें मिली मैकी दुकां मुझको॥

---

[1]सुमरनी, माला; [2]रोज़ा खोलते समय, [3]जन्नतके; [4]स्वर्गस्थ सुरानदीका स्वप्न; [5]मस्जिदमें; [6]कअ़बेके पवित्र कुएँपर, [7]शराबका चोर; [8]शराबके घड़ेकी ओटमें।

यह साक़ीने साग़रमें क्या चीज़ देदी ?
कि तौबा हुई पानी-पानी हमारी ॥

यह क्या मज़ाक़ फ़रिश्तोंको आज सूझा है ?
हुज़ूमे-हश्रमें ले आए हैं पिलाके मुझे ! !

नुस्ख़ा बयाज़े-साकिये-कौसरसे[1] मिल गया।
घर बैठे हम तो अब मए-कौसर[2] बनायेंगे ॥

सदसाला[3] दौरे-चर्ख़ था साग़रका एक दौर।
निकले जो मैकदेसे तो दुनिया बदल गई ॥

ख़ुदाके हाथ है बिकना न बिकना मैका ऐ साकी !
बराबर मस्जिदे-जामअ़के हमने अब दुकाँ रखदी ॥
बिना है एक ही दोनोंकी कअ़बा हो कि बुतख़ाना।
उठाकर ख़िश्ते-ख़ुम[4] हमने यहाँ रख दी वहाँ रख दी ॥

बारे-इसियाँके[5] लिए यारब ! फ़रिश्ते भेज दे।
हम लदे आए हैं अपने शीशा-ओ-साग़रसे आप ॥
कातिबे-अअ़माल[6] ! यह है आपके हाथोंका खेल।
बोझ उतरवा लीजिए महशरमें मेरे सरसे आप ॥

नीची दाढ़ीने आबरू रख ली।
कर्ज़ पी आए इक दुकानसे आज ॥

टपकादे बूंद भर कोई मुँहमें 'रियाज़' के।
दम मैकदेमें तोड़ रहा है पड़ा हुआ ॥

---

[1]जन्नतमें शराब पिलानेवालेकी पुस्तिकासे; [2]जन्नतवाली शराब; [3]सैकड़ों वर्षका; [4]शराब-पात्ररूपी ईंट; [5]पापोंका बोझ ले चलनेके; [6]भाग्य-रेख-लेखक ।

होगा जिन्हें तौबाका भरोसा मेरे मालिक !
वोह और ही होंगे यह गुनहगार न होगा ।।

ख़ुम दोशपर,[1] बग़लमें सुराही, बरोज़े-हश्र ।
उठना मज़ारसे वोह किसी मैं-गुसारका[2] ।।

मक़सूद है कोई न पिये वोह हरीस हूँ ।
वाइज़ हुआ मैं, रिन्द-क़दह-ख़्वार क्या हुआ ?

[मैं ऐसा हरीस (लालची-ईर्ष्यालु) हूँ कि मेरी यह इच्छा है कि मेरे सिवा कोई न पिये। यदि मेरे भी ऐसे अनुदार विचार हैं तो फिर मैं रिन्द क्या हुआ वाइज़ हो गया। क्योंकि इस तरहके ओछे विचार तो इन्ही लोगोंके होते हैं]

हमें पीने-पिलानेका मज़ा जबतक नहीं आता ।
कि बज़्मे मैंमें कोई पारसा जबतक नहीं आता ।।

आफ़ताबे-हश्र कब चमका 'रियाज़' !
दाग़े-मैं दामनसे जब मैं धो चुका ।।

पीकर भी झलक नूरकी मुँहपर नहीं आती ।
हम रिन्दोंमें जो साहबे-ईमाँ नहीं होते ।।

[केवल रिन्द (ईश्वरमें लीन) होनेसे ही चेहरेपर तेज नही झलक सकता, उनके लिए हृदयका स्वच्छ होना भी आवश्यक है]

अछूते जाम हैं मिन्नतके कुछ अलग रखिए ।
किसे पिलायें कोई पारसा नहीं मिलता ।।

---

[1]कन्धेपर, [2]मद्यपका ।

'रियाज़' ! तौबा करो दिन ख़िज़ाँके आए हैं।
तुम आए पीनेको जाती हुई बहारमें क्या॥

दिल लाख पाक-साफ़ है दामनको क्या करूँ।
जा-जाके मैकदेमें यह धब्बा लगा दिया॥

[जीवनमे एक वार भी धब्बा लगा कि फिर छुड़ाएसे नही छूटता, इसीलिए काजरकी कोठरीमे जानेको पूर्वज मना कर गये हैं]

क्या तुझसे मेरे मस्तने माँगा मेरे अल्लाह!
हर मौजे-शराब उठके बनी हाद[1] दुआ़का॥

'रियाज़' ख़ाके-दरे मैकदा था जीते जी।
फ़नाके बाद उसे ख़ुल्द-आशियाँ[2] देखा॥

जबतक मिलेगी क़र्ज़ पिए जायेंगे ज़रूर।
हम जानते हैं मुफ़्त है सौदा उधारका॥

[ऋणकृत्वा सुरापिवेत वालोंपर कितना मीठा व्यंग्य है]

ख़ुमसे न हो वोह सेर, मैं चुल्लूमें मस्त हूँ।
वह ज़र्फ़ शैख़का है, यह मुझ ख़ाकसारका॥

[सतोषी और लालचीकी तुलना क्या खूब की है]

मुझको है लबे-जामे-शिकस्ता भी महे-ईद[3]।
साक़ी! यह हिलाले-रमज़ाँ हो नहीं सकता॥

मिलती है दरे-साक़ीए-कौसरसे[4] यह ख़िदमत।
इस तरह कोई पीरे-मुग़ाँ[5] हो नहीं सकता॥

---

[1]नदीके बहनेका शोर; [2]जन्नतनशी; [3]ईदका चाँद; [4]जन्नतकी शराबके साकीसे यह चाकरी मिलती है; [5]मदिरालय-स्वामी।

हरमवालो[1] ! 'रियाज़' आकर हरममें पड़ रहें क्योंकर।
गुज़र उनका कहीं बेजामो-मीना[2] हो नहीं सकता॥

जवानीमें पीकर नशा हुआ तो फिर जवानी क्या ?

भरे साग़रमें है भरपूर रंग उनकी जवानीका।
ग़जब है वे पिए नशेमें मेरा चूर हो जाना॥

बुरी क्या थी फ़ाक़ामस्ती, बड़े लुत्फ़से गुज़रती।
लिये कुछ जो मैंकी तल्ख़ी ग़मे-रोज़गार होता॥
मेरे हल्क़से उतरकर मए-साफ़ अश्क बनती।
कभी मैं गुनाह करता, कभी अश्कबार होता॥
तेरे आगे सर उठाता कोई पारसा[3] न साक़ी !
जो 'रियाज़'-पारसा भी कहीं बादाख्वार[4] होता॥

हम रिन्द समझते हैं उसे अंजुमने-वअ़ज़।
जिस बज़्ममें ज़िक्रे-मै-ओ-मीना नहीं होता॥

कोई मस्ते-मैकदा आगया, मए-बे-ख़ुदी वोह पिला गया।
न सदाए-नामए-दैर उठी न हरमसे शोरे-अज़ाँ उठा॥
तुझे मै-फ़रोश ख़बर भी है, कि मुक़ाम कौन है क्या है शै ?
यह रहे-हरममें दुकाने-मै, तू यहांसे अपनी दुकां उठा॥*

---

*बाद दिखावत खोल इत तुपक, तीर, तरवार।
सुरमा, मीसीके खड़े जहाँ घिसावनहार॥
—वियोगी हरि

[1]मस्जिदवालो; [2]मदिरा-पात्रोंके; [3]नेक चलन; [4]शराबी।

जहाँ हम खिश्ते-खुम[1] रखदें बिनाए-कअ़बा पड़ती है।
जहाँ साग़र पटक दें चश्मए-ज़म-ज़म निकलते हैं॥

जिस दिनसे हराम हो गई है।
मै-खुल्दे मुक़ाम हो गई है॥
मर गया हूँ पै तअ़ल्लुक़ है जो मैख़ानेसे।
मेरे हिस्सेकी छलक जाती है पैमानेसे॥
हरम-ओ-दैरमें होती है परिस्तिश किसकी ?
मै परस्तो यह कोई नाम है मैखानेके॥

ज़ाहिदो-वाइज़

उर्दूकी परम्पराके अनुसार 'रियाज़'ने भी शेख और वाइज़, ज़ाहिद और नासेहकी पगड़ी उछालनेमें कोई कमी नही की है। कही-कही तो मुंह चिढ़ाते-से नज़र आते है—

क्या तड़ाकेकी सदा थी सरे-नासेहकी[2] क़सम।
किसी मैकशने सुबू कोई उछाला होगा॥
मए-कौसरमें यह बू-बास कहाँ थी ज़ाहिद!
कुछ नहीं, यह किसी मैकशका पसीना होगा॥

कैसे ये बादाख्वार हैं सुन-सुनके पी गए।
वाइज़को कुछ मज़ा न किसीने चखा दिया॥

पी-पीके उसने सिज्दे किये है तमाम रात।
अल्लाहरे शग़ल ज़ाहिदे-शब-ज़िन्दादारका॥

इस शैखे-कुहन-सालकी, अल्लाहरे बुज़ुर्गी।
जन्नतमें भी जाकर यह जवाँ हो नहीं सकता॥

---

[1]मदिरा-पात्ररूपी ईंट; [2]उपदेशकके सिरकी।

हल्की शराब पी जो किसी नाज़नींके साथ।
वाइज़ मैं इस गुनहसे गिरांबार क्या हुआ?

किया जो मैकदे जानेसे मनअ वाइज़ने।
तो रोज़ उठके यही काम सुबह्-ओ-शाम किया॥

संजीदगीसे महफ़िले-साक़ीमें बात की।
नासेह-सा बेवकूफ़ भी आक़िल निकल गया॥

हमतो ख़ुदापरस्त भी थे, बुतपरस्त भी।
हमको 'रियाज़'! शैख़ो-बरहमनने क्या कहा?

आया जुनूंमें देने वोह् नश्तर मुझे 'रियाज़'!
नासेह्को देखिए कि मेरा चारागर बना॥

महफ़िले-वाअ़ज़में वाइज़ न मेरे सर होता।
एवज़े-शीशा अगर हाथमें पत्थर होता॥

लगाके धोकेने मुंह् शैख़ फिर न छोड़ सका।
पुकारता ही रहा मैं "अरे शराब-शराब"॥

अम्मामा[1]-ओ-ग्रबा[2]-ओ-कबा[3] सब हैं रेहने-मैं।
अब दे कोई उधार तो किस एतबारपर?

दामने-तरने[4] दिया काम कुछ ऐ गर्मिये-हश्र[5]!
ज़ाहिदे-ख़ुश्क भी बैठे हैं गुनहगारके पास॥

मस्जिदमें आज हम भी गये थे पए-नमाज़[6]।
देखा सलाम फेरके तो शैख़जी नहीं॥

---

[1]पगड़ी; [2-3]चोग़ा; [4](शराबने) भीगे वस्त्रोंने; [5]कयामतकी गर्मी; [6]नमाज़ पढ़नेके लिए।

पहले मैंसे भिगोले रीशे-सफ़ेद[1]।
देख ऐ शैख़! फिर खिज़ाबका रंग॥

देखकर शोखहसीनोंको बता ऐ नासेह!
गुद-गुदी दिलमें कभी तेरे उठी है कि नहीं?

फ़रिश्तोंमें थी शैख़ साहबकी गिनती॥
यह रिन्दोंकी सुहबतमें इन्सां हुए हैं॥

करते हैं वज्द अब तो सुन-सुनके कब्रवाले।
मैंने वोह रूह फूंकी नाकूसे-बरहमनमें[2]॥

शैख़ यह कहता गया पीता गया—
"है बहुत ही बदमज़ा, अच्छी नहीं"।

वाइज़ा! हम गुनह नहीं करते।
हम गुनहगार नाज़ करते हैं॥

जी न माना हज़रते-नासेहको आते देखकर।
कुछ यूंही थोड़ी-सी पीली दिललगीके वास्ते॥

क्यों पड़े हो गोशए-मस्जिदमें उठो जाहिदो!
फूटी आंखोंसे ज़रा देखो घटा छाई हुई॥

जिस कामको तू मना करेगा हमें नासेह!
हम छोड़के सौ काम वही काम करेंगे॥

आज तो पी दिखाके वाइज़को।
मैं कभी इस कदर न था गुस्ताख़॥

वोह आ रहा है असा[3] टेकता हुआ वाइज़।
बहा दे इतनी कि साकी! कहीं न थाह मिले॥

---

[1]सफ़ेद दाढ़ी; [2]पुजारीके शखमें; [3]लकड़ी, छडी।

यह सुनके निस्फ़ शबको[1] दरे-मैकदा[2] खुला।
माँगी है इक बुज़ुर्ग-तहज्जुद गुज़ारने[3]॥

ऐ शैख़ तू चुराके पिये जब कभी पिये।
तेरी तरह किसीकी न नीयत ख़राब हो॥

शबको मैख़ानेमें क्यों पहुँचे थे ऐ हज़रते शैख़!
कहिए अच्छी तो कटी किबलए-हाजातकी रात?

अपने सर मेरे गुनहका बार रहने दीजिए।
शैख़की अच्छी है यह दस्तार रहने दीजिए॥

जनाबे शैख़ने जब पी तो मुँह बनाके कहा—
"मज़ा भी तल्ख़ है, कुछ बू भी ख़ुशगवार नहीं"॥

उठवाओ मेज़से मै-ओ-साग़र 'रियाज़' जल्द।
आते हैं इक बुज़ुर्ग पुराने ख़याालके॥

ज़लज़ला-सा आगया आया जो मैं।
हज़रते-वाइज़[4] गिरे, मिम्बर[5] गिरा॥

पाक-ओ-साफ़ इतनी है जिसने पी फ़रिश्ता हो गया।
ज़ाहिदो यह हूरके दामनमें है छानी हुई॥

ताके-हरममें शेख़! गुलाबी है फूल-सी।
इस कामका मिलेगा तुम्हें फल, उठा तो ला॥

---

[1]आधी रातको, [2]मधुशाला-द्वार; [3]आधीरातको नमाज पढ़नेवालेने; [4]उपदेशक; [5]वह सीढ़ियाँ जिनपर खड़े होकर मस्जिदमें उपदेश दिया जाता है।

तोड़े टकराके सुबू हमने भी उसके सरसे।
चुप हैं वाइज़ कि यही हासिले-तकरीर भी था॥

कौसरका हौज़ हश्रमें सरपै लिये फिरूँ।
चिल्लायें शैख़ "यह भी तुम्हारा सुबू हुआ"॥

क़र्ज़ लाया है कोई भेस बदलकर शायद।
मै-फ़रोशोंका है ज़ाहिदसे तकाज़ा कैसा?

सौन्दर्य-वर्णन

'मैखानए-रियाज' के साथ-साथ आइए लगे हाथ उनके मअशूक़ भी दबे पाँव देख ले—

लें वोह दामनमें क्या गुलाबके फूल।
बारे-दामन[1] जिन्हें गुलाबका रंग॥
रंगका उसके पूछना क्या है?
जिसका साया भी दे गुलाबका रंग॥

नाज़ुक कलाइयोंमें हिनाबस्ता मुट्ठियाँ[2]।
शाख़ोंपै जैसे मुँह बँधी कलियाँ गुलाबकी॥

रुख़े-पुरनूरमें[3] जगह थी कहाँ?
रखनेवालेको देखिए तिलके॥

तेरा यह रंग-रूप, यह जोबन शबाबका।
जैसे चमन बहारमें फूला-फला हुआ॥

थी दिलमें गुदगुदी कि यह पूछूँ दमे-विसाल[4]।
"यह तू हँसा कि फूल खिला तेरे हारका?"

उफ़-रे उभार, उफ़-रे ज़माना उठानका।
कल बामपर[5] थे आज है कस्द[6] आस्मानका॥

---

[1]दामनका बोझ; [2]मेंहदी लगी मुट्ठियाँ; [3]चमकते हुए मुखड़ेपर; [4]मिलनके समय; [5]कोठेपर; [6]इरादा।

क्या क़यामत है शबेवस्ल ख़मोशी उसकी।
जिसकी तसवीरको भी नाज़ है गोयाईका[1]॥
शाख़ेगुल तनती है- क्या बाग़में ऐ जोशेबहार!
इसमें अन्दाज़ कहाँ यारकी अँगड़ाईका॥

वोह तसवीर आजतक महफ़ूज़[2] है चश्मे-तसव्वुरमें[3]।
तेरे बचपनसे जब अठखेलियाँ करता शबाब[4] आया॥
हुए हंगामाहाए-हश्र[5] कितने गोशाए-दिलमें[6]।
वोह मेरे सामने कुछ इस अदासे बेनक़ाब आया॥
वोह आये सैरे-दरियाके लिए तो बिछ गई मौजें[7]।
क़दमसे उनकी अपनी आँख मलते हर हुबाब[8] आया॥

उसके आग़ाज़े-जवानीका[9] कहूँ क्या आलम।
कुछ उसे नशा-सा था, नशेमें वोह चूर न था॥

शर्मो-हया

ऐ साहब इस तरह घूरकर न देखिए, कुछ उसकी हया-शर्मका भी ख़्याल कीजिए—

नशेसे झुकी पड़ती थीं यूँ ही तेरी आँखें।
छेड़ोंसे मेरी और बड़ा बोझ हयाका॥
मैं ख़्वाबमें हूँ और खुली हैं मेरी आँखें।
जब दिलमें उतर आये जो पुतला हो हयाका॥
दिल छीनती हैं और झुकी जाती हैं आँखें।
शोख़ीने भी जाना नहीं अन्दाज़ हयाका॥

कह उठे—"चुप हो क्यों विसालके[10] बाद?"
ख़ुद ही शरमाये इस सवालके बाद॥

---

[1]बोलनेका; [2]सुरक्षित; [3]कल्पनाके आँखोंमें; [4]यौवन, [5]क़यामतजैसा शोर-गुल; [6]दिलके कोनेमें; [7]लहरें; [8]बुलबुला; [9]यौवनके प्रारम्भका; [10]मिलनके।

बने हैं शर्मके पुतले शबेवस्ल।
हया आँखोंमें है नीची नज़र है॥
हश्रमें शरमाके उसने हाथ मुँहपर रख दिया।
बात दिलकी होंटपर बे-अख़्तियार आनेको थी॥

नज़ाक़त

और इस हयाके साथ यह नज़ाकत भी मुलाहिज़ा फर्माइए—

मैं तो समझा पंखड़ी है फूलकी।
किस क़दर हलका तेरा ख़ंजर पड़ा॥
ऐसी ज़िद है तो उन्हें कौन मनाये या रब!
वोह यह मचले हैं कि कोई मुझे क्यों याद आया॥
वोह सिन ही क्या है समझ हो जो ऐसी बातोंकी।
वोह पूछते हैं कि—"रोज़े-विसाल क्या होगा?"

शोख़ियाँ

हुज़ूरेवाला! अब यहाँसे खिसक चलिए। देखिए शर्मो-हयाके पर्देमें शोख़ियाँ शुरू हो गई हैं। अब ठहरना मुनासिब नहीं—

यहाँ भी है वही इतराके चलना।
क़यामत है कि उनकी रह गुज़र है॥
वक़्त ही ऐसा था रुख़सत हो गई उनकी हया।
बात ही ऐसी थी खुल-खेले वोह शर्मानेके बाद॥
हँगामे-नज़अ़[1] गिरया[2] यहाँ बेकसीका था।
तुम हँस पड़े, यह कौन-सा मौक़ा हँसीका था?
जो गूँज उलझी बालोंको झूँझलाके बोले—
"लगे प्यारको आग! अभी कान जाता!!"

---

[1]मृत्युके समय; [2]रोने-धोनेका शोर।

बचपन यह है तो कौन बचेगा शबाबतक[1] ?
सदके[2] तेरे उमंग अभी इन्तहांकी है॥

ख़ुदा जाने क्यों उनके दिलमें यह आई।
जफ़ाओंकी[3] ठहरी करम[4] करते-करते॥

उड़ाये फिरती है उनकी जवानी।
क़दम पड़ता नहीं उनका ज़मींपर॥

हम दिलमें ख़ुश कि सब्ज़ए-तुरबत[5] हरा हुआ।
वोह इस अदासे रोये कि पलकें भी नम नहीं॥

कुछ और ही होती है बिगड़नेकी अदाएँ।
बननेमें-सँवरनेमें यह आलम[6] नहीं होता॥

हरजाई मअशूक

यह गुनगुनानेकी आवाज़ कहांसे आ रही है? आवाज़ तो जानी-पहचानी मालूम होती है। अरे भई यह तो हज़रते 'रियाज़' हैं, मालूम होता है अपने मअशूकसे कुछ गिला-शिकवा कर रहे हैं—

निकले थे मुँह छुपाये हुए घरसे ग़ैरके।
तसवीर बन गये जो मेरा सामना हुआ॥

ग़ैरके घरसे झिझकते हुए तुम निकले थे।
रुकते देखा तुम्हें, फिर छुपके निकलते देखा॥

कभी कुछ रात गये या कभी कुछ रात रहे।
हमने इन पर्दानशीनोंको निकलते देखा॥

छुपके रातोंको कहीं आप न आये न गये।
बे-सबब नाम हुआ आपका रोशन कैसा?

---

[1] जवानी आनेतक; [2] न्योछावर, क़ुर्बान जाऊँ; [3] जुल्मोंकी; [4] कृपा; [5] समाधिपर उगी घास; [6] दशा, हाल।

है अभी मेरे बुढ़ापेमें जवानी कैसी ?
है अभी उनकी जवानीमें लड़कपन कैसा ?

यह भी एहसाँ[1] ? सुबह होते आये तुरबतपर[2] मेरी।
कुछ गुले-पजमुर्दा[3] लेकर ग़ैरके बिस्तरसे आप॥

पारसाईका[4] यक़ीं[5] ग़ैरको दिलवाते हो।
और भूलेसे जो आजाय तबस्सुम[6] मुझको !

गये थे आप उठाने जनाज़ा दुश्मनका।
कहाँ गई थी बड़े धूमसे सवारी रात ?

हज़रते 'रियाज़' अपने हबीबसे यह किस अन्दाज़की गुफ्तगू कर रहे हैं ? मालूम होता है हबीबसे नहीं, किसी बाज़ारी औरतसे ज़बान लड़ाई जा रही है।

कामुकप्रेमी

क्या आप 'रियाज़' को बेदाग और उनके हबीबको पाकदामन समझे बैठे थे ? तौबा कीजिए साहब, जैसी गन्दी देवी वैसे ऊत पुजारी। वेह ख़ुद भी भौंरे हैं और उनकी चहेती भी तितलियाँ हैं। यहाँसे खिसकिए तो उनके हस्बहाल कुछ शेअर सुनाऊँ—

ऐ 'रियाज़' ! आँख लड़ाते हुए जी डरता है।
ज़ख़्म पहुँचे हैं हसीनोंको नज़रसे क्या-क्या॥

बाज़ारमें भी चलते हैं कोठोंको देखते।
सौदा ख़रीदते हैं तो ऊँची दूकानका॥

लूटी है बहुत हमने हसीनोंकी जवानी।
पीरीमें भी अबतक है जवानीकी वही बात॥

सताते हैं हम भी हसीनोंको क्या-क्या।
सताती है हमको जवानी हमारी॥

---

[1]एहसान; [2]क़ब्र, समाधिपर; [3]कुम्हलाये फूल; [4]नेक चलनीका; [5]विश्वास; [6]मुस्कराहट।

हमको मिल जायें तो आ जाये मज़ा।
अच्छे मअ़शूक और सस्ते दामके॥
जितने हैं मअ़शूक मिल जायें हमें।
हैं यह सब काफ़िर हमारे कामके॥

कहते हैं "जान पड़ गई आफ़तमें वक़्तेवस्ल।
मलदलके रख दिया मुझे, अच्छा यह प्यार है"॥

तुम एक रह गये हो हमारी निगाहमें।
सब नाज़नीं हमारी नज़रसे उतर गये॥

किसने देखा हमें कूचेमें हसीनोंके 'रियाज़'।
मुफ़्त बदनाम हुए हम कहीं आये-न-गये॥

कहना किसीका सुबहे-शबे-वस्ल नाज़से—
"हसरत तुम्हारी, जान हमारी निकल गई॥"

देखते ही किसी काफ़िरको बिगड़ जाती है।
मैं जो चाहूँ भी तो रहती नहीं नीयत अच्छी॥

किसीपर दमे-हश्र क्या आँख डालूँ?
हसीं सब मेरे देखे-भाले हुए हैं॥

बेअदबियाँ

'रियाज़' उर्दू-शाइरीकी परम्पराके अनुसार अपने मअ़शूकका सम्मान और इज़्ज़त नहीं करते, बल्कि बेअदबीपर उतर आते हैं—

चूम लेते हैं मुँह कभी हम भी।
जब हसीं कहके कुछ मुकरते हैं॥

कहना किसीका हाथ वोह झुँझलाके नाज़से—
"कम्बख़्त हाथ छोड़, कोई देखता न हो"॥

हमने भी इन हसीनोंको छेड़ा है किस क़दर।
ऐसा भी कोई है जो हमें कोसता न हो॥

मैंने लिया जो हश्रमें दामन बढ़ाके हाथ।
बोले वोह "आबरू है मेरी अब खुदाके हाथ॥"

बढ़ने लगे थे दस्ते-अदब बनके दस्ते-शौक़।
ज़ालिमने आज थाम लिये मुसकराके हाथ॥

हाथ गुस्ताख़ है उठ जायें न यह दामनपर।
बचके निकलें मेरी मरक़दसे गुज़रनेवाले॥

दौड़कर गोदमें उठा लाऊँ।
घरमें छमसे जो कोई आजाये॥

पायें तो ऐ हसीनो! तुमको रुलाके छोड़ें।
है यह 'रियाज़' ऐसे इनको तरस न आये॥

डर गये, चीख़ उठे, बात थी क्या, कहिए तो?
क्या शबेवस्ल किसीका कोई अरमाँ निकला॥

दीवाना मैंने हश्रमें ख़ुदको बना लिया॥
जो मिल गया हसीन गलेसे लगा लिया॥

कोई मुँह चूम लेगा इस 'नहीं' पर।
शिकन रह जायगी यूँ ही जबींपर॥

चूमकर मुँह गालियाँ खाते हैं हम।
इस सज़ामें फिर मज़ा पाते हैं हम॥

अरे ओ हश्रमें इतरानेवाले यूँ न चल तनकर।
यहाँ भी लूटनेवाले तेरे जोबनके बैठे हैं॥

ख़ुदा करे कहीं मौक़ेसे मुझको मिल जायें।
यही हसीं जो मुझे पारसा समझते हैं॥

जबतक वोह मेरे हाथोंसे मजबूर न होंगे।
वअ़देका उन्हें हश्रमें इकरार न होगा॥

खुलके लूटी हुस्नकी दौलत 'रियाज़'!
आज तो डाका सरे-महशर पड़ा॥
कहते हैं "ख़ूब कहो, हम न सतायें तुमको,
तुम जो पा जाओ सताओ हमें कैसा-कैसा?"

छुपता नहीं छुपायेसे आ़लम उभारका।
आँचलकी तहसे देखो नमूदार क्या हुआ?

बता दें आ गया क्या तुमको इस उठती जवानीमें।
बता दें कानमें चुपकेसे क्या तुमको नहीं आया?

हम ग़रीबोंका अँधेरेमें निकल जायेगा काम।
जायें तो वह शमए-तुरबतको बुझानेके लिए॥
लेके उट्ठे सुबहको दर्दे-क़मर।
शामसे बैठे थे जो सर थामके॥
छेड़ना काफ़िर बुतोंका है सवाब।
जब मिलें उनको सताना चाहिए॥
गुद-गुदाता हो जिन्हें जिनका शबाब।
ऐसे मअ़शूक़ोंको छेड़ा चाहिए॥

निगाहसे बढ़के हैं गुस्ताख़ दस्ते-शौक़ मेरे।
न कोसियेगा ज़रा हाथ उठा-उठाके मुझे॥
निकाल दूंगा शबेवस्ल बल नज़ाकतके।
डरा लिया है बहुत त्योरियाँ चढ़ाके मुझे॥

इतनी बेअदबीके बाद भी 'रियाज़' को सब्र नही होता, वे कुछ और आगे बढ़ते है। अब तक उर्दू-शाइरीके जितने भी अनगिनत आशिक हुए है, वे अपने मअशूकको ख़ुदा या ख़ुदासे बढकर समझते रहे है—

दावरके[1] सामने बुते-क़ाफ़िरको क्या कहूँ?
दोनोंकी शक्ल एक है किसको ख़ुदा कहूँ?
मारो भी तुम जिलाओ भी तुम, तुमको क्या कहूँ?
तुमको ख़ुदा कहूँ या ख़ुदाको ख़ुदा कहूँ॥

—अज्ञात

और उनकी एक जुम्बिशपर जान-न्योछावर करनेको प्रस्तुत रहे हैं। जीवन भर उनको प्रसन्न करने और मनानेमे व्यस्त रहे, परन्तु सफलता शायद ही किसीको प्राप्त हुई हो। लेकिन 'रियाज़' दूसरे ही ख़मीरसे बने है। उनके समक्ष मअशूक रूठनेकी हिम्मत तो तब करे, जब 'रियाज़' मनानेके आदी हो। वे तो बात-बेबात स्वय ही रूठे रहते हैं—

छेड़ कैसी? बात करते रूठ जाते हैं 'रियाज़'।
एक हसीं हर वक़्त हो उनको मनानेके लिए॥

इन हसीनोंने कहा क्या, कि ख़फ़ा हो बैठे।
बात क्या थी कि 'रियाज़' आप बुरा मान गये॥

रूठनेका सबब और क्या होता? सृष्टिके आदिसे प्रेयसियाँ, प्रेमियोको सताती, तरसाती आ रही है। उन्हीका बदला 'रियाज़' गिन-गिनकर ले रहे है।

पाक़ीज़ा कलाम

"अमाँ दफ़ान नी करो इस बयानको। इस फ़वाहिशातके अलावा कुछ पाक़ीज़ा भी है 'रियाज़'के यहाँ?"

---

[1] ख़ुदाके।

"है क्यों नहीं, मगर वही आटेमें नमककी तरह।"

"वह भी क्या कम है, ज़रा सुने तो सही क्या फ़र्माया है 'रियाज़' साहबने?"

फ़र्माया है—

मुफ़लिसोंकी ज़िन्दगीका ज़िक्र क्या?
मुफ़लिसोंकी मौत भी अच्छी नहीं॥

"वाह, क्या बात है! मुफ़लिसोंकी वह डरावनी तसवीर खींची है कि दाद देनेको शब्द नहीं। मालूम होता है कोई दीन-दुखियोंको देखकर अंगारोंपर लोट रहा है।"

"अरे साहब, यह शेअर सुनिए, मालूम होता है 'रियाज़' विश्व-वेदनाको सीनेसे लगाये घूम रहे हैं। जिसका दिल दीन-दुखियोंके लिए ओत-प्रोत न हो, क्या खाकर ऐसा शेअर कहेगा?

मेरे सिवा नज़र आये न कोई दोज़ख़में।
किसीका जुर्म हो मालिक! मुझे सज़ा देना॥

"आप क्या फ़र्मा रहे हैं? रियाज़-जैसा रंगीन मिज़ाज ऐसा दर्दीला कलाम भला कैसे कह सकता है?"

और सुनिए—

अगर बढ़ जाय यारब! इस क़दर सोज़े-मुहब्बतका।
जहन्नुममें हर अंगारेको समझूँ फूल जन्नतका॥

उनका पाकीज़ा इश्क़ देखिए—

ताअतका इन बुतोंने सलीक़ा सिखा दिया।
बुत क्या मिले कि मुझको ख़ुदासे मिला दिया॥

जिनमें चर्चा न कुछ तुम्हारा हो।
ऐसे अहबाब, ऐसी सुहबत क्या?*

कुछ नीतिपूर्ण—

जिनके दिलमें है दर्द दुनियाका।
वही दुनियामें ज़िंदा रहते हैं॥
जो मिटाते हैं ख़ुदको जीते जी।
वही मरकर भी ज़िंदा रहते हैं॥

मौतसे बदतर बुढ़ापा आयेगा।
जानसे अच्छी जवानी जायगी॥

क्या सुरमा भरी आँखोंसे आँसू नहीं गिरते?
क्या मेंहदी लगे हाथोंसे मातम नहीं होता?

जब अभिलाषाएँ त्यक्त कर दी तो—

हमें ख़ुदाके सिवा कुछ नज़र नहीं आता।
निकल गये हैं बहुत दूर जुस्तजूसे हम॥
हुए पस्त ऐसे उनकी ख़ाक भी उड़ते नहीं देखी।
रहे रहनेको कितने इस ज़मींपर आस्माँ होकर॥

गुल-ओ-बुलबुलको लक्ष्य करके—

हाय क्या झटपट क़फ़समें बालोपर पैदा किये।
जब सुना हमने कि जाती है बहार आई हुई॥

---

*हसरत मोहानीने भी क्या ख़ूब कहा है—

शब वही शब है, दिन वही दिन है।
जो तेरी यादमें गुज़र जाये॥

नशेमनमें गुज़रे कई मौसमे-गुल।
क़फ़समें जो टूटे थे वोह पर न निकले॥
चमनमें हम आये जो छुटकर कफ़ससे।
महीनो नशेमनसे बाहर न निकले॥

उजाड़ते हुए सौ बार आशियाँ देखा।
चमनमें रहके तुझे ख़ूब बाग़बाँ देखा॥
सूए-चमन जो चले लूटने बहारका लुत्फ़।
तो हमने दो क़दम आगे तुझे ख़िज़ाँ देखा॥
यह फूल लेके अनादिल[1] चले चमनसे कहाँ।
ज़रूर मेरी लहदका[2] कहीं निशाँ देखा॥
गोशेसे[3] नशेमनके आहोंका असर देखा।
सैयादका घर जलते बे-बर्क़ो-शरर[4] देखा॥
यूं हश्रमें सैरकी फ़िर्दौसो-जहन्नुमकी[5]।
कुछ देर इधर देखा कुछ देर उधर देखा॥

ख़ुश किया यूं बाग़में लाकर मुझे सैयादने।
शाख़के नीचे कफ़स है आशियाँ बालाए-सर[6]॥

कोई सौ बार उड़े, सौ बार बैठे।
कफ़ससे यूं हम आये आशियाँ तक॥

मुंह बंधी कलियोंके जोबनका यह कहता है उभार—
"अपने सीनेसे हमें कोई लगाले बुलबुल॥"

कफ़स दस्ते-सैयादमें, हम कफ़समें।
यह काम आई है ख़ुश बयानी हमारी॥*

---

*इसी मज़मूनको अख़्तर गोण्डवीने क्या ख़ूब बांधा है—
नग़मए-दर्द छेड़ा हमने इस अन्दाज़से।
ख़ुद-ब-ख़ुद पड़ने लगी हमपर नज़र सैयादकी॥

[1]बुलबुलोंका समूह, [2]कब्र; [3]कोनेसे; [4]बिजली-आगसे जला; [5]स्वर्ग-नरककी; [6]सिरके ऊपर।

हमने अपने आशियाँके वास्ते।
जो चुभे दिलमें वही तिनके लिये॥
साया भी शाखे-गुलका न हमको हुआ नसीब।
ऐसे कई बहारके मौसम गुज़र गये॥
वाए-क़िस्मत जब क़फ़सका दर खुला।
उड़गई ताक़त परे-परवाज़की[1]॥

अन्य फुटकर कलाम—

ज़ुल्फोंमें आप बैठके मोती पिरोइए।
आँसू न पोंछिए किसी आशुफ़्ता[2]-हालके॥

जो खिला फूल, बना ज़ख्म मेरे दिलका 'रियाज़'!
जो कली रह गई खिलनेसे बना दिल मेरा॥

बच जाय जवानीमें जो दुनियाकी हवासे।
होता है फ़रिश्ता कोई इन्साँ नहीं होता॥

यह मेरे दोशसे[3] होते नहीं जुदा दमे-नज़अ[4]।
गड़ेंगे मेरे फ़रिश्ते मेरे मज़ारमें क्या[5]॥

उम्रभर कातिबे-अअ्माल[6] फ़रिश्ते ही रहे।
पाके सुहबत भी न आया इन्हें इन्साँ होना॥

लिये नाकूस[7] कोई दैरवाला[8] आज आया है।
अगर सच है तो कअ्बेमें मज़ा वक़्ते-अज़ाँ होगा॥

रहमकर मालिक कि हैं दो-दो फ़रिश्ते भी लदे।
और फिर इसियाँका[9] भी बारे-गिराँ[10] बालाए-सर[11]॥

---

[1]उड़नेवाले परकी; [2]दु:खियाके; [3]कन्धेसे; [4]मृत्युके समय भी; [5]इस्लाम धर्मके अनुसार हर इन्सानके कन्धोपर किसमत कातिबीन नामक फरिश्ते सवार रहते है और यही दोनों उसकी नेकी-बदीका ब्योरा लिखते रहते है; [6]पुण्य-पाप-लेखक; [7]शख; [8]पुजारी; [9]पापका; [10]भारी बोझ; [11]सिरके ऊपर।

हाँ वही फिर कअ़बा बन जायेगा ऐ शैखे-हरम !
बुतकदेका पहले नक़्शा खींच, फिर नक़्शा बिगाड़ ॥

हमें ठुकराते जायें जो वहाँ जायें।
पहुँच जायें यूँही हम आस्तांतक[1] ॥
'रियाज़' ! आनेमें है उनके अभी देर।
चलो हो आयें मर्गे-नागहाँ[2] तक ॥

आँखो में अश्क आये तो हँसनेका लुत्फ क्या ?
इतना न गुदगुदाओ कि हम रो दिया करें ॥

मैं जो पहुँचा तो लिये उठके बगोलोंने क़दम।
नज्दमें[3] धूम मची "कैसका उस्ताद आया" ॥
कलीम ! जाके जहाँ होश अपना खो आये।
वहाँ तो रोज़ हम आँखें लड़ाने जाते हैं ॥*
कभी आजाती है फ़ज्रमें हमें दैरकी[4] याद।
बैठे-बैठे कभी नाकूस[5] बजा देते हैं ॥

लगादो ज़रा हाथ अपनी गलेमें।
जनाज़ा लिये दिलका हम जा रहे हैं ॥
बाहम[6] शबे-विसाल उठाये हैं क्या मज़े।
वोह भी यह कह रहे हैं—"इलाही सहर[7] न हो" ॥
वोह जुर्म ढूंड-ढूंड कर करता हूँ रात-दिन।
लिक्खें तो कातिबाने-अमल[8] पर अताब[9] हो ॥

---

*इसी मज़मूनसे लड़ता हुआ बिस्मिल शाहजहाँपुरीका शेर भी खूब है—
नहीं मालूम मूसा तूरसे क्यों बेक़रार आये ?
मेरी मंज़िलमें ऐसे मरहले तो बे-शुमार आये ॥

[1]प्रेयसीके द्वार तक; [2]नागहानी मौत; [3]अरबमें एक जगह है; [4]मन्दिरकी; [5]शंख, [6]परस्पर, [7]सुबह; [8-9]करनी-लेखकों पर ईश्वर कोप करे।

शुक्रे-बेदाद[1] तो हो, शिकवए-बेदाद[2] न हो।
मेरे लबपर[3] हो तबस्सुम[4] कभी फरियाद न हो॥
हो वफ़ा[5] जिसमें वोह मअ़शूक़ कहाँसे लाऊँ ?
है यह मुश्किल कि हसीं[6] हो, सितमईजाद[7] न हो॥

रखदूँ हरममें[8] दैरसे[9] लाकर अगर उसे।
नाक़ूस[10] भी ख़ुदाको पुकारे अज़ांके साथ॥*

बज़्मे-महशरमें[11] न रखती उसकी रहमत[12] इम्तियाज़[13]।
लुत्फ होता रिन्द-ओ-ज़ाहिद सब बराबर बैठते॥

कलीम आये तो खुलके जलवा दिखाया।
हम आये तो पर्देसे बाहर न निकले॥

जीमें आता है अभी जाके ख़ुद उससे पूछूँ—
"बात क़ासिदकी तेरे मुँहकी कही है कि नहीं॥"

जो फिर रहा है ख़िज़्रका साया बना हुआ ?
भटका हुआ यह मेरा कोई नामावर न हो॥

कुर्बान अपने कसरते-इसयांके[14] बार-बार।
महशरमें सबसे पहले हमारी पुकार है॥
मज़े लूटो कलीम ! अब बन पड़ी है।
बड़ी ऊँची जगह किसमत लड़ी है॥

---

*बरहमन नालएनाक़ूस मस्जिदतक जो पहुँचादे।
बुरा क्या है मुअज़्ज़िन भी अगर बेदार हो जाये॥
—जालंधरी

[1]अत्याचारके लिए धन्यवाद, [2]अत्याचारकी शिकायत; [3]ओठोंपर; [4]हँसी; [5]नेकी, भलाई; [6]सुन्दर, ; [7]अत्याचार-आविष्कारी, [8]मस्जिदमें; [9]मन्दिरसे; [10]शख, [11]प्रलयके बाद ख़ुदाके दर्बारमे, [12]ख़ुदाका रहम; [13]भेद-भाव; [14]पापोंकी अधिकताके।

बड़ी कोई नट-खट है या रब! क़ज़ा भी।
चुने बाँके-तिरछे जवाँ कैसे-कैसे॥

सैरको निकलें वोह अपनी रहगुज़रसे[1] बे-हिजाब[2]।
और रक्खी हो हमारी लाश कफ़नाई हुई॥

जब चले सूए-लहद[3] मुड़के न देखा घरको।
ऐसे रूठे कि किसीसे भी मनाये न गये॥

जब चली आस्माँसे कोई बला।
सीधी मेरे मकानपर आई॥

चली जाती है उनके घर मेरी नींद।
जाके फिर रात भर नहीं आती॥

उतरनेवाले अभीतक न बामसे[4] उतरे।
तड़पनेवाले तड़पकर फ़लकको[5] छू आये॥

जब चला मैं दो क़दम तो ज़ोअ़फ़ने[6]।
खाके अपने सायेको[7] ठोकर गिरा॥
दिल गिरा अन्धे कुएँमें इश्क़के।
साथ अपने मुझको भी लेकर गिरा॥

आगे तो रक़ीबोंको[8] उठा लेते थे सख़्ती।
यह ज़ोअ़फ़ है उठता नहीं अब नाज़[9] किसीका॥

होके बेताब बदल लेते थे अक्सर करवट।
अब यह है ज़ोअफ़ कि क़ाबू से है बाहर करवट॥

नज़अ़में[10] यारसे पैमाने-वफ़ा[11] करते हैं।
इस दग़ाबाज़से हम आज दग़ा करते हैं॥

---

[1]कूचेसे, रास्तेसे; [2]बेपर्दा; [3]कब्रिस्तानकी तरफ, [4]कोठेसे, [5]आस्मानको; [6]निर्बलतासे; [7]परछाईंको, [8]प्रतिपक्षियोंको, [9]नख़रा; [10]मृत्यु-समय, [11]नेकी करनेका वअ़दा।

जाना था कि आना था जवानीका इलाही!
सैलाबकी[1] थी मौज[2] या झोंका था हवाका?

राह चलते हुई है दौलते-दीदार[3] नसीब!
इसमें एहसान नहीं आपके दरबानोंका॥

बुत ख़ुदा हों कि न हो, है मगर इतनी तौक़ीर[4]।
बुतकदा आज भी कअ़बा है मुसलमानोंका॥

मुझको दरबाँने निकाला इस तरह।
उनके दरपर रह गया बिस्तर पड़ा॥*

उनकी गलीमें रात मैं इस वज़अ़से गया।
घबराके पासबान[5] गिरे पासबानपर॥

गालियाँ भी नहीं तक़दीरमें उनके मुँहकी।
उनके दरबाँ कभी दो-चार सुना देते हैं॥

ज़रूर क़स्द[6] किया उसने बामे-लैलाका[7]।
बुलन्द[8] आज बहुत क़ैसका ग़ुबार[9] गया॥

दामनमें फूल लेके चले थे उदूके[10] घर।
हसरत पुकार उठी कि "हमारे मज़ारपर"॥

जवाँ होने न पाये थे कि दिल आया हसीनोंपर।
अजल[11] यह कहती आई—"क्या करोगे तुम जवाँ होकर?"

---

*दरपै पड़नेको कहा और कहके कैसा फिर गया।
जितने अ़रसेमें मेरा लिपटा हुआ बिस्तर खुला॥
—ग़ालिब

[1]बाढ़, बहाव; [2]लहर; [3]झलकरूपी दौलत; [4]गौरव; [5]दरबान; [6]इरादा; [7]लैलाके कोठे तक पहुँचनेकी; [8]ऊँचा; [9]वह बगोला जो रेगिस्तानमें धूलका उठता है; [10]प्रतिद्वन्द्वीके, [11]मृत्यु।

घटती नहीं तुरबतमें[1] भी फ़ुरक़तकी[2] अज़ीयत[3]।
यह दर्द वोह है मरके भी जो कम नहीं होता॥

किस लुत्फ़से खुली हुई आँखें हैं बादे-मर्ग[4]।
हम मिट गये मज़ा न मिटा इन्तज़ारका॥

मुँहको आया है कलेजा सौ बार।
हाय आलम[5] शबे-तनहाईका[6]॥

यह कोहकनके[7] भी काटे तो कट नहीं सकती।
पहाड़ हो गई फ़ुरक़तकी हमको भारी रात॥

कमज़ोर हुए अश्कोंसे घरके दरो-दीवार।
रोनेके लिए लेंगे किरायेका मकाँ और॥

यह टूट-टूटके तारे नहीं गिरे शबे-हिज्र[8]।
फ़लकने[9] साथ मेरे की है अश्कबारी[10] रात॥

यही दिन थे सौ-सौ तरह तुम सँवरते।
जवानी तो आई सँवरना न आया॥
सुनाकर वोह कहते हैं किस भोलेपनसे—
"हमें वादा करके मुकरना न आया॥"

हश्रके रोज़ भी क्या ख़ूने-तमन्ना[11] होगा।
सामने आयेंगे या आज भी पर्दा होगा॥
शर्मे-इस्यांसे[12] नहीं उठती हैं पलकें ऊपर।
हम गुनहगारोंने क्या हश्रमें पर्दा होगा?

---

[1]क़ब्रमें, [2]जुदाईकी; [3]तकलीफ़, [4]मरनेके बाद, [5]हाल; [6]विरह-रात्रिका, [7]फ़रहादके, [8]विरहकी रातमें, [9]आस्मानने, [10]आंसु गिराये हैं, [11]इच्छाओंका ख़ून; [12]अपराधोंकी शर्मसे।

यह आधी रातको उनका पयाम[1] आया है।
"हम आज आ नहीं सकते, अब इन्तज़ार न हो" ॥

तरीक़े-इश्क़के रहरौ[2] कभी-कभी अब भी।
जनाबे खिज़्रको रस्ता बताने जाते हैं॥

अब क्या मिलेगा आँसुओंमें दिल निकल गया।
वह क़ाफ़िला भी तो कई मंज़िल निकल गया॥

लूटे मज़े हयाके उठाये अदाके लुत्फ़।
पहरोंसे आज मुझको तसव्वुर[3] किसीका है॥

इश्क़में ख़ूब दिन गुज़रते हैं।
रोज़ जीते हैं, रोज़ मरते हैं॥

ख़ुदाके हाथ है, बिकना न बिकना मैका ऐ साक़ी।
बराबर मस्जिदे-जामअ़के हमने अब दुकाँ रखदी॥

२० अप्रैल १६५२]

[1]सन्देश; [2]प्रीति-रीति पर चलनेवाले, [3]ध्यान, ख़्याल।
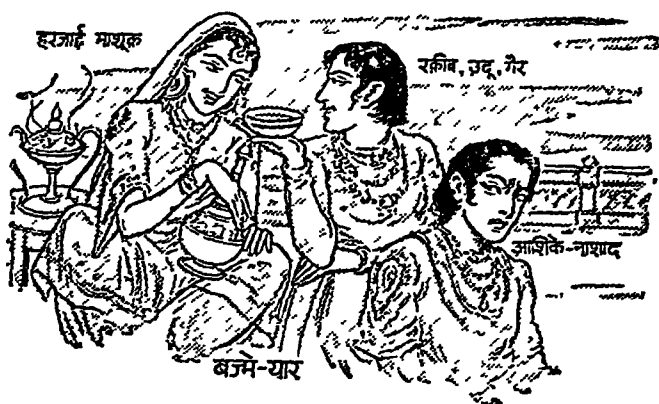
....जी, बन्दानवाज़ ! आप ही हज़रते-'दिल' हैं, जो मअशूकोंकी मुट्ठीमें रहते हैं। कानपुरके एक मुशाइरे मे जब दिल साहबका नम्बर आया तो संयोजकने परिचय दिया—"आप हज़रते-दिल हैं, जो आशिकोंके पहलूमें रहते हैं।"

दिलने तुरन्त जवाब दिया—"अब तो मअशूकोंकी मुट्ठीमें रहता हूँ।"

एक बार शाहजहाँपुरके आल इण्डिया किस्मके मुशाइरेमें—'दिल' 'नूह' नारवी, और 'सीमाब' अकबराबादी पास-ही-पास बैठे हुए थे। 'फ़ैयाज़' शाहाबादीने अपनी ग़ज़लका यह मिसरअ पढ़ा—

'उनके दिलकी धड़कनें सुनते हैं अपने दिलसे हम'

सुनते ही 'सीमाब' साहबने एअतराज़ किया—"क्या दिलकी धड़कनें सुनी भी जाती हैं?"

दिलने बरजस्ता जवाब दिया—"जी हाँ, मगर कानोसे नही, दिलसे।"

एक बार आप मुरादाबादके मुशाइरेमें गये तो जिस सज्जनके यहाँ आप ठहराये गये, उन्होने दिनके दो बजे तक न नाश्तेको पूछा, न खाना मँगवाया। सफरके हारे-थके, भूखसे परेशान। दिलसे जब भूख बर्दाश्त न हो सकी तो दौराने-गुफ्तगू अपने साथ गये शागिर्दको दो रुपये देकर फ़र्माया—"ज़रा बाज़ार जाकर एक बोरिया और एक सिगरेटकी डिब्बी ले आओ।"

मेज़बानने हैरान होकर बोरिया मँगवानेकी वजह पूछी तो आपने कहा—"मेरी आँतें उसपर कुल-होवल्लाह पढेंगी।"

मेज़बान बहुत झेंपा, और अपनी गफलतके लिए नादिम-सा होकर दस्तरख़्वान चुनवानेके लिए लपका।

हज़रते-दिलका पूरा नाम हकीम ज़मीरहसनख़ाँ है। 'एअ़्तबारुल मुल्क'की उपाधिसे आप विभूषित हैं। शाइरीमें लखनवी स्कूलके स्नातक हैं। 'जलील' मानिकपुरीकी मृत्युके बाद अपने उस्ताद 'अमीर' मीनाईके आप पट्टशिष्य निर्वाचित हुए हैं।

'दिल' कौमके पठान हैं। आपके खान्दानमे ब-कसरत-औलिया और दुर्वेश (साधु-फ़कीर) गुज़रे हैं। आपके बुजुर्गोंमे दो महानुभाव ऐसे भी हुए हैं, जिन्होने करबलाकी मशहूर जंगमे हज़रत हुसेनके हमराह शरबते-शहादत नोश फर्माया था। आपके पूर्वज जहाँगीरके शासन-कालमें भारत आये थे, किन्तु उनके भक्तो-मुरीदोकी बहुत बडी संख्या देखकर हुकूमतको उनमे राजनैतिक गन्ध आने लगी। अतः उन्हे चुनारके किलेमें कैद कर दिया गया और वही उनकी बन्दी अवस्थामे ही १५९७ ई० मे मृत्यु हुई। उन्हीकी सन्तान १६३८ ई० के करीब शाहजहाँपुरमे आकर आबाद हो गई।

शाहजहाँपुरमे ही १८७५ ई० मे दिल पैदा हुए। वही आपने अरबी-

फारसीकी शिक्षा प्राप्त की और वही आप रहते हैं। आपके पूर्वजोमें दुर्वेशो, मौलवियो, धार्मिक विचारके व्यक्तियोकी वहुतायत रही है। कई पुश्तोंसे यूनानी चिकित्सक भी होते आ रहे हैं। अत आपने यूनानी चिकित्साका भी वाकायदा अध्ययन किया। आप शाहजहाँपुरके ख्याति प्राप्त हकीम हैं। लेकिन आपने इसे आजीविकाका साधन न वनाकर धर्मार्थ ही रखा। आपकी नि स्वार्थ चिकित्सामे गरीव-अमीर सभी कौमके लोग लाभ उठाते हैं।

आजीविकाकी चिन्तासे आप स्वराज्य होनेसे पूर्व निश्चिन्त थे। अच्छी-खासी ज़मीदारी थी। ठेकेदारी आदिका भी अच्छा व्यवसाय था। और आज भी निश्चिन्त से-ही हैं। आपके वडे साहवज़ादे वकालत करते है, और छोटे साहवज़ादे घरका कारोवार देखते हैं। आप इस ८२ वर्षकी वृद्धावस्थामे भी सुवहको मतव करते हैं, फिर शागिर्दोंके कलाम पर इस्लाह फर्माते हैं, और आने-जानेवालोंसे मुलाकात करते-रहते हैं।

शाइरीका चस्का आपको १५-१६ सालकी उम्रमे ही लग गया था। लेकिन कामिल उस्ताद न मिलनेकी वजहसे शुरू-शुरूमे आप किसीसे मशविरा लिये वगैर ही शेअर कहते रहे। मगर योग्य उस्तादकी खोजमें पूर्ण प्रयत्नशील रहे। आखिर आपकी नज़रे-इन्तिख़ाव 'अमीर' मीनाईपर पडी जो कि उन दिनो लखनवी स्कूलके ख्यातिप्राप्त उस्ताद थे।

प्रारम्भमे आप पत्र-व्यवहार-द्वारा उनसे संशोधन लेते रहे। फिर १८९८ ई० मे रामपुर जाकर उस्तादके दर्शनोका भी सौभाग्य प्राप्त किया। आप किन्ही अनिवार्य कारणोंसे उस्तादके यहाँ न ठहरकर अन्यत्र ठहरे। प्रात काल उपस्थित हुए तो उस्तादने वहुत स्नेह-पूर्वक गले लगाया और अपने यहाँ न ठहरनेका कारण पूछा। दिलके यथोचित समाधान करने-पर उस्तादको फिर कुछ गिला न रहा और अपने पास बैठाकर शेअरो-अदव और इल्मो-फनपर वार्त्तालाप करते रहे। दिलकी जिज्ञासा-वृत्ति और शाइरीकी लगन और समझसे प्रसन्न होकर उस्तादने फर्माया—"तुम्हारी

शोखिए-तवअ्से जाहिर होता है, कि दुनिया-ए-शाइरीमें तुम्हारा मुस्तक-बिल (भविष्य) वहुत नुमायाँ (शानदार) होगा।"[1]

उस्तादकी भविष्यवाणी अक्षरश. सत्य प्रमाणित हुई। उर्दू-संसारके ख्याति प्राप्त—अल्लामा 'इकवाल', 'नियाज़' फतहपुरी, सर सुलेमान, 'रियाज़' खैरावादी, 'जलील' मानिकपुरी, 'सफ़ी' लखनवी, 'आर्ज़ू' लखनवी, 'फानी' वदायूनी, 'जोश' मलीहावादी, 'सीमाब' अकबरावादी, आल अहमद-सुरूर, 'मजनूँ' गोरखपुरी, 'यगाना' चगेज़ी, आदि शाइरो, समालोचकोने आपकी शाइरीकी मुक्त कण्ठसे सराहना की है।[2]

वार्त्तालापके प्रसगमें हज़रत 'दाग'का ज़िक्र आ गया तो उस्ताद (अमीर मीनाई) ने फर्माया—"जो लोग मुझे खुश करनेके लिए मेरे सामने 'दाग़'को वुरा-भला कहते है। मेरा जी चाहता है कि उनका मुँह नोच लूँ। भला 'दाग़'की कोई हमसरी (वरावरी) कर सकता है ? हाय, कोई इस शानका शेअ्र कहकर तो सुनाये—

खारे-हसरत वयानसे निकला।
दिलका काँटा ज़वानसे निकला[3]॥

'दिल' साहव उस्तादके यहाँसे विदा लेकर अपने ठहरनेकी जगह पहुँच ही पाये थे कि 'जलील' मानिकपुरी अपने साथ एक मुलाज़िमको लिये हुए वहाँ मौजूद मिले। मिठाईका थाल मुलाज़िमके सरपर था। 'दिल'ने आश्चर्य चकित होकर देखा तो 'जलील'ने फ़र्माया—"किवला-ओ-कअ्वाने यह शीरीनी और दस रुपये आपके लिए भेजे है।"

'दिल' साहवने उज्र पेश किया—"यह तो मेरा फ़र्ज़ था कि उस्ताद-की खिदमतमें नज्र पेश करता न कि उस्ताद का।" 'जलील' साहवने

---

[1]'तरानए-दिल पृ० ३; [2]इन सवकी सम्मतियोके लिए देखें—'तरानए दिल' पृ० ३-१०; [3]'नकूश' शख्सियात नम्वर २, पृ० १४५० ।

कहा—"उस्तादका इरशाद है कि मैं दिलको मिस्ल अपनी औलादके अपना बच्चा समझता हूँ। बच्चोको शीरीनी खिलाना बड़ोका फर्ज है।" आखिर बहुत हील-हुज्जतके बाद रुपये वापिस करके मिठाई ले ली।[1]

'अमीर-मीनाई'-जैसा योग्य, अनुभवी, गुण-ग्राहक, मेहमाँ-नवाज, कृपालु उस्ताद पाकर 'दिल' निहाल हो गये। उस्तादके उपर्युक्त गुण 'दिलको' भी वरासतमे मिले। 'दिल' स्वभावत. शाइर है। शाइराना दिलो-दिमाग़ लेकर जन्मे हैं। अन्यथा आपका पारिवारिक वातावरण शाइरीके लिए कतई विपरीत था। फकीरो-मौलवियोके खान्दानमे पैदाइश, पठान-जैसी जगजू कौमका नसल्न खून, रोते-झीकते रोगियोंका समूह, जमीदारीकी अकड फूँ, ठेकेदारी करते हुए दिन-रात मजदूरोसे दिमाग़ पिच्ची। मौलवीयाना मजहबी तालीम।

फिर भी शाइर, और शाइर भी कैसे ? प्रथम श्रेणीके गजलगो शाइरोमें जिनका आसन हो। और अपने बुलन्द मर्तबेके लिहाजसे समकालीन शाइरोमें इज्जतो-एहतरामसे देखे जाते हो।

'दिल'ने उस शाइराना माहौलमें शाइरीका दामन पकडा, जो कि शोखी-ओ-रगीनीकी चरमसीमा छू रहा था और जिसके डाँडे 'इशा' और 'जुरअत'की सरहदोंसे मिले हुए थे। 'अमीर मीनाई' जैसा उस्ताद पाकर भी जो कि 'दाग़'के रगमे शराबोर हो रहा था। 'दिल' अपना दामन बचाकर साफ बेदाग़ निकल गये और उन्होने अपना जुदागाना रग अख्तियार किया। 'दिल' सजीदा और गम्भीर है, परन्तु उनका कलाम शुष्क और नीरस नही। अल्लामा नियाज फतहपुरीके शब्दोमें—

"यूँ तो उनके यहाँ शोखी भी है लेकिन तहजीबके साथ। छेड-छाड भी है, मगर हुदूदे मतानत (सजीदगीकी सीमा) के अन्दर। तजनिगारी (व्यग्य) भी है, मगर दिल-शिकन नही। बेबाकी भी है, लेकिन गुल-

---

[1] नकूश शख्सियात नम्बर ?, पृ० १५५०।

खेलनेवाली नही। वे हँसते भी है, लेकिन तवस्सुमकी हदतक। वे ज़ब्त भी हाथसे खो देते है, लेकिन जामादरी (नग्नता)से इसी तरफ। यकीनन उनके यहाँ आपको वह जोशो-खुरोश नजर न आयेगा, जो इश्के-बेताव (प्रेमकी तडप) की खुसूसियात (विशेषताओ)मे दाखिल है। न उनके कलाममें वह सोजो-गुदाज (जलन, तडप, वेचैनी) मिलेगा जो शाइरीको यकसर वैन और मर्सिया (शोक-सन्तप्त कविता) वना देता है। लेकिन इस वाव (विषय)में वे मअ़जूर (लाचार) थे। क्योकि जो आज़ादीसे हँस नही सकता, वह दिल खोलकर रोता भी नही है। कुदरत इस कदर ज़ालिम नही कि जिसे वह हँसने न दे, उसे रुला-रुलाकर हलाक कर डाले[1]।"

हज़रते 'दिल'ने अवसे ४८-५० वर्ष पूर्व ही दुनियाए-शाइरीमें अपना जो स्थान वना लिया था, उसकी एक झलक अल्लामा नियाज़ फतहपुरीकी प्रस्तावनारूपी दर्पणमें देखिए—

"सन् १९०९ का वाकेआ है। सैयद इल्तेफात रसूल (मरहूम) तअल्लुकेदार सँडीलाके यहाँ सालाना मुशाइरेकी तकरीवमें (वे मुवालिगा) हज़ारो शुअ़राका हुजूम है। और मै भी एक तमाशाई या तमाशा वननेवाले शाइरकी हैसियतसे वगैर किसी काविले-इल्तेफात जगहको घेरे हुए इस महफिलमे एक फर्दे-हकीर (साधारण व्यक्ति) की हैसियतसे शरीक हूँ। 'इन्शा' की मशहूर गज़लका मशहूर मिसरअ—

"तुझे अठखेलियाँ सूझी है, हम वेज़ार वैठे है"

मिसरअ तरह था। महफिले-शेअर गर्म है, और दादो-तहसीन (प्रशसात्मक वाह-वाह)के नअरोसे वज्मे-मुशाइरा गूँज रहा है। लेकिन मै कि उस वक्त भी मुश्किल ही से कोई शेअ़र किसीका मुझे पसन्द आता था। खामोश वैठा सिर्फ सुन रहा हूँ और देख रहा हूँ।

---

[1]तरानए-दिल पृ० २८।

जनाव 'फसाहत' लखनवी मरहूम (अमानत लखनवीके पुत्र) ग़ैरतरहमें अपनी एक निहायत ही मअरकतुलआरा (अत्यन्त सफल) ग़ज़लका मतलअ सुनाते हैं—

ख़ुदा जहाँमें मुझे सूरते-असा[1] न करे।
ठहर-ठहरके उठाऊँ कदम ख़ुदा न करे॥

सारी महफिल दफअतन चीख़ पडती है। मैं भी बेइख्तियार हो जाता हूँ। लेकिन शेअरसे नहीं, उसके मफहूम (भाव)से नहीं, वल्कि-जनाव फसाहतके तरीके-अदासे, उनके अन्दाज़े-शेअरख्वानीसे।

इसी तरह जनाव अफज़ल (अमीरके[2] बेटे) जो उस वक्त सरामद शुअराए-लखनऊ (ख्याति प्राप्त शाइरोंमें) शुमार होते थे। और दीगर अकाविरे-फन (बहुत-से तत्कालीन श्रेष्ठ शाइर) तरह और ग़ैर तरहमें ग़ज़लें सुनाते हैं और स्टेज (मंच) पर अपने-अपने फराइज अदा करके बैठ जाते हैं। मगर यहाँ न दिलको जुम्बिश होती है, न रूहमें कोई इह-तज़ाज़ (हृदय कमल खिलना था)।

दूसरा दिन तुलूअ होता है, और दोपहरसे दूसरी सुहबते-शेअर बरपा होती है। जो ज्यादा मख़सूस, ज्यादा अहम (विशेष और महत्त्वपूर्ण) है। क्योंकि इसमें सिर्फ उस्तादे-फन (उस्तादाना मर्तबेके शाइरों) ही को अपना-अपना तरही कलाम सुनाना है। कामिल दो घण्टेके शोरो-शग़बके बाद एक शाइरने जो वज़अ-क़तअ (वेष-भूषा) शक्लो-शमाइलके लिहाज़से मुझे बहुत मतीन (गम्भीर) और संजीदा नज़र आया। बग़ैर किसी ख़ास एहतेमाम या तेवरके तरहकी ग़ज़ल शुरूअ की जिस वक्त उसने यह शेअर पढ़ा—

---

[1] हाथकी लाठीके समान; [2] 'अमीर' हज़रत दिल शाहजहाँपुरीके उस्ताद अमीर मीनाईके उस्ताद थे। आपका परिचय एवं कलाम शेरो-सुख़नके प्रथम भागमें दिया जा चुका है।

न वोह् आरामे-जाँ आया, न मौत आई शबे-वअ़दा।
इसी धुनमें हम उठ-उठकर हज़ारों बार बैठे हैं॥

तो मैं कुछ सोचनेपर मजबूर हुआ। बअ़्ज़ अगले-पिछले वाकेआत सामने आ गये और दिमाग वार-वार यही दुहराने लगा कि—

"न वोह् आरामे-जाँ आया, न मौत आई शबे-वअ़दा"

वे इख़्तियार जी चाहा कि पूछूं यह कौन साहब हैं। लेकिन ख़ामोश रहा। यहाँ तक कि जब वे इस मक़्तेपर पहुँचे—

वोह मशग़ूले-सितम हैं और हम मसरूफ़े-ज़ब्त ऐ 'दिल'!
न वोह बेकार बैठे हैं, न हम बेकार बैठे हैं॥

तो मैंने आख़िरकार अपने करीब किसी साहबसे पूछ ही लिया कि यह 'दिल' कौन साहब हैं?······

यह था मेरा और हज़रते-'दिल' शाहजहाँपुरीका अव्वलीन तआ़रुफ़ (प्रथम परिचय)।······ज़माना गुज़रता गया, मुतालअ वसीअ (अध्ययन गहन) होता रहा। तजरुबात (अनुभवो)मे इज़ाफे (विस्तार) होते रहे। मुश्किल-पसन्द तबिअ़तका मेअ़यारे-तन्कीद (आलोचनात्मक स्तर) बुलन्द होता रहा। लेकिन—"न वोह आरामे-जाँ आया न मौत आई शबे-वअ़्दा" का लुत्फ़ उसीतरह क़ायम था और हज़रते 'दिल'की शाइरीने जो जगह दिमागमें पैदा करली थी, वह बदस्तूर कायम रही"।[1]

हज़रते-'दिल'की जिस गज़लका उल्लेख 'नियाज़' साहबने किया है, वह यहाँ दी जा रही है—

सरापा यास वोह् क्यों बनके मातमदार बैठे हैं।
कि चेहरा ज़र्द है, लब ख़ुश्क हैं, रुख़सार बैठे हैं॥

---

[1]तरानए-दिल पृ० १४-१६।

सुरूरे-कैफ वे पायाँसे हम सरशार बैठे हैं।
दिमाग़ अब अर्शे-आलापर हैं, पेशे-यार बैठे हैं॥

शबाब आया कि उन नीची निगाहोंने ग़ज़ब ढाया।
यह फ़ित्ने सर उठानेके लिए तैयार बैठे हैं॥

हमींको यह तमन्ना है कोई पामाल कर डाले।
हमीं हसरतज़दा ऐ शोख़िये-रफ़्तार बैठे हैं॥

निकल आई हैं कलियाँ फ़स्ले-गुलकी आमद-आमद है।
जो बेपर थे, वह उड़नेके लिए तैयार बैठे हैं॥

न वोह आरामे-जाँ आया, न मौत आई, शबे-वअ़दा।
इसी धुनमें हम उठ-उठ कर हज़ारों बार बैठे हैं॥

उधर अन्दाज़े-बेमेहरी जो पहले था वह अब भी है।
इधर यह हाल जब देखो पसे-दीवार बैठे हैं॥

वह मशग़ूले-सितम हैं और हम मसरुफ़े-ज़ब्त ऐ 'दिल'!
न वोह बेकार बैठे हैं, न हम बेकार बैठे हैं॥

इसी तरहमें दूसरी ग़ज़ल—

अजब तर्ज़े-अदा है, यूँ पए इज़हार बैठे हैं।
कि हम ख़ामोश मिस्ले-नक़्शे-पाए-यार बैठे हैं॥

कोई ऐ नातवानी फिर अबस हमको उठाता है।
ब-हालेज़ार आये हैं पसे-दीवार बैठे हैं॥

तेरा कूचा है गो दारुश्शिफ़ा अह्ले-मुहब्बतका।
मगर हम हैं, कि अपनी जानसे बेज़ार बैठे हैं॥

यहीं ना गर्मिये-बर्क़े-तजल्ली ख़ाक कर देगी।
यह परदा भी उठाकर ताल्बे-दीदार बैठे हैं॥

चले दौरे-मए रंगीं, खुले बोतल, ढले सागर।
हवा सनकी घटा उट्ठी है, क्यों मैख़्वार बैठे हैं॥

मिटानेसे कभी दाग़े-मुहब्बत मिट नहीं सकते।
यह वोह सिक्के हैं जो दिलपर हज़ारों बार बैठे हैं॥

हम उट्ठे हैं, तो उट्ठे हैं, गुबारे-राहकी सूरत।
जो बैठे हैं तो महवे-शोख़िये-रफ़्तार बैठे हैं॥

ज़रा समझे, ज़रा सँभले हुए ऐ हज़रते-वाइज़!
यह मैख़्वारोंकी महफिल है, यहाँ मैख़्वार बैठे हैं॥

मुझे दर पर जो देखा बोल उठे ऐ 'दिल' वह दरबाँसे–
"यह क्या कहते हैं, क्या मतलब है, क्यों बेकार बैठे हैं?"

हज़रते-'दिल'से जब परिचय हुआ है, तो लगे-हाथ उनके कलामपर भी एक नज़र डाल ली जाए। आपके कलामका सम्पूर्ण सकलन २०—३०, १६ पेजी साइज़ पृ० २८८ का १९५५ ई० मे प्रकाशित द्वितीय सस्करण हमारे सामने है। इसमे प्रथम अध्यायमे १९३२ से १९५५ तक, द्वितीय अध्यायमें १९०५ से १९३२ तक और तृतीय अध्यायमें १९०५ ई० पूर्वका कहा हुआ कलाम है। सकलनमे ग़ज़ले, रुबाइयाँ, नज्मे, मुखम्मस, सलाम दिये गये है। रुबाइयो, नज्मो वग़ैरहमे भी आपका उस्तादाना कमाल जाहिर होता है। मगर आपका वह खास फन नही। मुँहका ज़ायका बदलनेको कभी-कभार तफ़रीहन कह लेते है। आप गज़लगो उस्ताद है अतः हम आपकी केवल गज़लोंका उल्लेख कर रहे हैं—

दिलका हबीब,

प्राय. गज़लगो-शाइर अपने दीवान या कुल्लियातका प्रारम्भ ईश्वरीय स्तुति (हम्द) से प्रारम्भ करते है। 'दिल'ने भी अपने दीवान 'नग़मए-

दिल'में हम्दिया कलाम कहा है। मगर इस कौशलसे कि यह बंजर और ऊसर ज़मीन भी लहलहा उठी—

नज़रोंसे निहाँ[1] क्यों रहते हो, जब जान लिया पहचान लिया।
मंशा-ए-हिजाब[2] आख़िर क्या है, तुमको तो ख़ुदा भी मान लिया॥

'दिल'का हबीब ख़ुदा है। ख़ुदाकी हम्दमें ही कही गई ग़ज़लका पहिला मतलअ़ है। मगर 'नज़रोंसे निहाँ' और 'मंशाए-हिजाब'के नगीने जड़ देनेसे शेअ़्र पढ़ते हुए ऐसा प्रतीत होता है, कि कोई नई-नवेली घूँघट निकाले, सिमटी-सी पर्देमें जा छिपी है, और सारे प्रयत्नोंके बावजूद मुख-चन्द्रकी झलक दिखा नहीं रही है।

मगर नज़रोंसे ओझल या छिपकर कबतक रहा जा सकता है? निरन्तरकी साधना और चिन्तनसे प्रेमी अपने प्यारेको बिन देखे भी देख लेता है। उसकी आँखोंमें अपने प्यारेकी ऐसी छवि उतर आती है कि हटाये नहीं हटती। वह छवि चाहे प्रत्यक्ष उजागर न हो, परन्तु प्रेमीका रोम-रोम अपने प्यारेके दिव्य रूपसे आलोकित हो उठता है—

सीनेमें है दिल, दिलमें तुम हो, मस्तूर[3] हो गो इन पर्दोमें।
है याद मुझे पैमाने-अज़ल[4] बे-दीद[5] तुम्हें पहिचान लिया॥

'नग़मए-दिल' इन्तेख़ाबके दो हम्दिया शेअ़्र और पढ़िए और तग़ज़्ज़ुलका लुत्फ़ उठाइए—

असरे-इश्क़से हूँ सूरते-शमअ़ ख़ामोश।
यह मुख्तसर है, मेरी हसरते-गोयाईका॥

[शेअ़्रका आशय तो केवल इतना है, कि प्रेमकी प्रखरताके परिणाम-स्वरूप शमअ़ (जलती हुई मोमबत्ती)की तरह चुप हूँ। अपने

---

[1]छिपे हुए, [2]शर्मकी वजह, पर्देका कारण, [3]छिपे हुए, पोशीदा, [4]सृष्टिके प्रारम्भका वचन, [5]बिन देखे।

भावोको व्यक्त करनेकी अभिलाषाका केवल-मात्र चित्र बनकर रह गया हूँ]

प्रेम-रसमें जब रोम-रोम भीग जाता ह और प्रेमी अपने प्यारेकी चाहतमे विभोर होकर सुध-बुध खो बैठता है, तब उसकी सब वासनाये, कामनायें, यहाँ तक कि वाक्य-शक्ति भी विलीन हो जाती है। इश्क, प्रेम-ज्वालासे दग्ध है तो शमअ भी ज्वलित है। लेकिन कहाँ इश्क कहाँ शमअ ? सूर्यकी कणसे क्या तुलना ?

शमअ सबके सामने जलती है, इश्कका सुलगना कोई नही देख पाता। शमअ भाव प्रकट करनेकी क्षमता न रखते हुए भी सब कुछ कह देती है, इश्क वाणीका वरदान पाकर भी चुप्पी साध लेता है। शमअ सरे-महफिल काँपती है, लरजती है, आँसू बहाती है। इश्क सब कुछ विसारकर अपने प्यारेमें लीन हो जाता है। शमअ बुझते-बुझते भी धुआँ देकर बदनामीका दाग़ छोड़ जाती है, इश्क उपलेकी आगकी तरह दहकता रहता है। इश्क और शमअमें कोई तुलना नहीं। फिर भी असरे-इश्कका बयान सूरते-शमअसे करना पडा। सोज़े-इश्कके लिए शम-ए-महफ़िलसे मौज़ूँ और कोई मिसाल हो नही सकती।

शेअरके दूसरे मिसरेमें 'हसरते-गोयाई'के लिए—'मुरक्कअ' शब्द भी बहुत खूब जडा गया है। 'हसरते-गोयाई'का अर्थ है बोलनेकी इच्छा और 'मुरक्के'का आशय है—बिखरी हुई या टुकडे-टुकडे हुई तसवीरोका संकलन। भाव यह है कि जैसे बिखरे या टुकड़े-टुकड़े हुए चित्रोंका सकलन मौन रहता है, उसी तरह मेरी बोलनेकी कामनाएँ भी मूक है।

हुस्ने-ख़ुदबींको हुआ और सिवा नाज़े-हिजाब।
शौक जब हदसे बढ़ा, चश्मे-तमाशाईका॥

[प्रेमीका जितना उत्साह देखने (चश्मे-तमाशाई)का बढता गया, उतना ही अधिक अभिमानी सौन्दर्य (हुस्ने-ख़ुदबी)को अपने छिपनेपर घमण्ड (हिजाबे-नाज़) होता गया।]

भाव यह है, कि ख़ुदाको जितना अधिक देखने-जाननेका प्रयास किया जाता है, वह उतना ही अगम, अगोचर होता जाता है।

कहनेको चारों शेअ्र दिलने अपने महबूब ख़ुदाकी शानमें कहे हैं। मगर दिलके तग़ज़्ज़ुलका कमाल देखिए कि पढ़ने-सुननेवालेको अपनी दुनिया-के परी-पैकरका तसव्वुर होने लगता है।

दिलका हबीब ख़ुदा है। इस रंगके सात शेअ्र और मुलाहिज़ा हों—

मुझको यह देखना था जो होते वोह बे-हिजाब।
किस वहममें हैं काफ़िरो-दींदार, देखकर॥

वह ख़िलवत नशीं है, हक़ीक़त यही है।
तआर्रुफ़ क़दीमी, मगर ग़ाएबाना॥

पर्दा उठाके आयें, जिस शानसे भी आयें।
झगड़ा मगर मिटादें यह शेख़ो-बरहमनका॥

जानिबे-दैरो-हरम कान लगे रहते हैं।
काश, पर्दे हाँ-से सुनते तेरी आवाज़ कहीं॥

उठ गया पर्द-ए-हाइल फ़क़त इतना है ख़याल।
क्या कहूँ जलवागहे-नाज़में फिर क्या देखा?
अल्लाह-अल्लाह यह अजब शाने-ख़ुदआराई है।
हमने जिस गुलपै नज़र की तेरा जलवा देखा॥

यह कौन? जलवानुमा जो हिजाबे-नाज़में था।
तड़प रही है मेरी हर नज़र उसीके लिए॥

चाहतकी पवित्रता

उभरने वाले वालो, मैं भी मुन्तज़िरे-शिफ़ाअत हूँ।
ज़रा तुम पाए-नाज़ आलूद आँखोंसे लगा देना॥

[प्यारेके निवास स्थानकी तरफसे आनेवाले सौभाग्य-शीलो! अपनी चरण-धूल मेरी आँखोमे आँज दो, ताकि मेरी आँखे भी वह मार्ग देख सकें। मै भी अपने प्यारेके दर्शनोको जाना चाहता (मुश्ताक़े-ज़ियारत) हूँ।]

इस शेअरके कई आशय निकलते है। एक तो यह कि प्यारेके धामसे आनेवालोके चरणोमे आँखें बिछाकर अपनी श्रद्धा और चाहतकी साध पूरी की जाय। दूसरे यह कि उस ओरसे आनेवाले यात्रियोके पाँव-की धूल भी इतनी अक्सीर हो जाती है कि आँखोमे अजनकी तरह आँजनेसे घर बैठे प्यारेकी झलक दिखाई देने लगती है। तीसरे यह कि वहाँकी केवल धूल आँखोसे लगा लेना वहाँकी यात्राके समान ही महत्त्व रखती है।

इस तीसरे आशयका आनन्द उठानेके लिए 'नूह' नारवी साहबका यह सस्मरण पढिए—

"नवाव हामिदअलीखाँ साहबके मुशाइरए-रामपुरमें मुझे एक वार शरीक होनेका इत्तिफाक हुआ। उस वक्त मुशी अमीर-उल्ला साहब 'तस्लीम' जिन्दा थे। खत्मे-मुशाइरेके वाद चूँकि वे पीराना सालीके सवव (वृद्धावस्थाके कारण) शरीके-मुशाइरा न हुए थे। मै उनकी खिदमतमे पहुँचा। वे चारपाईपर आँखे वन्द किये हुए लेटे थे। मै जाकर पाँव दवाने लगा। उन्होने आँखे खोल दी और मेरे हालात पूछने लगे। जव उन्हे यह मालूम हुआ कि मै 'दाग' साहबका शार्गिद हूँ तो फर्माया—"तुमने उन्हे देखा भी है या खतो-कितावतके जरिए शागिर्द हुए हो?"

मैने कहा—"मै वहुत दिनोतक उनकी खिदमतमे रहा हूँ।"

यह सुनकर इर्शाद फर्माया कि—"मुझे सहारा देकर विठा दो।"

मैने सहारा दिया और वह उठकर वैठ गये और कहने लगे—"मेरी उँगलियोको अपनी आँखोपर रखो।"

मैने उनकी उँगलियाँ अपनी आँखोपर रखी, दो-तीन मिनटके वाद वे अपनी उँगलियोको मेरी आँखोसे हटाकर चूमने लगे। और फर्माया—

"तुम्हारी इन आँखोंने मेरे दोस्तको देखा है। इस वास्ते मैंने चूमा लिया। और यह कह कर आँखोंमें आँसू भर लाये।"

चाहतकी पवित्रता और लगन देखिए कि उठते हुए गुबारमें भी अपने प्यारेका तसव्वुर रखते हैं।

जब कोई-गर्दो-बाद उठा दश्ते-नज्दसे।
उसको निगाहे-क़ैसने महमिल बना दिया॥

[मजनू (क़ैस)की तल्लीनता और महवियतका यह आलम है कि जंगल (दश्ते-नज्द)में कोई बगोला (गर्दो-बाद) भी उठता है तो वह समझता है कि लैली अपनी ऊँटनीपर महमिलमें बैठी हुई आ रही है।]

उक्त शेअ़रका आनन्द वही भुक्त-भोगी उठा सकते हैं जो अपने प्यारेकी राहमें पलक-पाँवड़े बिछाये रहते हैं। क्योंकि न कोई पाती मिली है, न सन्देश। फिर भी मन और कान द्वारकी ओर लगे रहते हैं। और न जाने किसी आहटपर चौंक उठते हैं आनेकी कोई आशा नहीं रह गई है, फिर भी मेले-तमाशे यहाँ तक कि दुर्घटनाओंमें उन्हींकी सम्भावना बनी रहती है।

इश्क़े-सादिक़ और पुख़्ता हो तो क़तरेमें भी दरिया नज़र आता है। इसी भावको 'दिल' इस तरह व्यक्त करते हैं—

ऐ शौक़! अपने जल्वा-ए-दिलपर[2] निगाह कर।
सहराका हर गुबार है, महमिल लिये हुए[3]॥[1]

प्रेमीकी अभिलाषा

सच्चे प्रेमीकी केवल यही साध होती है—

---

[1]निगार जनवरी-फ़रवरी १९४० पृ० ३४।
[2]हृदय प्रेमसे कितना ओत-प्रोत है, यह देख।
[3]जंगलका प्रत्येक कण लैलीको धारण किये हुए है।

जो दलीले-मंज़िले-इश्क हो, उसी रहनुमाकी तलाश है।
मुझे और कोई तलब नहीं, तेरे नक़्शे-पा की तलाश है॥

[जो प्रेम-मार्गसे भिज्ञ (दलीले-मज़िले-इश्क) हो, ऐसे पथ-प्रदर्शककी खोज है। तेरे चरण-चिह्न (नक़्शे-पा)के अतिरिक्त मुझे और कोई अभिलाषा (तलब) नही है।]

'दिल'के इश्ककी पाकीज़गी देखिए कि वे न अपने हबीबका वस्ल चाहते है, न उससे बोसेकी तलब रखते है। वे सिर्फ तलब हबीबके 'नक़्शे-पा' की रखते है।

जहाँ अन्य शाइरोंने वस्लो-बोसेकी तमन्ना और कोशिशोंमें दीवान-के-दीवान रँग डाले है। वहाँ 'दिल'के यहाँ समूचे दीवानमें 'वस्ल' और 'रकीब' शब्द खोजनेपर भी न मिलेंगे। उन्होने अपने कलामको इन शब्दोसे अछूता रखा है। इस सम्बन्धमे आप स्वय लिखते है—

"बअज़ अहले नज़रने ब-ज़रिए-तहरीर मुझसे सवाल किया कि 'लफ्ज़ वस्ल' जो तमन्नाए-इश्क और तकाज़ाए-दिले-पुर-आर्ज़ू है। इस पुर कैफ और जज्बाती लफ्ज़को क्यो तर्क कर दिया गया ? जवाबन अर्ज़ कर चुका हूँ कि मै हमेशा महजूर रहा। वई वजह मैने इस लफ्ज़को इस्तेअमाल करना मुबनी बर तसन्नोअ समझा। मेरे लब आरिज़े-महबूब तक कभी नही पहुँचे। जज्बात आस्ताँ-बोसी तक महदूद है। मेरे मजमूअए-कलाममें लफ़्ज़ 'रकीब' भी नज़र न आयेगा। मेरा महबूब सिर्फ मेरा महबूब है। हुस्ने-मअसूम खिलवत पसन्द है। जलवा सरेआम नही।"[1]

[भावार्थ—कुछ महानुभावोके यह मालूम करनेपर कि—मैंने 'वस्ल'-जैसे शब्दका प्रयोग क्यों नही किया ? क्योकि शाइरीमे इश्कका दारोमदार ही वस्ल है। इश्कका मंशा ही वस्ल होता है। शाइरीमें वस्ल ही तो प्राण फूंकनेवाला आनन्द दायक और महत्त्वपूर्ण शब्द है। उत्तरमें

---

[1]तरानये-दिल पृ० १२।

मैंने निवेदन किया कि मैं सदैव वियोगी रहा हूँ। फिर भी वस्ल शब्दका प्रयोग करता तो कलाममें कृत्रिमता आ जाती जो शाइरीके लिए उचित नहीं। मेरे ओठ प्यारेके कपोलों तक कभी नहीं पहुँचे। मेरे प्रेमकी उमंगे प्यारेकी चौखटपर चुम्बन देनेतक सीमित रहीं। मेरे यहाँ 'रकीब' शब्द भी नहीं है, क्योंकि मेरी प्रियतमा केवल मेरी प्रियतमा है। अत. मेरा कोई रकीब और उदू नहीं।]

प्रेममें तल्लीनता—

नजर आते हैं वोह हर वक़्त आगोशे-तसव्वुरमें[1]।
हमारे दिलमें रहकर हमसे पर्दा हो नहीं सकता॥

उन्हींका जलवए-रअना[2] है मंजूरे-नजर[3] ऐ 'दिल'!
कोई उनके सिवा दिलकी तमन्ना हो नहीं सकता॥

दरियाए-मुहब्बतमें पहुँचाये खुदा तह तक।
डूबेगी जहाँ किश्ती अपना वही साहिल है॥

किसीकी जुस्तजूमें[4] इक मुकाम ऐसा भी आता है।
जहाँ मंजिल तो क्या अपना निशाँ ऐ 'दिल' नहीं मिलता॥

तलाशे-दोस्त कुजा, आर्जूए-दीद कुजा।
हमें तो उम्र हुई अपनी आर्जू करते॥

गुम हूँ इन बेखुदीकी[5] मंजिलमें।
रहनुमा[6] है न कोई महरमे-राज[7]॥

इस तरहसे गुजर चुका है दिल।
अब नहीं फ़िक्रे-नशेबो-फ़राज[8]॥

---

[1]चिन्तन, ध्यानमें; [2]कमनीयरूप; [3]आँखोंको स्वीकृत; [4]खोजमें; [5]आत्म-लीनताकी स्थितिमें; [6]मार्ग-दर्शक; [7]भेदोंका ज्ञाता; [8]पतन और उत्थानकी चिन्ता।

ज़िन्दाँकी[1] कैद झेली, सहराकी[2] खाक छानी।
गुज़रा हूँ उन हदोसे, क्या जाने अब कहाँ हूँ?

खुदी मिटे तो खुदा मिले—

मुद्दआ बर आयेगा, जब ख़ाक हो जायेंगे हम।
इसका यह मतलब कि गुम होकर उन्हें पायेंगे हम॥

इन्तहाये-जुस्तजूमें खो गये होशो-हवास।
पूछते है राह हर गुम करदए-मंज़िलसे[3] हम॥

और अन्तमे प्रेमीकी वह स्थिति हो जाती है कि वह अपने प्यारेकी राहमे भटकता फिरे, स्वय उसका प्यारा उसके समीप आ जाता है। भिलनीकी झोपड़ीमे जब 'राम' पहुँच सकते है, तब आस्तानए-यारके खिच आनेकी आशा 'दिल' क्यो न करे?

मुहब्बतके जज़्बात समझूँ मुकम्मिल।
खिच आये जबीं तक तेरा आस्ताना॥

और जब जज़्बए-इश्ककी बदौलत आस्ताना नसीब हुआ तो फर्त-मसर्रतसे—

सर अपना है, किसीके आस्ताँ पर।
जबीने-इज्ज़ पहुँची आस्माँ पर॥

[प्यारेके आस्ताँपर नत मस्तक होते हुए प्रतीत हो रहा था कि हमारा मस्तक आस्मानकी सरहदोको छू रहा है। ज़र्रे-ए-नाचीज़ आफताब बन रहा है।]

जब प्रेमीके द्वारे तक प्यारा चला आया, तब दुईभाव और पर्देका काम क्या?

---

[1]जेलखानेकी; [2]जगलकी; [3]मार्ग भटके हुए से।

उठ गया पर्दए-हाइल फ़कत इतना है ख़याल।
क्या कहें जलवा-गहे-नाज़में फिर क्या देखा॥

[पर्दा उठा, फकत इतना ख़याल (होश) है। उनके जल्वेमें क्या देखा? कैसे कहे, क्योंकर कहे?]

हम क्या बतायें क्या थी, तेरी निगहकी गर्दिश।
इक वज्दकी-सी हालत पहरों रही हमारी॥

हज़रते-'दिल' बतायें भी तो नहीं बता सकते। गुड़का स्वाद गूँगा कैसे बताये? जल्वेके अनुरूप वाणी कहाँसे लाये? और वाणी हो भी तो वह मुखरित कैसे हो? उसने तो कुछ देखा नहीं और जिन नेत्रोंने देखा वे वाक्-शक्ति कहाँसे लायें?

एक बार जलवा देखनेपर प्रेमीकी यही इच्छा रहती है, कि जल्वा बार-बार देखे। उसका प्यारा उसके सम्मुख सदैव रहे, उसे वह एक टक निहारा करे—

हर दम है उसी महवे-तग़ाफ़ुलका तसव्वुर।
इश्क और किसी कामके काबिल नहीं रखता॥

इश्क ख़ुद बहुत बड़ा काम है। हर वक्त उसीमें मह्व रहना होता है।[1] प्यारेके चिन्तनके अतिरिक्त और भी कुछ करने योग्य है, यह प्रेमीको सुध ही कब आती है और यही सुध-बुध अन्तमें यह स्थिति ला देती है कि प्यारा पासमें न होते हुए भी यही आभास होता है कि वह समीप बैठा हुआ है—

वहम बातिल था, मगर वह मज़रे-ऐशो-निशात।
पहलु-ए-आशिक़में हँगामे-सहर कोई न था॥

---

[1] "आठ पहर सोनो रहे प्रेम कहावे सोय" —कबीर

किन्तु यह तल्लीनता स्थायी नही होती, टूटती है, तो प्रतीत होता है कि यह सब स्वप्न था। काश यह तल्लीनता कभी भग न होती और अपने प्यारेको यूँ ही अपलक निहारते रहते।

कृष्ण द्वारिका चले गये है। राधा उनके वियोगमें सुध-बुध विसार बैठी है। बुधजनोकी सम्मति है कि वह बावरी हो गई है। वही बावरी जब पानी भरने कालिन्दी-किनारे जाती है, तो प्रतीत होता है कि छोटा-सा छौना गेन्दबल्ला खेल रहा है। पकडनेको दौड़ती है, तो पेड़से टकराकर गिर जाती है। सुप्तावस्थामे आभास होता है कि वही छौना गोदमें लिटाये माथा सहला रहा है, परन्तु हायरे दुर्भाग्य वह इस आनन्दको तनिक भी सहेजकर नही रख पाती। चेतना आते ही इस भावनासे उठ बैठती है कि पूछूँ "निर्मोही कहाँ चला गया था?"

आँखे फाडकर देखती है और फिर बन्दकर लेती है कि अच्छा छलिया बन्द आँखोमें ही रह। तुझ नटखटको अब भागने न दूँगी।

परन्तु राधाकी यह साध पूरी नही हो पाती। कभी माखन-मिसरी खाते देखती है, कभी गौ-चराते देखती है, कभी बाँसरी बजाते देखती है, कभी अपने शरीरमे लीला गोदते देखती है, कभी रासलीला करते देखती है! देखती है और क्षण भरमें ठगी-सी रह जाती है।

द्वारिकामे सत्यभामाको अनुभव होता है कि कृष्ण उस, रातको उसीके महलमे रहे, किन्तु रुक्मणीका दावा है कि कृष्ण उस रातको उसके महलमे रहे। लेकिन कृष्ण न यहाँ रहे, न वहाँ रहे। यह सब प्रेम-विभोर होनेकी अनुभूतियाँ है।

इश्कके ऐसे ही शदीद आलममे हज़रते-'दिल'को यूँ महसूस होता है, कि उनका माशूक रातको उनके साथ है, और किसी वजहसे उठकर जाना चाहता है। तभी वे बेचैन होकर कह उठते है—

यह भीगी रात, यह ठंडा समाँ, यह कैफे-बहार!
यह कोई वक़्त है, पहलूसे उठके जानेका?

हज़रते-'दिल'का शाइराना कमाल देखिए कि उक्त शेरमें न तो वस्ल और बोसो-कनारके अल्फ़ाज़ आये हैं, न कहीं छेड़-छाड़ है, न कोई पोशीदा-राज़की तरफ़ इशारा किया है। फिर भी शेर मुँह बोलती तसवीर बन गया है। पढ़ते हुए महसूस होता है, मसूरीमें शानदार कोठीमें ठहरे हुए हैं। और माशूक़ पहलूमें है। धीमी-धीमी फुहारें गिर रही हैं, चाँदनी खिली हुई है और रेशमी रज़ाईमें लिपटे पड़े हैं। अचानक माशूक़ उठकर जानेका ख़याल ज़ाहिर करता है तो उसके इस भोलेपनपर अनायास मुँहसे निकल पड़ता है—

'यह कोई वक़्त है, पहलूसे उठके जानेका'?

वक़ौल नियाज़ फ़तहपुरी—"महबूबने जिस अन्दाज़से ख़िताब करके महाकातो-मौसीकियत (हृदयके भाव और संगीत)को मिला दिया गया है। वह किसी मामूली शाइरके बसकी बात नहीं····मैं तो इसे पढ़नेके बाद आजकल (मई)की दोपहरकी गर्मीमें भी ख़ास किस्मकी ख़ुनकी महसूस करने लगता हूँ।"[1]

'नियाज़' फ़तहपुरी जैसे ७० वर्षीय वयोवृद्ध, जिनकी सुरुचिपूर्ण पसन्द इतनी नपी तुली कि बमुश्किल जिन्हें कोई शेअर पसन्द आता है। वे भी ज्येष्ठकी आग उगलती दोपहरीमें शेअर पढ़ते हुए ख़ुनकी महसूस करें। इससे बढ़कर 'दिल'की सुख़नवरीकी सफलता और क्या हो सकती है?

मैं तो उक्त शेअर पढ़कर आश्चर्य चकित रह गया कि 'दिल' जैसा गम्भीर, संकोची, शान्त स्वभावी व्यक्ति ऐसा रंगीन एवं रोमांचकारी शेअर कैसे कह गया। ऐसे शेअर तो बग़ैर सवारी और मानसिक अनुभवके कहना सम्भव नहीं। इतना सहज और पूर्ण चित्र कि ध्यानावस्थामें

---

[1]तरानए-दिल पृष्ठ ४२।

प्यारेसे इस तरह महवे-गुफ्तगू हो जाये कि वास्तविक स्थितिका ज्ञान तक न रहे, सरल नही।

२-३ माहके वाद सहसा प्रतीत हुआ कि ऐसा शेअ़र 'दिल' जैसा शर्मीला और रिज़र्व किस्मका व्यक्ति ही कह सकता था। मेरा तो विश्वास है, कि उक्त शेअ़र चिन्तनसे नही स्वानुभवसे कहा गया है।

उक्त शेअ़र दिलने १९०५ ई० पूर्व आलमे-शवावमे कहा है। १९ वी सदीका, अवसे ६५-७० वर्ष पूर्व उस युगका तसव्वुर कीजिए। पत्नी वुढापेकी तरफ कदम वढाये जा रही है। मगर अपनेसे वडे जन—(सास-ससुर, जेठ-जिठानी, ननद-फूफस)के सामने न पतिसे वोल सकती थी, न मुंह खोल सकती थी, न अपने वच्चोको दुलार सकती थी। वच्चोके लिए भूलसे वेटा-वेटी सम्वोधन निकल जाता तो वडे-वूढे व्यग्य कसने लगते थे। न आजकी तरह पृथक-पृथक शयनागार थे, न यह आजकी दीदा-दिलेरी थी कि सवके सामने अपने वेड रूममे घुस गये। न जाने किन-किन उपायोसे पति-पत्नी क्षणिक समयके लिए रातके आधे-पिछले पहर एकान्त-मिलन पाते थे।

सास-ननदके उठनेसे पूर्व ही वहूको उठकर चक्की पीसना, दूध विलोना पड़ता था। अव इस स्थितिमे पत्नीका भोर होनेसे पूर्व उठकर जाना भी ज़रूरी और अनेक प्रयासोके वाद मिले सुनहरे अवसरको इतने शीघ्र विलीन होते देख 'दिल'का झुँझलाकर यह कहना भी लाज़िमी—

'यह कोई वक़्त है, पहलूसे उठके जानेका' ?

मजाज़ी इश्क़

दिलके कलाममे मजाज़ी और हकीकी दोनों इश्कोंकी झलकियाँ मिलेगी। इन्सानी परी-पैकरसे इश्क हुए वगैर हकीकी इश्कका वास्तविक अनुभव हो नही सकता। वामे-इश्के-हकीकी तक पहुँचनेके लिए इश्के-

मजाज़ीके ज़ीनेसे चढ़ना लाज़िमी है। चन्द इश्के-मजाज़ीके शेअ़र मुलाहिज़ा हों—

जिस जगह आँखें लड़ी थीं, है वोह मंज़र सामने।
जिस जगह होश उड़ गये थे, वह ठिकाना याद है॥

जिस जगह दिल हो गया था, बिस्मिले-तीरे-नज़र।
वोह जगह, वोह वक़्त, अब तक वोह ज़माना याद है॥

वह तलत्तुफ़ और वह उनका तलव्वुन हाय-हाय।
वोह निगाहें मिलते ही आँखें चुराना याद है॥

तीरे-नज़र—

कोई समझे तो क्या समझे ख़दंगे-नाज़का ईमाँ[1]।
यह चुभ जाता है जब दिलमें खटकता है, रगे-जाँमें॥

क्या पूछते हो शोख़ निगाहोंका माजरा।
दो तीर थे जो मेरे जिगरमें उतर गये॥

याद है, हाँ याद है, तर्ज़ें निगाहे-मस्ते-यार।
एक ताज़ा पसलीसे पारा-पारा दिल हुआ॥

अन्दाज़ चश्मे-नाज़ शिकन था कि अल्‌अमाँ।
इक पसलीकी चोटने दिल चूर हो गया॥

निगाहे-मस्तने ओ मुड़के देखने वाले।
तुझे तो है, मुझे अपनी ख़बर नहीं, न सही॥

कुछ ख़बर हमको नहीं, कौन था वोह हज़रते-'दिल'!
चल दिया दिलमें अभी मीनेमें नश्तर कोई॥

---

[1] मानूरके छोटे तीरका इशारा।

प्रेयसीका व्यक्तित्व—

इक जस्मे-ख़ूं चिकांपै छिड़कना है, मुद्दआ।
हमको तो ख़ाके-कूचए-दिल्दार चाहिए॥
शायाने-संगे-दर नहीं, मेरा सरे-नियाज़।
आशुफ़्ता दिलको सायए-दीवार चाहिए॥

आँसूकी क्या बिसात? परन्तु वही प्रियतमाके दामनसे छू जाने पर—

पहुँचकर उनके दामन तक यह है, हर अश्कका आलम।
जिसे क़तरा समझते थे, उसे दरिया समझते हैं॥

प्रेयसीकी चाल—

'दिल'की प्रेयसी चलती है, तो लोगोंके कलेजे मसोसती हुई नहीं चलती, अपितु—

तुम तो सकूने-ख़ातिरे-नाशाद बन गये।
समझा था मैं कुछ और यह रफ़्तार देखकर॥

प्रेयसीका रूप—

महवे-बेख़ुद हूँ बहारे-रुए-ज़ेबा देखकर।
बाग़े-आलममें कहाँ पैदा है, उस गुलका जवाब॥

अल्लाह उनको अबरुए-ख़मदारपर यह नाज़।
तअ़ने हिलालपर हैं, तो फ़िकरे कमानपर॥

कब तक छुपाओगे रुख़े-ज़ेबा नक़ाबमें?
बर्क़े-जमाल रह नहीं सकता हिजाबमें॥

ऐ दिल! यह शाने-जल्वा-नुमाई तो देखना।
वोह बर्क़की तरह इधर आये उधर गये॥

सरे तूर एक बर्क़े-हुस्न लहराती नज़र आई।
ज़रा शोख़ीसे झटका था किसीने अपने दामांको॥

शर्मीली प्रेयसी—

क्या क़यामत था सवाले-दीदपर उनका जवाब—
"हश्रमें हमसे वहाँ कहना जहाँ कोई न हो"॥

विरह—

किसीकी याद थी आँखोंसे अश्क ढलते थे।
इसी ख़यालमें हम करवटें बदलते थे॥

वक़्ते-रुख़सत तसल्लियाँ देकर।
और भी तुमने बेक़रार किया॥

रोज़ आ-आकर तसल्ली दिलको दे जाता है कौन?
कुछ समझ ही में नहीं आता कि समझाता है कौन?

यासो-हिरास —

दिल निराशामें अधीर न होकर निराकुलता अनुभव करते हैं—

हक़ीक़तमें यही साअत[1] सकूने-दिलकी[2] साअत थी।
मेरी बालींपे[3] जब मायूसे-कोशिश[4] चारागर[5] होना॥

---

[1]घड़ी, वक़्त; [2]दिलके चैनकी; [3]सिरहाने; [4]असफल; [5]वैद्य, हकीम;

शिकवा-शिकायत—

'दिल' आहो-नाले, शिकवा, शिकायतके क़ायल नही—

ता-ब-लब[1] शिकवे न आये थे कि खुद हूँ मुनफ़ाअिल[2]।
हुस्नकी मअसूम फ़ितरतको[3] पशेमाँ[4] देखकर॥

लरज़ उठता हूँ अब तक, जब वोह शिकवे याद आते हैं।
असर था किस क़यामतका तेरी चश्मे-पशेमाँमें[5]॥

ज़ब्तसे काम लीजिए, आहो-फ़ुगाँ न कीजिए।
नश्तरे-इश्ककी खलिश दिलमें रहे तो राज़ है॥

इख़फ़ाए-खलिश[6] दुश्वार बहुत, इज़हारे-खलिश[7] मुमकिन ही नहीं।
चुप रहनेमें दम घुटता है, कहता हूँ तो जी घबराता है॥

प्रेयसीकी दिलशिकनी न होने पावे—

उसे क़लक है, मेरा हाले-ज़ार सुन-सुन कर।
यह वक़्त था कोई तद्‌बीर चाराज़ू करते॥

जौरो-जफ़ाए-दोस्तका शिकवा न कीजिए।
इश्के-वफ़ा सरिश्तको रुसवा न कीजिए॥
मिट जाइए मगर कोई शिकवा न कीजिए।
घबराके राज़े-इश्कको रुसवा न कीजिए॥

आह सीनेमें घुटे उफ़ न ज़बाँसे निकले।
दर्द इस हदसे गुज़र जाय तो रुसवाई[8] है॥

---

[1]ओठोतक; [2]लज्जित; [3]प्रेयसीके भोले स्वभावको; [4]शर्मसार; [5]शर्मसे झुकी हुई नजरोमे; [6]प्रेमकी फाँसको छिपाये रखना; [7]चुभनको प्रकट करना; [8]बदनामी।

हयाते-इश्क़[1] है, ऐ हमनशीं[2] ख़ामोश जल जाना।
मिसाले-शमअ़ बज़्मे-दहरमें[3] तू हमको जलने दे॥

हुज़ूरे-दोस्त[4] शिकवाका तो क्या ज़िक्र।
गिराँ[5] है मुद्दआए-दिल[6] ज़बाँपर॥

निगाहे-शौक़ रही हम ज़बाने-दिल लेकिन—
किसी तरह न बना शरहे-आर्ज़ू करते॥

दिया था इश्क़ तो हिम्मत भी यह ख़ुदा देता।
कि एक वक़्तमें हम तर्के-आर्ज़ू करते॥

चारासाज़—

क्या जाने क्या ख़यालसे छोड़ा ब-हाले-ज़ार।
मुझपर बड़ा करम है, मेरे चारासाज़का॥

दर हक़ीक़त जो अलामत है, निगाहे-नाज़की।
चारागर! वोह ख़लिश क्योंकर निकालें दिलसे हम?

दिलसोज़ अगर बनो तो दिखायें जिगरके दाग़।
तुम चारासाज़ हो तो, कहूँ माजराए-दिल॥

अल्लाह-अल्लाह बेख़बर हूँ दामने-ज़ानू-ए-दोस्त।
होशमें आ चारागर! अब होशमें आयेंगे हम?

इस मर्ज़से कोई बचा भी है?
चारागर इश्क़की दवा भी है?

---

[1]प्रेम-जीवन, [2]साथी, [3]संसार रूपी महफ़िलमें; [4]प्यारेके सामने;
[5]कठिन, [6]दिली इच्छा।

परम्परागत—

परम्पराके अनुसार 'दिल'के यहाँ कहीं-कहीं ऐसे शेअ़र भी नज़र आ जाते हैं—

हमने वह सब सुना जो सुना था न आज तक।
तुमने वह सब कहा जो कुछ आया ज़बान पर॥

क्या लुत्फ़ आगया तेरे अन्दाज़े-जौरमें।
मुझपर उसी तरह सरे-महफ़िल अ़ताब हो॥

ईमाँ है, यह उस शोख़की शमशीरे-अदाका।
जो सामने आजाय वोह सर अपना झुकाले॥

तेरी निगाह न थी शोख़ियोंसे जब आगाह।
यह जाँ निसार है, बिस्मिल है, उसी ज़मानेका॥

काश, हो वक़्ते-नज़र दोनोंको हैरत एक-सी।
हम उन्हें देखें वोह जब देखें सँवरकर आईना॥

हुस्नमें कुछ शोख़ियाँ आनेको हैं।
अब हयाकी पासबानी जायगी॥

पर्दा उठा दिया यह अजब उसने चाल की।
देखा तो हममें ताब न थी अ़र्ज़े-हालकी॥

शैख़, वाइज़, नासेह, ज़ाहिद—

परम्परानुसार 'दिल' ने भी शेख़, वाइज़, नासेह और ज़ाहिदका ज़िक्रे-ख़ैर किया है। लेकिन न आप उनकी पगड़ी उछालते हैं, न चुँदियापर चौल जड़ते है, न मुँहपर शराबकी कुल्ली करते हैं, न मुँह चिढाते हैं, न उनकी शक्लो-शबाहतको हैवान-जैसी बनाते हैं, न उन्हे पाखण्डी-ढोंगी कहते हैं,

न उन्हे रूए-स्याह समझते हैं, और न उन्हे मनहूस समझकर नाक-भौं सिकोड़ते हैं, अपितु उन्हे रिन्दोमे बैठे देखकर खिल उठते हैं और उनकी उपस्थितिके कारण मदिरालयको खुल्द (जन्नत) समझते हैं—

तसवीरे-खुल्द खिच गई साक़ीकी बज़्ममें।
ज़ाहिद-से पाकबाज़को सरशार देखकर॥

नासेहको सबसे बड़ा रोग नसीहत करनेका होता है। हजरत न मौका-महल देखते हैं, न किसीके व्यक्तित्वका ध्यान रखते हैं। मौके-बे-मौके नसीहत झाड़ने लगते हैं। उन्हे यह भी खयाल नही रहता कि जिनको हम नसीहत फर्मा रहे हैं, वह इज्ज़त, मर्तबे, अक्लो-शऊरमे अपनेसे कितने बुलन्द हैं? अगर यह लिहाज़ रहे तो फिर उन्हे नासेह कौन कहे?

हमारे देशमे नासेहो और सलाह देनेवालोकी कमी नही। चप्पे-चप्पेपर इनका अस्तित्व मिलता है। जनमके रोगी अनुभूत नुस्खे नामी डाक्टरो-वैद्योको बताते हुए, मजनूँ शक्लो-शबाहतके हजरात ताकतके गुरु पहलवानोको समझाते हुए, अनाड़ी खिलाड़ियोको दाँव-पेच बताते हुए और फटेहाल ज्योतिषी धनिकोको धनोपार्जनके मन्त्र बताते हुए सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं। दूसरोसे अखबार पढ़वाकर सुननेवाले भी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिपर अपना मत ही व्यक्त नही करते, सार्वजनिक स्थानोपर देशके नेताओंकी आलोचनाये भी करते हैं। ऐसे ही सनाधिरानी नासेहोंसे तंग आकर ख्वाजा 'दर्द'ने सम्भवत यह शेअर कहा होगा—

तरदामनीपै शेख़ हमारी न जाइयो।
दामन निचोड़ दें तो फरिश्ते वज़ू करें॥

इस मज़मूनपर अभीतक इससे बेहतर शेअर मेरे देखनेमे नही आया था। मगर देखिए, 'दिल'ने इसी भावको कितने नम्र शब्दोंमे अनोखे ढंगसे व्यक्त किया है—

कभी तो ग़ौरकर आशुफ़्तगी-ए-दिलपै ऐ नासेह!
नज़र आती है, इक दुनिया मेरे चाके-गरेबाँमें॥

[हज़रते-नासेह! आप जो मुझे वक्त-बेवक्त नसीहत फर्माते रहते है। मै चुपचाप सुनता रहता हूँ। मैंने कभी आपकी दिलशिकनी नही की। लेकिन आपने मेरी कभी वास्तविक स्थिति जाननेका प्रयास नही किया। यदि आपने मेरे द्रवित हृदयकी ओर ध्यान दिया होता तो मेरे फटे हुए वस्त्रो (चाके-गरेवाँ)मे एक आलम नज़र आता।]

फटे हुए वस्त्रोमे कैसे-कैसे लाल छिपे होते है, इसे नासेहकी नज़र नही देख पाती। स्वर्गीय योगि-राज अरविन्द घोपको अलीपुर पडयन्त्र केसके सम्बन्धमें (सम्भवत. इ० स० १६११-१२ के लगभग) जब पुलिस तलाशी लेने आई, तो उनके कमरेमे चटाई बिछी देखकर पुलिस अधिकारी-को यह विश्वास ही नही हुआ कि पलगके होते हुए कोई चटाईपर भी सो सकता है। चारों ओर वैभवसे घिरा होनेपर भी कोई अपरिगृह-वृत्त पालन कर सकता है? ऐसे ही फटेहाल चाक गरेवानोके लिए, सर इकवालने कितनी श्रद्धापूर्ण बात कही है—

न पूछ इन ख़िरकापोशोंकी इरादत हो तो देख इनको।
यदे-बैज़ा लिये बैठे है, अपनी आस्तीनोंमें॥

[इन भिक्षुकसे दीखनेवाले फटे हाल व्यक्तियोकी कुछ न पूछिए। बहुत पहुँचे हुए लोग है। यदि जाननेकी अभिलापा है तो इन्हे श्रद्धापूर्वक समीपसे देखिए। तब कही मालूम होगा कि इनमे कैसे-कैसे चमत्कार छिपे हुए है।]

दूसरोकी वास्तविक स्थिति न देख सके तो न सही, परन्तु नासेहको कुछ तो बुद्धि और गऊरसे काम लेना चाहिए। मगर यह दोनो चीज उसके पास है कहाँ? उसकी इसी कोताहीसे खीजकर किसीने क्या ख़ूब कहा है—

मस्जिदमें बुलाता है, मुझे नासेहे-नाफहम।
होता अगर कुछ होश तो मैख़ाने न जाते॥

अज्ञानताकी हद हो गई न? नासेहको इतनी भी समझ नहीं कि बेहोश आदमी चल-फिर नहीं सकता। तभी तो मस्जिदमें बुला रहा है। ऐसे मूर्ख (नाफहम)से क्या कहा जाय?

इसी भावको 'दिल' कितने सुन्दर अन्दाज़से पेश करते हैं—

गुज़रा है, इश्क़ अपना इदराककी हदोंसे।
अब भी जनाब नासेह समझा-बुझा रहे हैं॥

अपने प्यारेकी चाहतमें प्रेमी सुध-बुध बिसार बैठा है, प्यारेकी ध्वनिके अतिरिक्त उसे कुछ सुनाई नहीं दे रहा है। फिर भी हज़रते-नासेह समझा-बुझा रहे हैं। इसी रंगका एक शेअर और देखिए—

नहीं इख़्तियार नासेह! तेरी पन्दे-दिलकुशाका।
यह सुनाने-बेखुदी है मुझे छोड़ दे यहाँसे॥

[हज़रते नासेह! मैं इस स्थितिमें नहीं कि आपके सदुपदेशोंपर ध्यान देनेका साहस करूँ। मैं इस समय बेखुदीके आलममें (आत्मविस्मृति) हूँ मुझे एकान्तकी आवश्यकता है।]

और नासेहकी बात सुनी भी क्या जाये? कुछ समझमें आता तो वह सुनी भी जाय।

न समझे [illegible] हम पन्देनासेह।
यह आखिर किस ज़बाँकी बात है?

[illegible]
[illegible]
[illegible]

पर सुनाया था और मेरे निवेदनपर अपने दस्ते-मुबारकसे मुझे लिख भी दिया था—

"एक छोटे-से गाँवमे दूसरे गाँवसे भगिन आई तो मौलवी साहबने पूछा—"अरी ओ हलालखोरी! अरी ओ हलालखोरी!! तुम्हारे कुरयहमे भी तकातुरे-बाराने-रहमत हुआ है?"

भगिन सुनकर बोली—"मौलवी साहब हम कुछ नही समझे, इन्सानोंकी तरह बात कीजिए।"

मौलवी—'तू तफहीम करे या न करे, तुझ जरेए बेमिकदारकी खातिर हम अपना शिआरे-तकल्लुम तो मुनकलिब करनेसे रहे।"

भला बताइए कोई समझे तो क्या समझे। दिल-जैसे सजीदा शाइरका भी जी चाहता है कि इन्सानी लबो-लहजेमे बात न करनेवाले नासेह्को तफरीहन थोडी देरके लिए बनाया जाय। मगर बनाये भी तो किस बिरते पर? जिन इश्कके नतीजोंकी तरफ नासेह इशारे कर रहा है, हकीकतमे उनका अन्देशा खुद दिलको भी न होता और अपने प्यारेकी तरफसे भी इश्ककी पुख्तगीका सबूत मिला होता तो नि सकोच नासेहको झुटलाया और बनाया जा सकता था, मगर हायरी इश्ककी मजबूरियाँ—

मआ़ले-इश्क पै 'दिल' मुत्मइन अगर होता।
तो छेड़के नासेहसे गुफ़्तगू करते॥

इश्ककी मजबूरियों और पासे-अदबकी वजहसे दिल भले ही नासेह्के मुँहपर कुछ न कहे, मगर दिलमे यह जरूर महसूस करते हैं—

यह झक, यह बड़, कहीं जोहोश इंसानोंमें होती है?
वही है बात नासेहमें, जो दीवानोंमें होती है॥

स्वानुभव किये बिना ही जो मनमे आये, भाषणोमे अनर्गल प्रलाप करना, व्याख्यान-दाताओ (वाइजो)का अदना करिश्मा है। यदि उन्हें

कि जिसमें उसी (ईश्वर)का दिव्यस्वरूप दिखाई दे। वे क्यों अपनी ऐसी बदनजर रखते हैं, कि जन्नतपर पड़े तो वह भी दोज़ख़ हो जाये। इसी ख़यालको रगे-तग़ज्ज़ुलमें किस सादगीसे पेश किया है—

तेरी इस जेहनियतसे[1], मैकदा[2] बेकैफ़[3] है, जाहिद!
समझता मिशरबे-साक़ी[4] तो फ़िर्दौसे-नज़र[5] होता॥

यदि दृष्टि व्यापक हो जाय तो फिर मनुष्य उस स्थितिमें पहुँच जाता है, जिसे समदृष्टि या सर्वधर्म समभाव कहा जाता है—

तअय्युनातकी हदसे गुज़र चुकी है नज़र।
सरे-नियाज़ भी मुहताजे-आस्ताँ न रहा॥

[मेरी दृष्टि धार्मिक सीमाओंको लाँघकर इतनी व्यापक और उदार हो गई है कि अब मैं किसी विशेष स्थानपर ही नतमस्तक होने (सज्दा करने)की नीति छोड़कर सर्वत्र उसका दिव्य रूप देखता हूँ, और सर्वत्र उसे प्रणाम करता हूँ।]

इसी ग़ज़लका दूसरा शेअर है—

जो तहनशीं कोई उभरा तो अक़्ले-वाहिदमें।
उठी वह मौज कि साहिल ही का निशाँ न रहा॥

[जो सम दृष्टि बनकर अपनेमें डूब जाता है, वह कभी उभरता है, तो उसके आत्म-सागरमें ज्ञानकी वह लहरें उठती हैं, कि थोड़ा-बहुत पर-द्रव्य जो आत्मासे लगा हुआ था, वह भी विलीन हो जाता है।]

उदार भावनाके दो शेअर और—

---

[1]विचारधारासे; [2]मदिरालय; [3]आनन्द रहित, नीरस; [4]मधुबालाका अन्तरंग, साक़ीकी नज़र; [5]जन्नतकी नज़रवाला।

दैरो-कअ्बा, दश्ते-ऐमन, हर तअ्य्युन इक हिजाब।
इन हदोंसे जब गुजरिए, जलवागाहे-आम है॥

[मन्दिर, कअ्बा, दश्ते-ऐमन कोई भी धार्मिक स्थान हो, यह सब बन्धन और सीमायें ईश्वरीय रूपके देखनेमें बाधक (हिजाब) हैं। इस सम्प्रदायवादके पर्देसे बाहर निकलिये तो उसका जलवा सुलभ है।]

तअ्य्युन बन्दगी-ए-इश्कमें ऐ दिल नहीं होता।
जिबीं अपनी जिधर झुकती, अदा सज्दा वहीं होता॥

मौनका प्रभाव—

इस व्याख्यानी युगमें जब कि भाषणोंकी महामारी चरम सीमाको पहुँची हुई है, और जनता त्राहि-त्राहि कर रही है। व्याख्यान-दाता नहीं समझते कि हजारों बकवाससे एक चुप कितनी प्रभावशाली होती है। हिटलरकी सैकड़ों जोशीली स्पीचोंसे स्टालिनकी चुप कितनी कारगर होती थी? इसी चुपपर दिलके शेअ्र सुनें—

जो हो ना-आश्नाए-राजे[1] खामोशी वह क्या समझे?
कि है नाकाबिले-तशरीह[2] ऐ दिल! दास्ताँ मेरी॥

रूदादे-शबे हिज्र[3] हूँ, गो कुछ नहीं कहता।
इस मंजिले-खामोशका आलम ही जुदा है॥

पेशे-दिलदार रहे, मुहर-ब-लब[4] हजरते-'दिल'।
कि खामोशीमें भी इक कूवते-गोयाई[5] है॥

अंजाम पूछना था, हमें सोजो-साजका।
ऐ अहले-बज्म शमए-सहर तो खमोश है॥

---

[1]चुपके भेदसे अनभिज्ञ; [2]खुलासा करनेकी हालतमें नहीं; [3]वियोग-रात्रिकी कथा; [4]ओठ सिले हुए; [5]वाणीकी शक्ति।

हमारी किश्तिए-उम्र आह डोलती थी इधर।
उधर नजूमे-फलक डूबते-उछलते थे॥

अब तो हर-हर नफ़्से-सर्द है अफसानए-दिल।
शिद्दते-गममें कोई जोशे-तमन्ना देखे॥

हायरी मजबूरियाँ—

खींचती मौजे-हवादिस[1] जब सफ़ीना[2] ले चलीं।
दूर तक देखा किये साहिलको[3] मअ़सूमाना हम॥*

सियह-बख़्ती[4] तो पैवस्ते-जबीं[5] है।
मिटाऊँ दागे-नाकामी कहाँ तक?

सुभाषित—

जेबाइशो-ज़ीनतकी[6] हाजत क्या[7], मुल्के-अ़दमके राही[8] को।
शायाने-लहद[9] जो था ऐ 'दिल'! हमराह[10] वही सामान लिया॥

ऐ जौरो-तशद्दुदके खूगर[11]! मजलूमकी[12] आहोंपर भी नजर।
इक रोज भड़ककर यह शोअ़्ले[13], पहुँचेंगे, तेरे काशाने[14] तक॥

तलाशे-मंजिले-मक़सूदमें[15] न हो मायूस[16]।
बहुत वसीअ़[17] है, दुनिया तेरी नजरके लिए॥

---

[1]तूफानोकी लहरे, [2]नौका; [3]घाटको, किनारेको; [4]दुर्भाग्य की कालिमा; [5]माथेमे समाई हुई है, [6]गौरव प्रदर्शनके सामानकी, शृंगारिक वस्तुओंकी; [7]आवश्यकता; [8]मृत्युमार्गीको, [9]कब्रके योग्य; [10]अपने साथ; [11]जुल्म और हिंसाके अभ्यस्त; [12]अत्याचार पीडितकी; [13]अगारे; [14]निवासस्थानतक; [15]निश्चित स्थानकी खोज, [16]निराश; [17]विस्तृत।

*जोर ही क्या था जफाए-बाग़बाँ देखा किये।
आशियाँ हम क्या बचाते, नातवाँ देखा किये॥

—सफी लखनवी

उदास शाम-ए-सहर डूबते हुए तारे।
खमोश दर्स[1] हैं, दुनिया-ए-बेखबरके लिए॥

हुए महवे-नैरंगिये-बज्मे-हस्ती।
घड़ी भरको आये थे मेहमान बनकर॥

स्वराज्य-प्राप्ति—

अज़ावे-जाँ है, खुदा जाने क्यों यह आजादी।
सकून था जो कफसमें वोह आशियाँमें नहीं॥

मुकद्दरने तो दुनिया ही बदल दी हम असीरोंकी।
कोई यह कह रहा है, अब कफसको आशियाँ कहिए॥

सुखमे दुःख छिपा हुआ है—

पहलूए-गुलमें खार भी हैं, कुछ छिपे हुए।
हुस्ने-बहार देख तो, दामन बचाके देख॥

वही चार तिनके पयामे-कफस थे।
जिन्हें हम समझते रहे आशियाना॥[2]

अन्य शाइरोंके रंगमे—

ग़ालिब— कैदे-हयात बन्दे-ग़म अस्लमें दोनों एक हैं।
मौतसे पहले आदमी गमसे निजात पाये क्यों?

दिल— देखिये दिलको तसल्ली जेरे तुर्बत हो तो हो।
जान खोकर, खाक होकर, ग़मसे, फुर्सत हो तो हो॥

---

[1] पाठ, सबक।

[2] कफस दूर ही से नजर आ रहा है।
कयामत है, अपनी बुलन्द आशियानी॥
—खुर्शीद फरीदाबादी

ग़ालिब— हमने माना कि तग़ाफ़ुल न करोगे, लेकिन—
ख़ाक हो जाएँगे हम, तुमको ख़बर होने तक॥

दिल— हज़रते-'दिल'! उनकी ज़ीनत रंग लायेगी कुछ और।
वह सँवरते ही रहेंगे, ख़ाक हो जायेंगे हम॥

फ़ानी— या रब! तेरी रहमतसे मायूस नहीं 'फ़ानी'।
लेकिन तेरी रहमत की ताख़ीरको क्या कहिए॥

इक़बाल— तेरे शीशेमें मै बाक़ी नहीं है?
बता क्या तू मेरा साक़ी नहीं है?
समन्दरसे मिले प्यासेको शबनम!
बख़ीली है, यह रज़्ज़ाकी नहीं है!!

ज़फ़रअ़ली— यह है पहचान ख़ासाने-ख़ुदाकी इस ज़मानेमें।
कि ख़ुश होकर ख़ुदा उनको गिरफ़्तारे-बला करदे॥

बहारकोटी—वहीं हज़ारों बहिश्तें भी हैं, ख़ुदा बन्दा!
सिसक-सिसकके कटी ज़िन्दगी जहाँ मेरी॥

दिल— क्या जाने किस ख़यालसे छोड़ा ब-हाले ज़ार।
मुझपर बड़ा करम है मेरे चारासाज़का॥

असग़र गोण्डवी—
दैरो-हरम भी कूचए-जानामें आये थे।
पर शुक्र है, कि बढ़ गये दामन बचाके हम॥

दिल— जानिबे-दैरो-हरम कान लगे रहते हैं।
काश, पर्दे ही-से सुनते तेरी आवाज़ कहीं॥
गोशे-दिलके लिए कुछ दूरकी तख़सीस नहीं।
हर जगह हम तेरी आवाज़ सुना करते हैं॥

अब हम अपने पसन्दीदा शेअर तरानए-दिलसे सभी रंगके चुनकर क्रमवद्ध दे रहे हैं।

कलाम दौरे-हाजिर [१९३२ से १९५५ तक]

एहसासे-खुदी[1] बाकी न रहे, तकमीले-जुनूँ[2] है उस हदमें।
ऐ वहशते-दिल[3] आगे ले चल, हरदश्त[4] तो हमने छान लिया॥

फिर खौफे-तलातुम[5] क्या मझको जव किस्मतमें बर्बादी है।
जो मौज बढ़ी अपनी जानिव, आग़ोशमें इक तूफान लिया॥

मस्जूदे-नजर[6] मेरा है यही, कूचेको तेरे क्योंकर छोड़ूँ?
मरना है यहीं, मिटना है यहीं, यह जान लिया यह मान लिया॥

फिर एअतबारे-इश्कके काबिल नहीं रहा।
जो दिल तिरी नजरसे गिरा दिल नहीं रहा॥

आई निदा[7] कि अब तेरी मंजिल करीब है।
जब इम्तियाजे-दूरिये-मंजिल[8] नहीं रहा॥

मौजें उभारकर मुझे जिस सिम्त ले चलीं।
हद्दे-निगाह तक कहीं साहिल[9] नहीं रहा॥

खेलती थी यूँ चमनमें शोख़िये-मौजे-नसीम[10]।
वेतकल्लुफ हर कलीको मुसकराना ही पडा॥

---

[1]स्वयका ज्ञान, [2]उन्मादकी पूर्ति, [3]हृदयकी घवराहट, पागलपन; [4]जगल; [5]बहावका भय; [6]मेरा उपास्य, [7]आवाज़, [8]मंज़िलकी दूरीकी विशेषता, [9]दरियाका किनारा; [10]चचल हवा।

दश्तसे[1] एक गुबार[2] उठा, कोहसे[3] कुछ शरर[4] उड़े।
इश्क़ने रूह फूँक दी, फिर उन्हें दिल बना दिया॥

बर्क़[5] है या जमाल[6] है, सेहर[7] है या कमाल है।
हुस्ने-करिश्मासाज़ने[8] महवे-नज़र[9] बना दिया॥

शौक़े-जमाल[10] इस तरफ़, तलनएतूर[11] उस तरफ़।
हमने सवाल क्या किया, तुमने जवाब क्या दिया॥

हदियए[12]-आशिक़ी यह है, हासिले-ज़िन्दगी यह है।
दाग भी दिलनशीं[13] मिला, दर्द भी ला दवा दिया॥

कोई तुलूए-सुबहका[14] हिज्रमें मुन्तज़िर[15] रहे॥
हमने चिराग़े-ज़िन्दगी शाम ही से बुझा दिया॥

दिल हुआ मुहब्बतमें सर्फ़े-इम्तेहाँ अपना।
छा गये ज़मानेपर, जब मिटा निशाँ अपना॥

हम इसे मुहब्बतका मोजिज़ा[16] समझते हैं।
बन गया है, नासेह भी अब मिज़ाजदाँ अपना॥

अब हर आस्तानेसे बेनियाज़[17] हैं सिज्दे[18]।
जोशे-ज़िन्दगीमें सर झुक गया कहाँ अपना॥

---

[1]जगलसे, [2]धूलका गुबार; [3]पर्वतसे; [4]चिनगारियाँ; [5]बिजली; [6]रूप; [7]जादू; [8]रूपके जादूने; [9]देखनेमे लीन; [10]रूप-देखनेकी लालसा; [11]तूरपर सौन्दर्य दिखानेपर मूसाकी जो हालत हुई, उसका उलाहना; [12]प्रेमकी भेट; [13]दिलमे रहनेवाला; [14]प्रात.-काल होनेका; [15]विरह-रात्रिमे प्रतीक्षा करे; [16]चमत्कार; [17]बेपरवा, निस्पृह; [18]नमाज़मे झुकना (उपासनायें)।

ख़ूने-नाहक़[1] रंग लाया दामने-बेदाद[2] पर।
आज मज़लूमोंको[3] जोशे-इन्तेक़ाम[4] आ ही गया॥

ता-ब-लब[5] शिकवे न आये थे कि ख़ुद हूँ मुनफ़इल[6]।
हुस्नकी मअ़सूम फ़ितरतको[7] पशेमाँ देखकर॥

हश्र आफ़रीं है कूए-मुहब्बतमें हर क़दम।
हम तो बढ़े थे राहको हमवार देखकर॥

ऐ शौक़े-दीद[8]! क्या यही हद्दे-निगाह[9] है॥
हैरतज़दा हूँ संगे-दरे-यार[10] देखकर॥

ऐ हुस्न! जो सज़ाए-तमन्ना हो वह क़ुबूल।
लेकिन मेरी नज़रको फिर इकबार देखकर॥

तक़वा[11] भी आज हो गया क़ुर्बाने-मैकदा।
हर जाममें बहारके आसार देखकर॥

बढ़ते-उम्मीदो-यासे-मुहब्बतमें[12] हम रहे।
आसान जानकर कभी, दुश्वार देखकर॥

तौबाके एहतरामसे[13] थर्रा रहे थे हाथ।
दिल काँपता था जामको हर बार देखकर॥

अब क्यों शिकस्ते-अ़हदकी[14] हिम्मत है दफ़अ़तन[15]।
क्या हो गया मुझे निगहे-यार देखकर॥

---

[1]व्यर्थका रक्त-पात; [2]अत्याचारीके दामनपर, [3]अत्याचार-पीड़ितोंको, [4]बदलेका भाव, [5]ओठों तक, [6]शर्मिन्दा, [7]सौन्दर्यके भोले स्वभाव-को पछताते देखकर, [8]देखनेका चाव, [9]दृष्टिका केन्द्र [10]माशूक़की चौखटका पत्थर, [11]संयम, [12]प्रेमकी आशा-निराशाके चक्करमें; [13]गुनाह न करनेकी प्रतिज्ञाके गौरवसे, [14]प्रतिज्ञा तोड़नेकी; [15]एकाएक।

और तड़पाता है, उनका यह सवाल—
"क्या तुम्हीं हो मुब्तलाए-दर्दे-दिल[1]?"

मुझे यह देखना था वक़्ते-गिरियाँ[2]।
कि दामनमें है, गुंजाइश कहाँ तक॥

कही इक आख़िरी हिचकी ने ऐ 'दिल'।
मेरी रूदादे-हस्ती[3] थी जहाँ तक॥

आशुफ़्ता-नज़र,[4] आगाज़े-जुनूँ[5], अंजामे-जुनूँको[6] क्या कहिए।
ख़ुद उसने गरीबाँ चाक किया आया जो तेरे दीवानेतक॥

इस नतीजे तक तो पहुँचे सई-ए-लाहासिलसे[7] हम।
छा गये मंज़िल पै हम गुज़रे हैं जिस मंज़िलसे हम॥

अब जिधरका हौसला हो, ले चल ऐ वारफ़्तगी!
हो चुके आज़ाद हर अंदेशए-मंज़िलसे हम॥

हर नज़र रूदादे-हसरत[8] हर-नफ़स तमहीदे-यास[9]॥
बा-ख़बर हैं ज़िन्दगीये-हालो-मुस्तक़बिलसे[10] हम॥

चश्मे-गिरियाँ[11] जोशे-तूफ़ाँ[12] हश्र-सामाँ[13] आहे-सर्द[14]।
छा गये महफ़िलपै हम जब उठ गये महफ़िलसे हम॥

मिरा हर अश्के-ख़ूँ इक दास्ताँ है, काविशे-ग़मकी।
फ़राहम[15] कर रहा हूँ दिलके टुकड़े अपने दामाँमें॥

---

[1]दिलके दर्दसे पीड़ित, [2]रोते समय; [3]जीवन-कहानी, [4]परेशान नज़र, [5]उन्मादका प्रारंभ; [6]पागलपनके परिणामको, [7]असफलताओंके प्रयाससे, [8]अभिलाषाओंकी कहानी, [9]निराशाकी भूमिका; [10]जीवनके वर्तमान और भविष्यसे परिचित, [11]अश्रु-पूर्ण नेत्र, [12]तूफ़ानी जोश, [13]क़यामत ढानेवाली दयनीय स्थिति; [14]सर्द आहें लिये हुए; [15]एकत्र, इकट्ठे।

इस इज़्तराबपै[1] कुर्बान इक जहाने-सकूं[2]।
कोई सँभाल रहा है तड़प रहा हूँ मैं॥

मेरी ख़ामोशिये-मजबूर पर भी एक नज़र।
ज़बांसे जो न अदा हो वोह माजरा हूँ मैं॥

यह कूए-इश्ककी दुश्वारियाँ मआज़ अल्ला।
कदम-कदम पै हैं काँटे, बरहना-पा[3] हूँ मैं॥

रफ़ीक मञ्ज़िले-अव्वल ही से पलट आये।
समझ लिये कि बहुत दूर जा रहा हूँ मैं॥

सँभाल अपने दिले-मुतमइनको[4] नासेह।
कि सरगुज़िश्ते-मुहब्बत[5] सुना रहा हूँ मैं॥

इसीसे कीजिए रफ़्तारका कुछ अन्दाज़ा।
निज़ामे-देहर[6] बदलता हुआ उठा हूँ मैं॥

एहसास दर्दे-इश्कका ऐ 'दिल' मुहाल[7] है।
रक्खेगा आज हाथ मेरा चारागर कहाँ?

कोई चारासाज़ समझा न यह राज़े-इश्क अब तक।
कभी ज़ब्त मेरी फ़ितरत कभी बेकरार हूँ मैं॥

तर हो न सका अब तक गोशा किसी दामनका।
हर अश्क तरे-मिज़गाँ समझा था कि दरिया हूँ॥

वह तुम कि ज़ब्ते-सोज़े-मुहब्बतपै[8] खन्दाज़न[9]।
वह हम कि आँसुओंसे भी दामन न तर करें॥

---

[1]तड़पनेपर, [2]चैनका संसार, [3]नंगे पाँव, [4]शान्त हृदयको, [5]मुहब्बतकी बीती घटना, [6]संसार-व्यवस्था, [7]कठिन, [8]प्रेम आगको छिपानेमें, [9]हँसते हुए।

जो देखते हैं चाके-गरीबाँको बार-बार।
वह सरगुजिश्ते-इश्कपै[1] भी इक नजर करें॥

दिले-नालाकश[2] यह खबर भी है, कि निजामे-देहर[3] बदल गया
हुआ हुस्न अब नजर-आश्ना[4], रहे-इश्क पर्द-ए-राजमें[5]॥

अश्कोंको आज तक न हुई आबरू नसीब।
शर्मके सूए-दामने-तर देखता हूँ मैं॥

गुबारे-राहे-पसे-कारवाँ[6] समझ लेते।
मेरा शुमार यहाँ तक भी कारवाँमें नहीं॥

सोजो-गुदाज-इश्कको[7] दिलकश[8] बनाके देख।
तू जिस नजरसे देख मुझे मुसकराके देख॥

गिरती है, बर्क़-हुस्न[9] निगाहोंपै किस तरह।
तुझको यह देखना है, तो पर्दा उठाके देख॥

यह है, दौरे-हाज़िरमें रंगे-ज़माना।
फिसाना हकीकत[10]- हकीकत[11] फ़साना॥

उठी जब नजर हुस्ने-दिलकशकी[12] बरहम[13]।
सरे-बन्दगी झुक गया मुजरिमाना[14]॥

असीरोंके हकमें यही फैसला है।
क़फसको समझते रहें आशियाना॥

---

[1]इश्ककी बीती हुई घटनाओंपर, [2]नाला खींचनेवाले दिल, [3]दुनियाका इन्तिजाम; [4]दृष्टिसे परिचित, [5]इश्ककी राह अब अप्रकट है, [6]काबाके यात्रियोंके पीछे उडी हुई धूल, [7]प्रेमकी व्यथा और तडपको, [8]चित्ता-कर्षक; [9]रूपकी बिजली, [10]कल्पना वास्तविकता समझी जाती है, [11]सचको झूठा समझा जाता है, [12]लुभावने रूपकी, [13]क्रुद्ध, [14]अपराधियोंके समान नत मस्तक।

मायूसअज़ल[1] से हूँ माना, नाकामे-तमन्ना[2] रहना है।
जाते हो कहाँ रुख फेरके तुम, मुझको तो अभी कुछ कहना है॥

क़ुदरतकी चमन आराईका गो एक असर है दोनों पर।
गुंचे हैं कि हँसते रहते हैं शबनम है कि रोती रहती है॥

जानिबे-खानक़ाह भी एक नज़र जनावे 'दिल'!
ग़र्क़मए-तहूरमें ज़ाहिदे-पाकबाज़ है॥

कभी ज़ब्तेसोज़े-दिलसे[3], कभी गर्मिये-फ़ुग़ाँसे[4]।
जो शरर[5] उड़े चमनमें, वह मेरे ही आशियाँसे॥

मेरा हाल था जहाँ तक वह अदा हुआ ज़बाँसे।
जो कहेंगे अश्के-रंगीं वोह अलग है दास्ताँसे॥

दिले-ज़ारो-नालाकशको[6] कोई लाये अब कहाँसे?
जो दलीले-कारवाँ[7] था, वही गुम है कारवाँसे॥

न समझ सके हम अब तक वही फ़ैसला था दिलका।
जो कहा तेरी नज़रने जो सुना तेरी ज़बाँसे॥

मेरा हरनफ़स[8] ज़बाँ है, मेरी ख़ामुशी बयाँ[9] है।
यही शरहे-दास्ताँ[10] है, वोह सुनें जहाँ-जहाँसे॥

तेरी बेनियाज़ियोंने न किये क़ुबूल सिज्दे।
यही दाग़ था जबींपर जब उठे हम आस्ताँसे॥

कभी कैफ़े-आफ़रीं थे, मेरे सोज़े-दिलके नग़मे।
यही साज़ अब है मातम, इसे छेड़िए जहाँसे॥

---

[1]सृष्टिके प्रारम्भसे निराशावादी; [2]अतृप्त अभिलाषी; [3]प्रेमाग्निके दबानेसे; [4]आहोंकी गर्मीसे; [5]चिनगारियाँ; [6]सन्तप्त हृदयको; [7]यात्री-दलका चिन्ह, मार्ग-दर्शक; [8]हर साँस; [9]वाणी; [10]कहानीका आशय।

तेरे नाज़ो-तमकनतकी युँ ही ठोकरें गवारा।
यह जबीं मेरी जबीं है, न उठेगी आस्तांसे॥

यह खलिश वही खलिश है जो न मिट सकेगी ऐ 'दिल'!
कोई खींचता है, नावक मेरे ज़ख़्मे-खूँचुकाँसे॥

समझिए ख़ाके-दिलको रायगाँ[1] दुनियाकी नज़रोंमें।
यही पामाल होकर इक जहाँ मअ़लूम होती है॥

अब उस कूचेमें बहरे-इम्तिहाँ मर मिटके पहुँचा हूँ।
जहाँ जिन्से-वफ़ा तक रायगाँ मअ़लूम होती है॥

मुहब्बतकी खलिशको[2] पूछिये दर्द-आश्ना दिलसे[3]।
कहाँ मस्तूर[4] रहती है, कहाँ मअ़लूम[5] होती है॥

लबे-ख़ामोशसे इक उफ़ निकल जाना ब-मजबूरी।
कोई समझे तो यह इक दास्ताँ मअ़लूम होती है॥

मेरे मिटते ही रुख़ बदला हवाये-कूये-जानाँने।
यह सइये-आख़िरी[6] भी राएगाँ[7] मअ़लूम होती है॥

उठें जो बहरे-करम[8] वोह निगाहे-बेपरवा[9]।
सकूने[10]-अहले-मुहब्बत है उम्र भरके लिए॥

तेरी कोशिशें हैं, तबाहकुन, न उभर सका कभी डूबकर।
कि तेरी ख़ुदापै नज़र नहीं, तुझे नाख़ुदाकी तलाश है।
इसी सिलसिलेमें गुज़र गये, कई दौर मंज़िले-इश्कके।
कभी रहनुमाकी ख़बर नहीं, कभी रहनुमाकी तलाश है॥

---

[1]व्यर्थ; [2]प्रेम-व्यथाको; [3]दु:खी हृदयसे; [4]छिपी; [5]प्रकट; [6]अन्तिम प्रयास; [7]नष्ट; [8]करुणा दिखाने को; [9]लापरवाह चितवन; [10]चैन।

वह कौनसे मुकाम थे ऐ जब्ते-राजे-इश्क!
हम जिन हदोंमें चाक गरेबाँ न कर सके॥

करेंगे इश्ककी रुसवाइयोंपर ग़ौर ऐ नासेह!
कभी फुर्सत अगर हो जायगी चाके-गरीबाँसे[1]॥

वअ़देपै एअतबार मगर शाम ही से हम।
वोह मुन्तज़िर कि सुबहे-कयामत नज़रमें है॥

अब तो जुनूने-इश्ककी तकमील[2] हो गई।
दीवाना आज आपने भी कह दिया मुझे॥
वह कौन-सी कशिश थी कि बे इख़्तियार आज।
सर तेरे आस्ताँपै झुकाना पड़ा मुझे॥

निगाहे-शौकको[3] शाख़े-निहाले-गुलकी तलाश[4]।
हवाए-तुन्दको[5] यह ज़िद कि आशियाँ न बने॥[6]
किये निगाहने सिज्दे रहे-मुहब्बतमें।
वफ़ाका फ़र्ज़ यही था कहीं निशाँ न बने॥

हक़ीक़त कुछ नहीं वहमो-गुमाँ है॥
यह आ़लम दास्ताँ ही दास्ताँ है॥

---

[1]कुरतेका गला फाड़नेसे, [2]उन्मादकी चरम सीमा; [3]सुरुचिपूर्ण नेत्रोंको, [4]फूलोंकी हरी-भरी टहनीकी खोज; [5]तेज़ हवाको।

[6]इसी काफिये-रदीफमें 'असर' लखनवीने अकर्मण्योंपर देखिए कितना तीखा व्यंग्य किया है—

यह सोचते ही रहे और बहार ख़त्म हुई।
कहाँ चमनमें नशेमन बने, कहाँ न बने?

तसल्ली नामावरकी है, नजरमें।
समझता हूँ जो अन्दाज़े-बयाँ है॥
वही यह मंजिलत वर्वाद होकर।
हवाओं पर हमारा आशियाँ है॥

ग़ुबारे-कारवाँका ज़र्रा-ज़र्रा।
मेरी वर्वादियोंकी दास्ताँ है॥

कलाम दौरे-मुतवस्सित [१६०५ से १६३२ तक]

हम और संगे-दर[1] है किसी मस्ते-नाजका[2]।
अल्लाहरे उरूज[3] जिबीने-नियाजका[4]॥

यह मुज़्दा[5] था अजव मुज़्दा कि "आते हैं वोह बालीं पर"।
निकलकर दिलसे ऐ दिल ! रुक गया आँखोंमें दम मेरा॥

वार-हा डूबके उभरा मेरे दिलका नश्तर।
राज फिर भी न खुला इश्ककी गहराईका॥

नजर आती है, मुझे हुस्नकी दुनिया बेहिस[6]।
किसको अफ़साना सुनाऊँ शबे-तनहाईका[7]?

मिटगया जब मिटनेवाला फिर सलाम आया तो क्या।
दिलकी बरबादीके बाद उनका पयाम आया तो क्या॥
छुट गई नब्ज़ उम्मीदें देने वाली हैं जवाब।
अब उधरसे नामाबर लेके पयाम आया तो क्या?
आज ही मिटना था ऐ दिल हसरते-दीदारमें[8]।
तू मेरी नाकामियोंके बाद काम आया तो क्या॥

---

[1]चौखटका पत्थर; [2]मग़्रूरका; [3]उन्नति, गौरव; [4]श्रद्धापूर्ण मस्तकका; [5]शुभ सन्देश; [6]अकर्मण्य; [7]विरह-रात्रिका; [8]दर्शनोंकी लालसामें।

काश अपनी ज़िन्दगीमें हम यह मंज़र[1] देखते।
अब सरे-तुर्बत कोई महशर-ख़िराम आया तो क्या॥
साँस उखड़ी, आस टूटी, छा गया जब रंगे-यास।
नामाबर लाया तो क्या, ख़त मेरे नाम आया तो क्या॥
मिल गया वह ख़ाकमें, जिस दिलमें था अरमाने-दीद[2]।
अब कोई ख़ुर्शीदवश[3] बालाए-बाम आया तो क्या॥
रोते-रोते जो हमेशाके लिए चुप हो गया।
उसके मदफ़न पर कोई शीरीं-कलाम[4] आया तो क्या॥

बहला रहे हैं अपनी तबीअ़त ख़िज़ाँ नसीब।
दामनपै खींच-खींचके नक़्शा बहारका॥

जब दिलमें दर्दे-इश्क़ उठा हम उछल पड़े।
समझे कि यह करम[5] है, किसी दिल-नवाज़का[6]॥

नारसाईका[7] सबब क्या है, यही ज़ौक़े-तलब[8]।
बढ़ गये हम इस क़दर आगे, कि रहबर[9] रह गया॥

क्या कहूँ किस आर्ज़ूका ख़ून होकर रह गया।
दिलकी दिल ही में रही जब खिंचके ख़ंजर रह गया॥

यह गोया वाक़ेआ़ते-बज़्मे-हस्तीका[10] ख़ुलासा है।
तेरा यूँ दफ़अ़तन[11] ख़ामोश ऐ शमए-सहर[12] होना॥
उधर घबराके ग़म ख़्वारोंकी मायूसाना[13] सरगोशी[14]।
इधर बीमारका कुछ कहके सबसे बेख़बर होना॥

---

[1]दृश्य; [2]देखनेकी इच्छा; [3]सूर्यमुखी; [4]मधुरभाषी; [5]मेहर्बानी; [6]सहृदयका; [7]उनतक पहुँच नहीं होनेका; [8]चाह की अभिरुचि; [9]मार्ग-दर्शक; [10]ज़िन्दगीकी महफ़िलके वाक़ेआ़तका, [11]अकस्मात; [12]प्रातःकालीन दीपक; [13]निराशा भरी; [14]कानाफूसी।

आग़ाज़े - मुहब्बतसे अंजामे - मुहब्बततक।
गुज़री है जो कुछ हम पर तुमने भी सुना होगा॥

क्या सुनायें सरगुज़िश्ते-ज़िन्दगीए-पुरअलम[1]।
आशियाँ अब तो क़फ़स है, इससे पहले दाम[2] था॥

हर हक़ीक़त मुख़्तसिर दिलके लिए वह मौत थी।
इस्तलाहे-आममें तसकीन जिसका नाम था॥
अब वोह आग़ोशे-लहदमें सो रहा है, चैनसे।
जो सितमकश ना-शिनासे-राहतो-आराम था॥

मुहब्बत क्या है ? दिलका बेकसो-मजबूर हो जाना।
सुकूनो-ज़ब्तकी मंज़िलसे कोसों दूर हो जाना॥

मआल[3] उस मुन्तज़िरका क्या हुआ जिसकी यह हालत थी॥
कभी घबराके सर धुनना, कभी मसरूर हो जाना॥

सुन ऐ मजरूह-दिलको[4] मुस्कराकर देखने वाले।
इसीका नाम है, नासूर-दर-नासूर हो जाना॥

नतीजे तक खिंचे क्या-क्या उमीदो-यासके[5] नक़्शे।
तलातुममें[6] थी किश्ती, सामने नज़रोंके साहिल[7] था॥

रहनुमाकी[8] क्या ज़रूरत इश्क़ कामिल चाहिए।
दिल जहाँ तड़पे समझ लेना यही है कूए-दोस्त[9]॥

किधर है, वर्क़े-सोज़ाँ काश यह हसरत भी मिट जाती।
बनायें तिनके चुन-चुनकर हम अपना आशियाँ कब तक ?

---

[1]व्यथासे ओतप्रोत जीवनकी कहानी; [2]जाल; [3]परिणाम, नतीजा; [4]घायल दिलको; [5]आशा-निराशाके; [6]तूफानमे; [7]किनारा; [8]पथ-प्रदर्शक; [9]प्रेयसीका कूचा।

वही शोरिश, वही शोरिश है, दिलके खाक होने पर।
शरर तो बुझ गया उमडेगा आखिर यह धुआँ कब तक ?

अजल ही काश आ जाती सुकूने-मुस्तकिल[1] बनकर।
शबे-ग़म करवटें बदले मरीज़े-नातवाँ[2] कब तक ?

गोशे-इबरत हो तो सुन लो मरमिटोंकी सर गुज़िश्त।
यह ज़बाने हालसे क्या जाने क्या कहनेको है॥

जुनूँका मकसदे-अव्वल है ऐ दिल! खाना-बर्बादी।
जब इस हदसे गुजरता है तो, पहुँचाता है, ज़िन्दाँमें[3]॥

नीची नज़रें है, तबस्सुम लबपर।
खूब चर्के वोह दिये जाते है॥

हक तो यह है, कि खता तुमसे हुई ऐ मन्सूर!
थीं छुपानेकी जो बातें वोह बा-आवाज कहीं॥

बैठे तो गर्दकी तरह, उट्ठे तो दर्दकी तरह।
उम्र यूँ ही गुजार दी दश्ते-जुनूँ-नवाज़में॥

मिटे वोह दिल जो मुहब्बतमें बेकरार न हो।
वफ़ा-शिआ़र न हो, महवे-इन्तज़ार न हो॥
रवाँ है, अश्के-मुसलसल इधर भी एक नज़र।
मेरी ज़बान पै मुम्किन है, एअ़तबार न हो॥

वह इक पयामे-अजल था मरीज़े-ग़मके लिए।
किसीका हँसके यह कहना "खुदाको याद करो"॥

---

[1]स्थायी चैन, [2]निर्बल रोगी; [3]कैदमें।

ग़मे-फ़िराक़का ज़ाहिर असर नहीं न सही।
जिगर तो ख़ून हुआ, आँख तर नहीं न सही॥

यही है, सोज़े-दिले-अन्दलीबके मअ़नी।
क़फ़स तो फूंक दिया चन्द पर नहीं न सही॥

निगाहे-मस्तसे ओ मुड़के देखने वाले!
तुझे तो है मुझे अपनी खबर नहीं न सही॥

यह सोचता हूँ कि ख़ुद जाके अर्ज़े-हाल कहूँ।
हवाए-शौक सही, नामावर नहीं न सही॥

हया तो हज़रते-'दिल' और दिल लुभाती है।
किसीकी आँखमें शोख़ी अगर नहीं न सही॥

उड़ चला हर ज़र्रा सूये-कूये-दोस्त।
हो चुकी जब खाना वीरानी मेरी॥
पीछे-पीछे हसरतोंका क़ाफ़िला।
आगे-आगे है परेशानी मेरी॥

कहिए तो कह दूं अर्शेवरींको[1] मुकामे-दोस्त।
हिम्मत मगर कुछ और है अपने खयालकी॥

है-है यह बेकसिये-मुहब्बत कि खाके-दिल।
अपनी नज़रके सामने बरबाद हो गई॥

हुज़ूरे-दोस्त यही इल्तजाए[2]-आख़िर है।
निगाहे-याससे[3] हम शरहे-आर्ज़ू[4] करते॥

---

[1]ईश्वरीय स्थानको; [2]अन्तिम निवेदन; [3]निराशा भरे नेत्रोसे; [4]अभिलाषाओका अर्थ समझाते।

यह मुद्दआ है कि दिन-रात अश्क बार रहूँ।
मगर न वह मेरे अश्कोंकी आबरू करते॥
कुजा[1] मरीज़े-मुहब्बत, कुजा उमीदे-शिफ़ा[2]।
यह सब बजा मगर अपनी-सी चाराजू[3] करते॥

तलाशे-दोस्तमें ख़ुद खो गये मगर ऐ दोस्त!
यह हौसला है, अभी और जुस्तजू करते॥
तलाशे-दोस्त कुजा, आरज़ूए-दीद कुजा।
हमें तो उम्र हुई अपनी जुस्तजू करते॥

शौक़े-दिल जितना बढ़ा, गर्द और भी बढ़ती गई।
आगे-आगे फ़ँसके घोका-सा कुछ महमिलका है॥
पास रहकर यह तकल्लुफ़, साथ रहकर यह हिजाब।
मेरा उनका फ़ासिला गोया कई मंज़िलका है॥
हुस्न क्या है? एक इशवा[4] जिसकी फ़ितरत[5] दिल फ़रेब[6]।
इश्क क्या है? एक नक़्शा इज़्तरावे-दिलका[7] है॥

कूचए-दिलवरमें अपना बैठना-उठना यह है।
नक़्शे-हसरत बनके बैठे, गर्द बन-बनकर उठे॥
हम सरे-मंज़िल गिरे, ग़श खाके यह तो याद है।
क्या ख़बर किसने उठाया, कब उठे, क्योंकर उठे॥
हमको राहे-इश्क़में हर मरहला दुश्वार था।
ठोकरें खाकर कभी सँभले, कभी गिरकर उठे॥
है नमाज़े-इश्क़का ऐ 'दिल'! यह शाने-आजिज़ी।
आस्ताने-दोस्तसे क्योंकर हमारा सर उठे॥

---

[1]कहाँ-कैसी; [2]निरोग होनेकी आशा; [3]हकीम लोग; [4]जादू; [5]स्वभाव; [6]दिल लुभाना; [7]बेचैन दिल का।

पैरहन फाड़ लें गुंचे तो वह ज़ीनत ठहरे।
हम ग़रीबाँ ही करें चाक तो रुसवाई है॥

मंजिलका ख़्वाब देख रहे थे, ख़िज़ाँ नसीब।
चौंके तो कारवाँसे बहुत दूर हो गये॥

यह नतीजे हैं, हमारे नाल-ए-शबगीरके[1]।
बढ़ गये कुछ और हलके आहिनी-ज़ंजीरके[2]॥

फिर गई दफ़्अ़तन किसी की नज़र।
यह भी इक गर्दिशे-ज़माना है॥

यूँ मिटायेंगे दाग़े-नाकामी।
सर है और उनका आस्ताना है॥

हमदम! ग़मे-फ़ुर्क़तकी, तशरीह[3] नहीं मुम्किन।
इक नश्तरे-सद-ईज़ा[4] हर-हर नफ़्से-दिल[5] है॥

ऐ दिले-मुद्दआ़ तलब[6]! महवे-फ़रेबे-आरज़ू[7]!
हुस्न हो माइले-करम[8] यह तो ख़याले-ख़ाम[9] है॥

बहार जाम बकफ़ झूमती हुई आई।
शिकस्ते-अ़हद न करते तो और क्या करते?

नज़रमें हिम्मते-जलवा अगर नहीं न सही।
कभी-कभी तेरी आवाज़ ही सुना करते॥

---

[1]रात भरकी आहोफ़ुग़ाँके; [2]लोहेकी ज़ंजीरके; [3]खु[लासा]
भाष्य; [4-5]शरीरका रोम-रोम नश्तरकी सैकड़ों चुभन
अनुभव कर रहा है; [6]अभिलाषी हृदय; [7]इच्छाओंके धोकोमें [...]
[8]कृपा करे; [9]व्यर्थ आशा।

कलाम दौरे-क़दीम [१६०५ ई० से पूर्वका]

हम नफ़स[1] मसरूफ़े-दरमाँ[2] ना-शिनासे-राज़[3] थे।
इश्क़की मजबूरियोंसे बा-ख़बर कोई न था॥

एक यह दिन है कि अपनी दुआ है राएगाँ।
एक वह दिन था कि नाला बे असर कोई न था॥

हुस्न ख़ूगर[4] है दिलरुबाईका[5]।
खुल गया राज़[6] ख़ुदनुमाईका[7]॥

हमें कफ़समें कलक क्या हो आशियानेका।
समझ लिये कि यही रंग है ज़मानेका॥

फ़क़त है वअ़दा ही वअ़दा नहीं वह आनेका।
पुकारता है यह अन्दाज़ मुसकरानेका।

हँसे जो ज़ख़्मे-जिगर और चोट खायेंगे।
लहू रुलायेगा, अन्दाज़ मुस्करानेका॥

चले वह नाज़से मुँह फेरकर तो हम यह समझे।
यह चाल हुस्नकी है, वह चलन ज़मानेका॥

मुदाम दाग़े[8]-मुहब्बतसे दिल रहे रोशन।
कभी चिराग़ न गुल हो ग़रीबख़ानेका॥

वह हम कि जादए-तसलीमसे क़दम न हटे।
वह तुम कि रंग उड़ाते रहे ज़मानेका॥

---

[1]इष्ट-मित्र; [2]इलाजमें व्यस्त; [3]वास्तविकतासे अनभिज्ञ; [4]आदी; [5]दिलकी चाहतका; [6]भेद; [7]बनने-सँवरनेका; [8]-[8]प्रेमाग्निसे सदैव।

गुबार बनके उठे छा गये ज़मानेपर।
मआ़ल देख लिया ऐ फ़लक मिटानेका।

यह किसने सिज्दे किये हैं, कि फ़र्ते-नख़्वतसे।
दिमाग़ अ़र्शपै है, तेरे आस्तानेका॥

इधर तो ख़ुल्द नहीं फिर इधर कहाँ ऐ शेख़!
हुज़ूर! यह तो है रस्ता शराबख़ानेका॥

वह मेरी अ़र्ज़ कि दिल दाद-ए-वफ़ा हूँ मैं।
वह उनका कौल कि "किस्सा है किस ज़मानेका"?

रहेगा नक़्श मेरी तुरवते-शिकस्तापर।
करिश्मा वह तेरे दामन बचाके जानेका॥

शमअ़ गिरियाँ[1] रही परवानोंकी जाँ-बाज़ीपर।
हमने ऐ 'दिल'! यही महफ़िलमें तमाशा देखा॥

आ़शिक़े-सब्र-आज़मा[2] आ़लममें रुसवा हो गया।
ऐ ख़याले-पर्दादारी[3] राज़ अफ़शाँ[4] हो गया॥

हाथ दिलपर रखके यह कहना किसीका याद है—
"अब उसे अपना न कहना, यह हमारा हो गया"॥

सर अपना है, किसीके आस्ताँ पर।
जबीने-इज़्ज़ पहुँची आस्माँ पर॥

बहारे-गुल है, कितनी कैफ़-अंगेज़[5]?
झुकी पड़ती है, शाख़ें आशियाँ पर॥

---

[1]रोती; [2]सन्तोषी प्रेमी; [3]बातको छिपानेका ख़याल; [4]भेद खुल गया; [5]मतवाली।

हवा रहबर, गुबारे-दश्त वहशत।
चला हूँ मिटने वालोंके निशाँ पर॥
जरीफाना है मुझपर लुत्फे-सैयाद।
कफस लटका दिया है आशियाँ पर॥
हवा ख्वाहे-चमन चन्द और भी थे।
गिरी बिजली मेरे ही आशियाँपर॥

न बेगाना बनकर, न मेहमान बनकर।
रहे दिलमें पैकाँ मेरी जान होकर॥
असर है यह कूए-मुहब्बतका ऐ 'दिल'!
मिली मुझको राहत परीशान होकर॥
शबे-गम निकल जायगी हर तमन्ना।
कोई आह बनकर, कोई जान होकर॥

बअ़दे-फना गुबारने पाया अजब उरूज।
हम खाक भी हुए तो रहे आस्मान पर॥
हम खाकसार है, हमें जेबा है, फर्शे-खाक।
वोह रश्के-माह है, वोह रहें आस्मानपर॥

अफसानए-मुहब्बत कुछ मसलेहत समझकर।
हम कह सके वहीं तक, वह सुन सके जहाँ तक॥
नाकाबिले-बयाँ है, रुदादे-सोजे-पिन्हाँ[1]।
शोअ़ले तो क्या भड़कते, उठता नहीं धुआँतक॥

किस कदर दिलचस्प होगा मजरे-नाजो-नियाज।
तीर बरसायेगा कोई फूल बरसायेंगे हम॥

---

[1]पोशीदा प्रेमाग्निकी कहानी।

क्या है इस इकरारका मतलब, दिले-हसरत-नसीब !
मुसकराकर वह यह कहते हैं "जरूर आयेंगे हम" ॥

जबाने-हालसे कहती है, शमए-बज्म घुल-घुलकर।
"न समझो गैर मुझको मैं शरीके-सोजे-महफिल हूँ" ॥

खयाले-चारासाजीसे किसीका हाथ है दिलपर।
पड़ा हूँ किस सलीकेसे अजब हुशियार गाफिल हूँ ॥

अल्लाहरे इक आईनए-पैकरका तसव्वुर।
हैरतसे मुझे अहले-नजर देख रहे हैं ॥

बाकी न रहे हजरते 'दिल' दीदकी हसरत।
वह चश्मे-मुहब्बतसे इधर देख रहे हैं ॥

पर्दा उठ जाये तो इजहारे-हकीकत हो जाय।
मुज़्तरिब मैं तो इधर हूँ, वह उधर है कि नहीं ॥

तुम पहिले चारासाजो ! उनकी नजरको देखो।
फिर मेरे दिलको देखो, मेरे जिगरको देखो ॥

हमसे गुदाजे-दिलकी रूदाद पूछना क्या ?
तुम अश्के-ख़ूँ को देखो, दामाने-तरको देखो ॥

है इज्तिराबे-दिलपर क्यों इस क़दर तअज्जुब ?
अपनी अदाको देखो, अपनी नजरको देखो ॥

क्या देखते हो मेरे दम तोड़नेका आलम।
तुम मुड़के वक्ते-रुखसत शम-ए-सहरको देखो ॥

खूगरे-ना-मेहर्बानी है किसीके इश्कमें।
अब तमन्ना है, कि हमपर मेहर्बां कोई न हो ॥

लड़खड़ाते हैं क़दम मंज़िल जब आ पहुँची करीब।
आ़लमे-गु़र्वतमें[1] मुझ-सा नातवाँ[2] कोई न हो॥
हमको उनसे है ग़रज, दुनिया हुई अपनी तो क्या।
वह अगर ना-मेहर्वां हों, मेहर्वां कोई न हो॥

शवे-हिज्र फ़र्ते-ग़ममें मुझे आगया तवस्सुम।
जिसे रो रही हो किस्मत वह ख़ुद अश्कबार क्यो हो॥
हुई शामिले-मुकद्दर जब अजलसे तल्ख़कामी।
कोई जहर भी अगर दे, मुझे नागवार क्यो हो॥

ऐसी प्यारी-प्यारी सूरत आईना पाता कहाँ?
शादमाँ[3] है हुस्नका खाका उड़ाकर आईना॥

वे असर कूए-मुहब्बतमें[4] शकेबाई[5] हुई।
इन्तहाए-पर्दादारी[6] वजहे-रुसवाई[7] हुई॥

अ़जब तशबीह है इक शाहिदे-यकताके दामनकी।
मेरी तख़यीलने तसवीर खींची बर्क़-ऐमनकी॥

कुजा[8] लुत्फे-चमन, जब फिर रहा है दाम[9] नजरोंमें।
बहार आई तो शाखें झुक गई मेरे नशेमनकी॥

हजरते-'दिल'! जब बुढापा आयेगा।
ख़ैर मकदमको जवानी जायेगी॥

नहीं आता जो कोई वअ़दा ख़िलाफ़।
नींद भी ता-सहर[10] नहीं आती॥

---

[1] सफरमें; [2] असहाय-कमजोर; [3] प्रसन्न; [4] प्रेम-मार्गमें; [5] धैर्य रखना निष्फल हुआ; [6-7] भेदको छिपानेकी अधिक-से-अधिक कोशिश ही बदनामीका कारण हुई; [8] वहाँ, कैसा; [9] जाल; [10] सुबह तक।

आलमे-ख़्वाबमें भी वह सूरत।
नज़र आती नज़र नहीं आती॥
क्यों न हों वे नियाज़े-कअ़्बाओं दैर।
जब वह सूरत नज़र नहीं आती॥

इससे पहिले ही क़फ़स अपना नशेमन हो चुका।
जब चमनमें झूमती बादे-बहार आनेको थी॥

मुझे अपने मुक़द्दरपर हँसी बे-इख़्तियार आई।
सबा जब फूल दामनमें लिये सूए-मज़ार आई॥

अ़नादिलके लिए क्या कम थे शोअ़्ले आतिशे-गुलके।
चमककर बर्क़ क्यों सूए-नशेमन बार-बार आई॥

निगाहे-बाग़बाँमें यह भी थी इक शर्ते-आराइश।
किसीका आशियाँ उजड़ा चमनमें जब बहार आई॥

अ़नादिलको हो मुज़्दा[1] हम तो हैं अफ़सुर्दा[2] दिल ऐ 'दिल'!
हमें क्या, कब ख़िज़ाँ रुख़सत हुई, किस दिन बहार आई?

तुझको रुख़े-पुरनूर छुपाना है, छुपाले।
देखेंगे बहरहाल तुझे देखने वाले॥

"ग़ुबार बनके उठो, फिर फ़लकपै छा जाओ"।
यह कह रहा है, कोई ख़ाकमें मिलाके मुझे॥

यह और ज़ख़्मे-जिगर पर नमक छिड़कना है।
वह देखते हैं, दमे-नज़अ़[3] मुस्कराके मुझे॥

---

[1]शुभ सन्देश; [2]मुर्झाये हुए; [3]मृत्यु-समय।

वह गमनसीब हूँ ऐ दिल कि बज्मे-हस्तीमें।
कभी किसीने न देखा नज़र उठाके मुझे॥

हमपर एहसाँ है इक सितमगरका।
उम्रभर सर नहीं उठानेका॥

दम हैं घुटनेके लिए, अश्क है ढलनेके लिए।
सूरते-शमअ़ बहरहाल हूँ जलनेके लिए॥

दारे-फनासे[1] चश्मे-ज़दनमें[2] गुज़र गये।
हम मिस्ले-वर्क़[3] आये थे, शक्ले-शरर[4] गये॥
कतरे गये तो क़ूवते-परवाज बढ़ गई।
उड़ते हुए चमनको मेरे बालो-पर गये॥
वह चश्मे-मुनफ़इ़लसे[5] मुझे देखते न काश।
तस्कीन[6] देने आये थे बेचैन कर गये॥

ना-आश्नाए-साग़रे-मै हो चुका हूँ मैं।
लेकिन वह जाम दें तो कुछ इन्कार भी नहीं॥

मुदाम कैसके आगे रही परेशानी।
हमींको राहे-मुहब्बतमें रहनुमा न मिला॥

इधर बज्ममें वह रहे जलवागर।
उधर ता-सहर शमअ़ जलती रही॥
कोई वअदे-पै-वअदे करता रहा।
क़ज़ा रोज आ-आके टलती रही॥

---

[1]असार संसारसे; [2]पलक मारते; [3]बिजलीके समान; [4]चिनगारी-की तरह; [5]शर्मीली नज़रोंसे; [6]तसल्ली, सान्त्वना।

जज्बए-जाँ-सोज़ हो हासिल, उस अफसानेसे क्या।
वजहे-खामोशी कहे फिर शमअ् परवानेसे क्या॥

हँगामे-नजअ् है, यही तद्‌बीर आखिरी।
हर चारा साज अब मेरे हकमें दुआ करे॥

रात-दिन बेखुदी-सी तारी है।
कुछ अ्जब ज़िन्दगी हमारी है॥

हो गई रुखसत गुलिस्ताँसे बहार।
क्या उदासी है, दरो-दीवार पर॥

हजरते-'दिल'! हर निशाते-जिन्दगी।
कर चुके क़ुर्बां निगाहे-यारपर॥

मिली राहत हुजूमें-यासो-ग़ममें खून रो-रोकर।
लगी दिलकी बुझाई है तो कुछ-कुछ दीदए-तरने॥
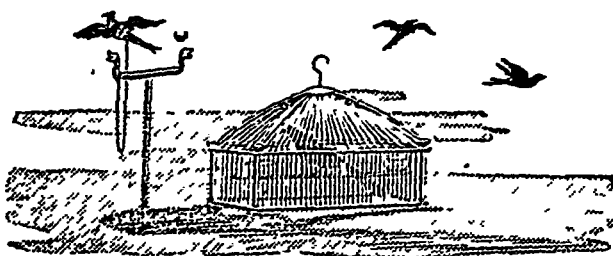
हम सफीरो! फ़स्ले-गुल आने तो दो।
खुद-ब-खुद हो जायेंगे तैयार पर॥

१५ अगस्त १९५७ ई०.

जलीलहसन 'जलील' १८६४ ई० में मानिकपुर (अवध) में उत्पन्न हुए। १०-११ वर्षकी उम्रमे समूचा कुरआन कठस्थ कर लिया। शिक्षाका जमाना वहुवा लखनऊमे व्यतीत हुआ। वहाँ आपने अरवी-फारसीकी उच्च शिक्षा प्राप्त की। सुखनगोईका शौक विद्यार्थी अवस्थासे ही था। २० वर्षकी उम्रमे अमीर मीनाईके शिष्य हुए, और उस्तादके जीवन-कालमें सदैव उनके साथ रहे। आपकी भक्ति और योग्यतासे उस्ताद इतने प्रभावित हुए कि अपनी उस्तादीकी गद्दी आपको ही सुपुर्द कर गये।

अमीर मीनाई रामपुरमें रहकर जव 'अमीरुललुगात' जैसे वृहत्कोशका निर्माण कर रहे थे, और उसके लिए एक विस्तृत कार्यालय खोला गया था, तव 'जलील' पर ही उसके सपादनका भार डाला गया था। वनारस, भोपाल आदिकी यात्राओंमें भी आप उस्तादके कदम-व-कदम साथ रहे। १९०० ई० में जव हज़रत अमीर मीनाई हैदरावाद स्थायी रूपसे रहनेको चले गये तो भी आप उनके साथ ही रहे। वहाँ दो उर्दू-पत्रोंके सपादनका कार्य आपके सुपुर्द हुआ। मिर्ज़ा दागकी मृत्युके वाद १९०८ ई० मे तत्कालीन नवाव हैदरावादने अपना कविता-गुरु आपको स्वीकृत किया और मिर्ज़ा दागके रिक्त स्थानपर प्रतिष्ठित किया। 'जलीलुलकद्र' खितावसे विभूपित किया। फिर वर्त्तमान नवावने जव शासनकी वागडोर सँभाली तो उन्होंने भी उस्तादीका गौरव आपको ही प्रदान किया, और आपके जीते जी

आपसे ही मशविरए-सुख़न लेते रहे। पहले आपको "नवाब फसाहत जंग बहादुर" खिताब अता किया गया। दुबारा "इमामुल मुल्क" की पदवीसे विभूषित किया। नवाब साहबके अतिरिक्त युवराज, शहज़ादे भी आप ही से इस्लाह लेते थे। पहला दीवान 'ताजे-सुखन' १९१० मे प्रकाशित हुआ। दूसरा दीवान 'जाने-सुखन' १९१६ में छपा। तीसरा दीवान रूहे-सुखन मुद्रणकी प्रतीक्षामे है। इनके अतिरिक्त बीसो महत्त्वपूर्ण पुस्तकोंके आप रचयिता हैं। ६ जनवरी १९४६ ई० मे आपने हैदराबादमे समाधि पाई।

आपके खुद पसन्दीदा अशआरमें से चन्द शेअ़र निगार जनवरी १९४१ से यहाँ साभार दिये जा रहे हैं।

इन्तिख़ाब अज़ ताजे-सुख़न

मेरी वहशत[1] भी तमाशा हो गई।
जो इधर गुज़रा, खड़ा देखा किया॥

आज ही आ जो तुझको आना है।
कल ख़ुदा जाने मै हुआ-न-हुआ॥

मज़ा लेंगे हम देखकर तेरी आँखें।
उन्हें ख़ूब तू नामावर[2]! देख लेना॥

यह रंग गुलाबकी कलीका।
नक़्शा है किसीकी कमसिनीका॥
मुँह फेरके यूँ चली जवानी।
याद आ गया रूठना किसीका॥

ऐ 'जलील'! आँसू बहाये तुमने क्यों?
उनको हँसनेका बहाना मिल गया॥

---

[1]उन्माद, दीवानगी; [2]पत्र-वाहक।

इस इत्तिफ़ाक़को फ़ज़्लेख़ुदा समझ वाइज़ !
कि हिज्रो-ए-मैं[1] तेरे लबपर थी मुझको होश न था ॥
दुकाने-मैंपै पहुँचकर खुली हक़ीक़ते-हाल।
हयात[2] बेच रहा था वोह मै-फ़रोश न था ॥

मुनहसिर मौसिमे-गुलपै नहीं सौदा मेरा।
आगया ज़िक्र तेरा और मैं दीवाना हुआ ॥

क़ासिद चला यहाँसे जो लेकर पयामे-शौक़।
कुछ कहते-कहते मैं कई मंज़िल निकल गया ॥

हक़ीक़तमें पता देता है दरपरदा मुहब्बतका।
'जलील'! उनका तुम्हारे नामपर ख़ामोश हो जाना ॥

मिलती-जुलती है क़यामतसे शबाहत[3] लेकिन।
इक ज़रा रंग है गहरा शबे-तनहाईका[4] ॥

पाए-साक़ीपै तौबा लोट गई।
हाथमें इस अदासे जाम लिया ॥

मेरे आनेकी तो बन्दिश है मगर।
क्या करेंगे, मैं अगर याद आया ॥

ऐ चर्ख़ ! कितने ख़ाकसे पैदा हुए हसीन ?
तू एक आफ़ताबको चमकाके रह गया ॥

लाया गुले-मुराद न झोंका नसीमका।
दामन मैं हर बहारमें फैलाके रह गया ॥

---

[1] शराबकी बुराई; [2] ज़िन्दगी, [3] उपमा; [4] विरह-रात्रिका।

किसीका हुस्न अगर बेनकाब हो जाता।
निजामे-आलमे-हस्ती[1] खराब हो जाता॥

कौन बेकस गरीके-बह्र[2] हुआ?
सर पटकती हैं मौजें साहिलपर[3]॥

आँखोंको छोड़ जाऊँ, इलाही मैं क्या करूँ?
हटती नहीं नजर रुखे-जानाना[4] छोड़कर॥

हाय! वोह दर्द-आश्ना[5] था किस क़दर?
जिसने डाली है बिनाए-दर्दे-दिल[6]॥

आप आयें पूछने मेरा मिजाज।
मैं तसद्दुक,[7] मैं फिदाए[8]-दर्दे-दिल॥

मुहतसिबसे[9] मैकशीका[10] ढंग सीखा चाहिए।
मस्त है लेकिन जरा उसपर गुमाँ[11] होता नहीं॥

निकहते-गुलकी[12] परेशानी न पूछो बागमें।
इस तरह ताइर[13] कोई बे आशियाँ होता नहीं॥

अगर यह सच है तो मरनेपै नाज है मुझको—
"तर आँसुओंसे रही उनकी आस्तीं बरसों"॥

क़ासिद-पयामे-शौकको देना न बहुत तूल।
कहना फ़क़त यह उनसे कि "आँखें तरस गईं"॥

---

[1]जीवन-व्यवस्था; [2]नदीमें डूबा; [3]किनारेपर; [4]प्रेयसीके मुखसे; [5]दर्दसे परिचित; [6]दर्देदिलकी नींव; [7]कुर्बान; [8]न्योछावर; [9]खुदाके यहाँ हिसाब लेनेवाला; [10]मदिरा-पानका; [11]शक; [12]फूलकी सुगन्धकी, [13]परिन्दा।

गुज़रीं जो इस तरफसे हसीनोंकी टुकड़ियाँ।
कुछ रो गई तो कुछ मेरे रोनेपै हँस गई॥

आके दो दिनको फस्ले-गुल साक़ी!
मुब्तिला[1] कर गई गुनाहोंमें॥
ख़िज्रको ढूँढ़ने मैं निकला था।
मिल गये मैकदेकी राहोंमें॥

तवस्सुम[2] था इस रंगसे उनके लवपर।
मैं समझा कोई जाम छलका रहे हैं॥

वहार एकदमकी है खुलता नहीं कुछ।
कि गुल खिल रहे हैं कि मुर्झा रहे हैं॥

सव बाँध चुके कवके सरे-शाख़ नशेमन।
हम हैं कि गुलिस्ताँकी हवा देख रहे हैं॥*

न इशारा, न कनाया, न तवस्सुम, न कलाम।
पास वैठे हैं मगर दूर नज़र आते हैं॥

उस गिरफ़्तारकी पूछो न तड़प, जिसके लिए।
दर कफसका हो खुला ताकते-परवाज़[3] न हो॥

क्या! कहूँ मर-मरके जीनेका मज़ा।
ऐ ख़िज्र! यह ज़िन्दगानी और है॥

---

[1]फँसा गई; [2]मुस्कान; [3]उडनेकी शक्ति।

*असर लखनवीने इसी रंगमें क्या खूब कहा है, मानो अकर्मण्यों और वहमियोंको चाबुक मारा है।

यह सोचते ही रहे और वहार ख़त्म हुई।
कहाँ चमनमें नशेमन वने, कहाँ न वने॥

हवा गुलिस्ताँकी खाके दिलको क़रार कुछ आ चला था लेकिन––
किसीकी फिर याद ताज़ा करदी गुलोंका मुँह चूमकर सबाने[१] ॥

ग़ज़ब होता तेरी सूरत जो बेपर्दा कहीं होती।
कि तुझपर जो निगह पड़ती निगाहे-वापिसीं होती ॥

सुजूदे-आस्ताने-यारसे[२] सैरी[३] नहीं होती।
किये जाते जिबींसाई[४] अगर बाक़ी जिबीं[५] होती ॥

नज़र पड़ती है तुमपर सबकी मुझको रश्क[६] आता है।
चलो ख़िलवतमें[७] चल बैठें निकलकर बज़्मे-महशरसे ॥

हवाए-ख़ुल्द[८] कहाँ मैकदा[९] कहाँ साक़ी !
यह आहेसर्द किसी मस्तने भरी होगी ॥

बिछड़कर कारवाँसे[१०] मैं कभी तनहा नहीं रहता।
रफ़ीक़े-राह[११] बन जाती है गर्दे-कारवाँ[१२] मेरी ॥

तुम याँसे गये क्या, मेरी दुनिया ही बदल दी।
वोह लुत्फ नहीं, वोह सहर-ओ-शाम नहीं है ॥

किसीमें ताब कहाँ थी कि देखता उनको।
उठी नक़ाब तो हैरत नक़ाब होके रही ॥

तुमने आकर मिज़ाज पूछ लिया।
अब तबीअ़त कहाँ सुलझती है ॥

---

[१]हवाने; [२]यारके द्वारपर मस्तक झुकानेसे; [३]मन नहीं भरता; [४]माथा रगड़ते-रहते; [५]माथा; [६]ईर्ष्या, [७]एकान्तमें; [८]जन्नतकी हवा; [९]मदिरालय; [१०]यात्रीदलसे; [११]मार्ग-मित्र; [१२]यात्रीदलकी धूल ।

बहारें लुटा दीं, जवानी लुटा दी।
तुम्हारे लिए जिन्दगानी लुटादी॥

अजब हौसला हमने गुंचेका[1] देखा।
तबस्सुमपै[2] सारी जवानी लुटा दी॥

दे रहे हैं मैं वोह अपने हाथसे।
अब यह शै इंकारके काबिल नहीं॥

जमाना है कि गुजरा जा रहा है।
यह दरिया है कि बहता जा रहा है॥

जमानेपै हँसे कोई कि रोये।
जो होना है, वोह होता जा रहा है॥

रवाँ है उम्र और इन्सान ग़ाफिल।
मुसाफिर है कि सोता जा रहा है॥

हाय फिर छेड दिया जिक्रे-गुलिस्ताँ तूने।
खुश्क आँसू न हुए थे मेरे सैयाद अभी॥

बिजलीकी ताक-झाँकसे तंग आ गई है जान।
ऐसा न हो कि फूंक दूं खुद आशियाँको मैं॥

ऊपर हमने आपके पसन्दीदा अशआरमें-से चन्द शेअर उद्धृत किये हैं। अब हम अपनी डायरीसे चुनकर चन्द अशआर और दे रहे हैं—

किधर चले मेरे अश्के-रवाँ[3] नहीं मअ़लूम।
भटक रहा है कहाँ कारवाँ, नहीं मअ़लूम॥

---

[1] कलीका; [2] मुस्कराहट, [3] बहते हुए आँसू।

उठा दिया तो है लंगर हवाके झोंकोमें।
किधर सफीना[1] है, साहिल[2] कहाँ, नहीं मअ़लूम॥
तरानाकश भी हज़ारो हैं, नालाकश भी हज़ार।
मुझीसे क्यों है चमन बदगुमाँ, नहीं मअ़लूम[8]॥

वहार फूलोंकी नापायदार[3] कितनी है।
अभी तो आई, अभी उड़ गई, हँसीकी तरह॥

नाज़ुक गुलोंपै रगे-मसर्रत[4] भी वार[5] है।
आई हँसी कि चाक गरेवान हो गये॥

कहाँ फिर लज़्ज़तें यह जुस्तुजू-ए-नामुकम्मलकी[6]।
ग़नीमत है निशाने-जादए-मंज़िल[7] नहीं मिलता॥

क्या पूछता है तू मेरी बरबादियोंका हाल।
थोड़ी-सी ख़ाक लेके हवामें उड़ाके देख॥

लगी थी उनके क़दमोंसे क़यामत।
मैं समझा साथ साया जा रहा हूँ॥

निगाहे-लुत्फ नहीं उनकी ख़ैर है वर्ना।
कुछ और हाल हमारा ख़राब हो जाता॥

अब क्या करूँ तलाश किसी कारवाँको मैं।
गुम हो गया हूँ पाके तेरे आस्ताँको मैं॥
तेरे ख़यालमें आये जो उनसे कह देना।
मेरी समझमें तो कुछ नामावर! नहीं आता॥

---

[1]नौका; [2]दरियाका किनारा; [3]अस्थायी, क्षणिक; [4]खुशी; [5]बोझ; [6]असम्पूर्ण खोजकी; [7]निर्दिष्ट स्थानकी राह का चिह्न।
[8]यह स्वर्गस्थ होनेसे पूर्व ग़ज़ल कही थी, यही उनका अंतिम कलाम है।

ख़ुदा मअ़लूम क़ासिद क्या सुनाये, दिल धड़कता है।
यह कहता है कि पैग़ामे-जवानी लेके आया हूँ॥

मरनेपै भी न बन्द हुई चश्मे-मुन्तज़िर।
अब इन्तज़ारकी कोई मुद्दत नहीं रही॥

तुम देखलो ख़ुद हाथ मेरे सीनेपै रखकर।
हाले-दिले-बेताब बयाँ हो नहीं सकता॥

जुदा होनेपै दोनोंका यही मअ़मूल ठहरा है।
वोह हमको भूल जाते है, हम उनको याद करते हैं॥

नहीं मअ़लूम किनको जुस्तुजू थी मैं न कुछ समझा।
तुम्हारी याद आई रातको और बार-बार आई॥

साथ चलने दो मुझे भी रहरवाने-कूए-दोस्त।
कारवाँमें क्या ग़ुबारे-कारवाँ होता नहीं?

हसरतोंका सिल्सिला कब ख़त्म होता है 'जलील'!
खिल गये जब गुल तो पैदा और कलियाँ हो गई॥

शाम होते ही कभी जान-सी आ जाती थी।
अब वही शब है कि मर-मरके जिये जाते हैं॥

यारतक पहुँचा दिया बेताबिये-दिलने मेरे।
इक तड़पमें मंज़िलोंका फ़ासला जाता रहा॥

हर वक़्त हैं मौतकी दुआ़एँ।
अल्लाह-रे लुत्फ़ ज़िंदगीका॥

माहो-अंजुमपर नज़र पड़ने लगी।
आपको देखे ज़माना हो गया॥

तुम जो याद आये तो सारी काएनात।
एक भूली-सी कहानी हो गई॥

वअ़देका नाम लबपै न आये पयाम्बर!
कहना फ़क़त यही कि बहुत दिन गुज़र गये॥

२८ अप्रैल १९५२ ई०

हाफिज़ मुहम्मदअली 'हफ़ीज़' जौनपुरके रहनेवाले थे। आपको स्कूली जीवनमे ही शाइरीका चस्का लग गया था। १८८३ ई० मे आप व्यवसायके लिए पटना चले गये, उन दिनों वहाँ मुशाइरोंकी धूम रहती थी। आपकी भी प्रवृत्ति जाग उठी और मुशाइरोंमे शिरकत फर्माने लगे। १८८६ ई० मे आप वाकाएदा 'वसीम' अज़ीमाबादीके शिष्य हो गये और कुछ अर्सेके बाद 'वसीम' साहबकी अनुमतिसे अमीरमीनाईकी शिष्य मण्डलीमे सम्मिलित हो गये। मृत्यु सन् मअलूम न हो सका। १९११ ई० तक आप जीवित थे।

कलीम गशमें घड़ी-दो-घड़ी रहे होंगे।
यहाँ तो जाके न फिर होश उम्र भर आया॥
किया है दस्ते-तसल्लीने[1] काम मरहमका।
धरा जो हाथ, मिटा दर्द, ज़ख्म भर आया॥

काम छोटोंसे निकलता है बड़ा।
यह सबक भी आँखके तिलसे मिला॥

इसियाँके[2] दाग़ मिट गये दिल पाक[3] हो गया।
टपके जो अश्क नामए-अअ़्माल[4] धो गया॥

---

[1]सहानुभूतिपूर्ण करकमलोंने; [2]पापोंके, [3]पवित्र; [4]कर्म-लेखा।

दुश्मन न था शबाब[1] तो नादान दोस्त था।
बदनाम कर गया मुझे, बदनाम हो गया॥
मसरूफ़[2] कब हुए हैं वोह फ़िक्रे-इलाजमें।
जब दाग़े-दिल कलेजेका नासूर हो गया॥

दमे-रुख़सत तो मिल लेते गले आप।
तड़पता छोड़कर मुझको चले आप॥

दिल साफ न हो तो क्या सफाई।
इस मेलसे ख़ूब थी लड़ाई॥
है किसीके ख़यालसे बातें।
यूँ पसन्द आ गई है तनहाई॥

आदमीसे जो मोहब्बतमें न हो थोड़ा है।
इतनी-सी जानमें हिम्मत है यह परवानेकी॥
शमअ़ सर धुनती है, रोती है खड़ी बालीपर।
ज़िंदगीसे कहीं मौत अच्छी है परवानेकी॥

जो आबरू रही तरदामनोंकी[3] हश्रमें शेख़!
तो पानी-पानी तेरी पाकदामनी होगी॥

अदा परियोंकी, जोबन हूरका, शोख़ी ग़िज़ालोंकी[4]।
ग़रज़ माँगेकी हर इक चीज़ है इन हुस्नवालोंकी॥

मज़ा है जोशे-जवानीमें पारसाईका।
वोह नाख़ुदा है जो किश्ती बचाये तूफ़ाँसे॥

—ख़ुमख़ानए जावेद भाग २

---

[1]यौवन; [2]दत्तचित्त, व्यस्त, [3]मदिरासे भीगे वस्त्रवालोंकी; [4]हरिनोंकी।

'हफ़ीज़' जौनपुरी भी अपने कई उस्ताद-भाइयोंकी तरह 'दाग़' की रीस करनेवाले थे। उन्होंने लखनवी रंगको तर्क करके, मीर, आतिश, जलाल, दाग़-जैसे ख्यातिप्राप्त उस्तादोंके रंगका अनुसरण किया है और किसी हदतक सफल भी हुए हैं, चुनांचे फ़र्माते हैं—

शेअ़र हर रंगमें कहता है तेरा क़ाम 'हफ़ीज़'।
आज हम मान गये, मान गये, मान गये॥

छोड़िए तर्ज़े-कुहन[1] अब ऐ 'हफ़ीज़'!
शाइरीका है मज़ा ईजादमें[2]॥

'मीर'के अन्दाज़पर कितने ग़ज़ल लिक्खी 'हफ़ीज़'!
मुझको ज़ेबा[3] है अगर इस बातका दअ़्वा करूँ॥

आपके यहाँ आतिशकी फ़क़ीराना शानकी झलक भी मिलती है—

अ़जब नहीं है कि हों छोटी ताअ़तें[4] मक़बूल[5]।
कनीज़ें[6] होती हैं शाहोंको[7] ख़ुर्दसाल[8] पसन्द॥
किसीमें है यह सिफ़त? जाऊँ किसके दरपर मैं।
करीम! तेरे सिवा है कोई सवाल पसन्द॥
'हफ़ीज़'! जाहो-हशमसे[9] किसीके क्या मतलब?
फ़क़ीरे-मस्त हूँ, अपना है मुझको माल पसन्द॥

ऐ क़नाअ़त[10] तेरी मुट्ठीमें है उनकी आबरू।
शर्मसे बहरे-दुआ़[11] जो हाथ उठ सकते नहीं॥

---

[1]पुराना ढंग; [2]आविष्कारमें; [3]उचित, शोभा देता है; [4]इबादतें, उपासनायें; [5]स्वीकृत, पसन्द, [6]बाँदियाँ; [7]बादशाहोंको; [8]छोटी आयुकी; [9]प्रतिष्ठा, रोब़व, जाहो-जलालसे; [10]सब्र, [11]प्रार्थनाके लिए।

जिहादे-नफ़सकी[1] सर[2] हो मुहिम[3] तो क्या कहना?
जहे नसीब मिले मर्तबा जो गाजीका॥
रहके दुनियामें कोई काम न उकबाका[4] किया।
यूँ सफ़रमें है कि कुछ जादे-सफर[5] पास नहीं॥

देखिये तो हर इक जगह है वोह।
ढूँडिये तो कहीं नहीं मिलता॥

इबादत हुई, कुछ न ताअ़त हुई।
फकत अब करमका[6] सहारा रहा॥

अनल्हक़ जो मंसूरने कह दिया।
उधर ही का तो यह इशारा रहा॥

दुनियाका कारख़ाना है इक तिलस्मे-इबरत[7]।
दौलत जहाँ गडी थी मुर्दे वहाँ गड़े हैं॥

कहीं-कहीं जलालका रंग झलकता है—

कोसकर क्या जता गये एहसाँ।
यह दुआ सबको दी नहीं जाती॥
काश इक दिन वोह भूलकर आता।
याद जिसकी कभी नहीं जाती॥

और 'दाग़' की रवानी, तीखापन, शोख़ी और शरारत तो उनके कलामकी खुसूसियत है—

"मेरा दिल आ गया है इक हसींपर।"
यह सुनना था कि वोह बोले "हमींपर"॥

---

[1]इंद्रिय-दमनका संघर्ष; [2]विजय, [3]लडाई; [4]परलोकका; [5]मार्ग-व्यय; [6]ईश्वरीय-दयाका; [7]नसीहत पानेकी जगह भय की माया।

यह फिकरे, यह चालें, यह बातें, यह घातें।
तुझे ओ दग़ाबाज़! हम जानते हैं॥

मिली है हिम्मतेआली[1] वोह बादानोशोंको[2]।
मिले बिहिश्त तो दे दें यह मंफरोशोंको[3]॥

या वोह बिगड़े हुए तेवर मेरे पहचान गये।
या कुछ बात ही ऐसी थी कि झट मान गये॥

कभी था वस्लका इकरार हमसे।
करें तो आप आँखें चार हमसे॥

तेरा रास्ता शामसे तकते-तकते।
मेरी आस टूटी सहर[4] होते-होते॥

लगाओ दिल किसीसे हज़रते नासेह तो खुल जाये।
मुहब्बत इसको कहते हैं, मुहब्बत ऐसी होती है॥

यह आज आते ही जानेकी तुमने खूब कही।
हँसे न थे कि रुलानेकी तुमने खूब कही॥

दिलके आनेकी यह लिख रखिए शिनाख्त।
पहले चेहरेकी बहाली देखिए॥

अभीसे सोच-समझ लो, नहीं तो हश्रके दिन।
मेरे सवालका तुममें जवाब हो कि न हो॥

तुम अपना शबाब, अपनी सूरतको देखो।
मेरी आरज़ू, मुद्दआ कुछ न पूछो॥

---

[1]उदारता, [2]मद्यपोंको, [3]मदिरा-विक्रेताओंको, [4]सुबह।

ख़ैर मुझमें वफ़ा नहीं, न सही।
यह तो फ़र्माइए कि है किसमें?

ज़बाने-ग़ैरसे की गुफ़्तगू हमीं चूके।
वोह कह उठे—"यह शरीफ़ोंकी बोल-चाल नहीं॥"

शेख़ बरसातमें जाकर लबे-जू[1] पीते हैं।
क़िब्ला-रू[2] बैठते हैं, करके वज़ू[3] पीते हैं॥

मेरे शबाबकी[4] तौबापै जा न ऐ वाइज़!
नशेकी बात नहीं एअ़तबारके क़ाबिल॥

अभी जीना पड़ा कुछ दिन हमें और।
टला फिर वअ़दए-बातिल[5]-किसीका॥

मीरका रंग—

क़फ़स क्या नशेमनसे कुछ दूर था।
मगर रह गये बालो-पर देखकर॥

बैठे-बैठे रास्ता क़ासिदका दिनभर देखना।
तारे गिनना शामसे या जानिबे-दर देखना॥

जिस रोज़ रुका नामा-ओ-पैग़ाम तुम्हारा।
मर जायगा ले-लेके कोई नाम तुम्हारा॥

हम कबके मर चुके थे जुदाईमें ऐ अजल!
जीना पड़ा कुछ और तेरे इन्तज़ारमें॥

बावजूद इसके उस्तादकी बोली भी बोलते रहे हैं—

---

[1]नहर किनारे, [2]कअ़बकी तरफ़ मुंह करके; [3]नमाज पढ़नेके लिए मुंह हाथ धोना; [4]जवानीकी; [5]झूठा वअ़दा।

अल्लाहरे उनके फूलों-से गालोंकी ताज़गी।
धूप आईनेकी देखके कुम्हलाये जाते हैं॥

शोख़-चश्मोंको[1] वही ख़ाक हुए पर भी है ज़िद।
घास आहू[2] मेरी तुरबतकी[3] चरे जाते हैं॥

फ़स्ले-गुल आते ही पर लग गये वहशतको मेरी।
तख़्तपर ले उड़ीं परियाँ तेरे दीवानेको॥

कहाँ किसके मातममें यह रात गुज़री।
कलाईके गजरे जो मुरझा रहे हैं॥

चन्द तुलनात्मक—

आतिश— सफ़र है शर्त मुसाफ़िर-नवाज़ बहुतेरे।
हज़ार-हा-शजर सायादार राहमें हैं॥

हफ़ीज़— साया बहुत मिलेगा दरख़्तोंका राहमें।
घरसे निकलके धूपमें कुछ दूर जलके चल॥

जलाल— पीनेसे काम रखते हैं, रिन्दे-सियाह मस्त।
कम्बल ही तान लेंगे जो अब्रे-करम नहीं॥

हफ़ीज़— फ़कीरेमस्त किसी फ़स्लके नहीं पाबन्द।
पिएँगे तानके कम्बल सहाब हो कि न हो॥

दाग़— बात करनी तक न आती थी तुम्हें।
यह हमारे सामनेकी बात है॥

---

[1]चचलनेत्रवालोंको, [2]हिरन, [3]क़ब्रकी।

हफीज़— मेरे सामने आज बातें बनाना।
ज़बाँको थी लुकनत यह है बात कलकी॥

दूल्हा व महबूब

दाग— अपनी तसवीरपै नाज़ाँ हो तुम्हारा क्या है?
आँख नरगिसकी, देहन गुंचेका, हैरत मेरी॥

हफीज— अदा परियोंकी, सूरत हूरकी, आँखें गिज़ालोंकी।
गरज़ माँगेकी हर इक चीज़ है इन हुस्नवालोंकी॥

—शेरउलहिन्द पहला भाग

१२ अप्रैल १९५३

पण्डित रतननाथ दर 'सरशार' काश्मीरी ब्राह्मण थे, और १८४० ई० के लगभग लखनऊमे पैदा हुए थे। अभी आप पूरे चार वर्षके भी न हो पाये थे कि आपके पिता प० बैजनाथ दरका साया आपके सरसे उठ गया। रिवाजके अनुसार अरबी-फारसीकी तअलीम पाई। बादमे अंग्रेजी शिक्षा भी प्राप्त की। प्रथम खेरी स्कूलमें शिक्षक नियत हुए।

उन्ही दिनो लखनऊसे 'अवधपंच' हास्यरसका पत्र प्रकाशित होने लगा था। 'सरशार' बचपनसे ही शोख और चंचल थे। अपनी तबिअतके अनुकूल पत्रका प्रकाशन देख आपका दिल भी लिखनेको मचल पडा। फिर क्या था, एक-से-एक निराले मजमून कलमसे निकलने लगे। चन्द माहमे ही आपकी ख्याति इतनी फैली कि मुशी नवलकिशोरने १८७८ ई० में हास्यरसका 'अवध' पत्र प्रकाशित किया तो उनके सपादकपद पर आपको ही प्रतिष्ठित किया गया।

प्रतिद्वन्द्वी पत्रके प्रकाशित होनेपर 'अवधपंच'का धैर्य छूट गया और उसने 'अवध' पर छींटा-कशी शुरू कर दी। सरशार कब दबनेवाले थे वोह दन्दाँ-शिकन जवाबी हमले किये कि कुछ न पूछिए। पढनेवाले लहालोट हो गये।

उन्ही दिनो आपने अपनी अमर कृति 'फसानए-आजाद' धारावाही

रूपसे 'अवध' मे प्रारभ कर दी। 'फसानए-आजाद' से पूर्व उर्दूमें परियों, जिनो आदिकी कहानियाँ प्रचलित थीं। स्वप्नमे भी ऐसे कथा-साहित्यका किसीको आभास न था। एक दो अक निकलते ही धूम मच गई और समस्त उर्दू-ससार वाह-वाह कर उठा। लोगोकी उत्सुकता यहाँतक वढी कि यह क्रम कई वर्पतक 'अवध' मे 'सरशार' को चलाना पडा। फिर भी लोगोकी यही इच्छा रही कि 'फ़सानए-आज़ाद' का सिलसिला वरावर जारी रहे। वादमे यह वृहदाकार उपन्यास वडे साइजके ५ भागोमे पुस्तकाकार भी प्रकाशित किया गया।

'फसानए-आजाद' उर्दू-गद्यकी अमूल्य निधि है। 'सरशार'से पहले इस तरहकी रगीन गुलावी उर्दू लिखना कव किसीको नसीव हुआ? तत्कालीन रीति-रिवाज़, वेप-भूपा, वोल-चाल, रहन-सहन, खान-पान, हुस्नो-इश्क, वस्लो-हिज्रका ऐसा दिलकश और हू-ब-हू चित्रण किया कि मिसाल नही मिलती। उस समयके विलासी, अकर्मण्य और अक्लसे खारिज नवावो-रईसोकी पतनोन्मुख दशाके, मुसाहवोकी खुशामद-परस्तीके, वेग-मातके तौर-तरीकोके, आवारा और शोहदोके लुचपनके, विगडे दिलोकी तीतर-वटेर-पतगवाजीके मुँह वोलते ऐसे रेखाचित्र खीचे है कि दाद देनेको उपयुक्त शब्द नही मिल पा रहे है।

लफ्जोकी तराश, मुहाविरोकी सफाई, उदाहरणो-उपमाओंकी छटा, थिरकते शब्द, फड़कती हुई भापा, वयानकी शोखी, अछूते मजामीन, हाजिर जवावीके कमाल, सव पढनेसे ही सवध रखते है।

गद्यके साथ-साथ आपको शाइरीका भी शौक था, शाइरीमें आप अमीर मीनाईके शिष्य थे, किन्तु जो कमाल आपको गद्य लिखनेमे था, वह शाइरीमे हासिल नही हुआ। कभी-कभी मनवहलावको शाइरी भी कर लिया करते थे। आप गद्य-लेखकके नाते ही प्रसिद्ध भी है। यहाँ अमीर मीनाईके शिष्यों-के प्रसगमें आपका उल्लेख आवश्यक हुआ, इसीसे वतौर नमूना चन्द अशआर 'खुमखानए-जावेद'से दिये जा रहे है।

जीवनके अंतिम दिनोंमें आप लखनऊ छोड़कर हैदराबाद दकन चले गये थे। जहाँपर महाराजा किशनप्रसाद 'शाद' प्रधान मन्त्री हैदराबादने आपकी खूब आव-भगत की और सम्मानपूर्वक अपने यहाँ रखा। लेकिन सुरापानकी अधिकताके कारण आप अस्वस्थ होते चले गये और ५५-५६ वर्षकी आयुमें ही १६०३ ई० में स्वर्गवासी हो गये। आपके निधनपर किसीने यह तारीख़ कही थी—

'सरशार' फसीह-ओ-नुक्तापरवर न रहा।
सरमाय-ए-नाज़ अहले जौहर न रहा॥
एअजाज़े-कलमके जिसके सब क़ाएल थे।
वोह नस्रका उर्दूकी पयम्बर न रहा॥

चन्द शेअ़्र—

सियहबख़्त[1]-सियह-रोज़गार हम भी हैं।
जवाबे-ज़ुल्फ़े-परेशाने-यार[2] हम भी हैं॥

क्या कहर[3] है कि मुफ़्तमें बुलबुल तो क़ैद हो।
गुलचीं जो फूल तोड़े, उसे कुछ सज़ा न हो॥
उस बुलबुले-असीरकी[4] हालतपै रोइए।
जो फ़स्ले-गुलमें[5] बन्दे-कफ़ससे[6] रिहा न हो॥

बुतोंके दरपै सबकी जिबिहसाई[7] होती जाती है।
इन्हींके कब्ज़ेमें अब तो ख़ुदाई होती जाती है॥

---

[1]अभागे (काले कुदिनवाले), [2]प्रेयसीकी ज़ुल्फ़ें स्याह हैं तो क्या हुआ, हम भी तो स्याह बख़्त और स्याह रोज़गार हैं, उनसे कम किस बातमें हैं? [3]ज़ुल्म, अन्धेर, [4]क़ैदी बुल्बुलकी, [5]बहारके दिनोंमें, [6]पिंजरेमें, [7]माथा घिसना।

सुना है आज गर दरवाँने तो कल वोह भी सुन लेंगे।
मेरी बातोंकी अब उनतक रिसाई[1] होती जाती है॥
शिकायतपर कुदूरतकी[2] दिखाते हैं वोह आईना।
इशारा है कि अब दिलमें सफाई होती जाती है॥

दिल लोट गया सुनते ही गुफ़्तार[3] किसीकी।
सुनता ही नहीं अब वोह मेरा यार किसीकी॥

ऐ शेख़! तुझे ख़ुदाकी सौगन्द।
रिन्दोंकी गर्दमें बाँधले बन्द॥
ले मुँहसे लगाले जामे-बादा।
इक बून्द ही पी, न पी ज़ियादा॥

१६ अप्रैल १९५३

---

[1]पहुँच, [2]द्वेष-भावकी, [3]बातचीत।

पण्डित जगमोहननाथ रैना साहव 'शौक' काश्मीरी ब्राह्मण हैं। आप इन्दौरमें जुलाई १८६३ में उत्पन्न हुए और १८९० ई० से १९२० ई० तक उत्तरी भारतमें डिप्टी कलेक्टर रहे। १९२० के वाद पेन्शन ली और आजकल अपने सुपुत्र चन्द्रमोहन रैना तहसीलदारके साथ शाहजहाँपुरमें रहते हैं।

आपको शाइरीका शौक १८८४ ई० मे हुआ, और तत्कालीन लखनवी रगके ख्याति प्राप्त उस्ताद 'अमीर मीनाई' से मशविरए-सुखन लेते रहे। लेकिन वह कलाम आपका नप्ट हो गया। १९०१ से १९१५ तक आप कार्याधिक्यके कारण इस ओर ध्यान ही न दे सके। १९१६ से इस ओर पुन. प्रवृत्ति हुई। आपका 'पयामे-शौक' गजलोका सकलन हमारे समक्ष है। इसमे १९१६ से १९४० तक कही गई २६९ ग़ज़लें दी गई है।

आपका कलाम लखनवी रगके कघी, चोटी, अँगिया-मिस्सीसे अछूता है फिर भी अमीर मीनाईके स्कूलकी छाप यत्र-तत्र नजर आती है। आपकी भापा सरल और प्रवाहयुक्त है। इश्किया कलामके साथ तसव्वुफकी चाश्नी भी खूब है। डिप्टी कलेक्टरीकी पेन्शन लेते हुए और तहसीलदारके पिता होते हुए भी १९३० के असहयोग आन्दोलनके समय आपका देश-भक्त हृदय यह कलाम कहनेसे वाज़ न आया—

जाँगुज़ीं[1] कबसे है दिलमें जज्बए-हुब्बेवतन[2]।
दोस्तो रोज़े-अज़लसे[3] मैं वफादारोंमें हूँ॥
वादए-हुब्बेवतन[4] मुझको पिलादे साक़िया।
बिन पिये मुद्दत हुई मैं तेरे मैख्वारोंमें हूँ॥

यद्यपि आपका १६१६ से १६४० तक कहा हुआ यह कलाम हमें शाइरीके नये दौरमे देना चाहिये था, किन्तु शौक साहब अमीर मीनाईके शिष्य है और कलाम भी उसी युगका है, अत. इसी खण्डमे देना उपयुक्त समझा गया।

पड़े है मस्त मतवाले न कहते हैं न सुनते हैं।
नई बस्ती नया आ़लम है यह शहरे-ख़मोशाँका[5]॥

ख़ुदाईका है दअ़वा इन बुतोंको देखिये क्या हो?
इधर भी एक सिज्दा आओ बहरे-इम्तिहाँ[6] कर लें॥

कुजा बुतख़ाना[7]-ओ-कअ़बा, कुजा ख़ुम ख़ाना[8]-ओ-साक़ी?
कहाँसे 'शौक' शौक़े-दीद लाया है कहाँ मुझको?
रफ़्ता-रफ़्ता ता-दरेजानाँ[9] बैठते-उठते यूँ पहुँचे।
ठोकरें खाते गिरते-पड़ते सुबह-से-ता-शाम चले॥

ख़ूँ-शुदा दिलको जलाते हैं, जलानेवाले।
आग पानीमें लगाते हैं, लगानेवाले॥

किस क़दर दिलचस्प थी रूदादे[10]-शौक।
सारे आ़लममें कहावत हो गई॥

---

[1]प्राणोको रुचिकर, हृदयमें छिपी हुई, [2]देश-प्रेमकी भावना; [3]सृष्टिके प्रारम्भसे; [4]देश-प्रेमकी मदिरा; [5]कब्रिस्तानका; [6]परीक्षा-स्वरूप; [7]कहाँ मन्दिर-कअ़बा; [8]मदिरालय, [9]प्रेयसीके कूचेका; [10]कहानी।

दैरको[1] आओ चलें इक ठिकाना है वहीं।
मिल ही जायेगा वहीं कोई तो रहबर[2] अपना॥

शोअलए-शमअ़ने[3] उठ-उठके जलाया आखिर।
'शौक' यह हश्र हुआ बज़्ममें परवानेका॥

बुतकदा छोड़ते तो छोड़ दिया।
अब ठिकाना नज़र नहीं आता॥

हम ढूंडने गये तो सनमख़ाना मिल गया।
तुझको तलाशसे भी न वाइज़ ! ख़ुदा मिला॥

कैसा बुतख़ाना, कहांका दैर, कैसी ख़ानक़ाह[4]।
जिस जगह सिज्दा किया हमने वोह कअ़बा हो गया॥

ज़रा जी भरके उसको देख लेता मैं दमे-आख़िर।
नज़र आता क़फ़ससे काश मुझको आशियाँ अपना॥

बनाया सिज्दागाहे-हुस्न हमने दैरो-कअ़बेको।
वही जल्वा है दोनो जा, इधर आ देखनेवाले॥

किसीका जल्वागहेनाज़[5] जब नज़र आया।
सरे-नियाज़[6] वहींपर झुका दिया हमने॥

रह-रहके पूछते हैं वही बाग़बांसे हम।
ले जायें चार तिनके कहाँ आशियांसे हम॥

जाते कअ़बेमें बुतपरस्तीको।
यह भी इक फ़र्ज़ था, अदा करते॥

---

[1]मन्दिरको; [2]पथप्रदर्शक; [3]दीपककी लौ ने; [4]दरगाह; [5]सौन्दर्य्य स्थल; [6]नम्रमस्तक।

बुतकदा छोड़नेवाले तो न थे।
ख़ैर मिलती है तो जन्नत ही सही॥

न पूछो हम-सफ़ीराने-चमन[1]! मैं कौन हूँ क्या हूँ।
ग़रज़ जो कुछ हूँ इक साज़े-शिकस्ताकी[2] सदा[3] मैं हूँ॥

सब पूछते हैं, शहरे-ख़मोशाँमें[4] कौन हो?
हैराँ हैं क्या बतायें मुसाफिर कहाँके हैं॥

मुल्के-अ़दमको[5] काफिले जाते हैं रात दिन।
ज़ाहिर मगर किसीके निशाने-क़दम नहीं॥

रास्ता तो उधरका पूछ लेते।
ऐ मुल्के-अ़दमके जानेवालो॥

इसीको इन्तहाए-इश्क़[6] क्या ऐ 'शौक़'! कहते हैं।
कि मुझको खुद नहीं मअ़लूम क्या है आर्ज़ू[7] मेरी॥

अपनी ही ख़बर नहीं है हमको।
बेकार किसीकी जुस्तुजू[8] है॥

इलाजे-दर्दे-जिगर चारासाज़[9] रहने दे।
मज़ा इसीमें है सोज़ो-गुदाज़[10] रहने दे॥

पता किससे पूछें कि मंज़िल कहाँ है।
कहाँतक मुसाफ़िर भटकता रहेगा॥

कुछ बताते ही नहीं शहरे-ख़मोशाँवाले।
क्यों पसन्द उनको यह उजड़ा अ़दम-आबाद आया॥

अब उसकी जुस्तुजू क्या है न जाने वोह कहाँ पहुँचा?
निशाने-कारवाँ[11] मंज़िल-ब-मंज़िल देखनेवाले॥

---

[1]चमनके साथियो; [2]टूटे हुए वाद्यकी; [3]आवाज़; [4]कब्रिस्तानमें; [5]परलोकको; [6]प्रेमकी अन्तिम सीमा; [7]इच्छा; [8]खोज, तलाश; [9]हकीम; [10]दिलमे व्यथा; [11]यात्री दलका पता।

आँखों-आँखोंमें वह क्या कुछ कह गये।
लबपै आते ही गिला जाता रहा॥

इक 'नहीं' ने बात सारी काट दी।
लुत्फ़े-अर्ज़े-मुद्दआ[1] जाता रहा॥

जामे-दिल[2] बादए-उल्फ़तसे[3] भरा रहता है।
वाह क्या ज़र्फ़[4] है टूटे हुए पैमानेका॥

नातवानी[5] तुझे अब कोई कहाँतक रोये।
ज़ोअ़फसे[6] नालए-बेताब[7] भी लरज़ाँ[8] निकला॥

अज़लसे पहले गर हुस्ने-अज़ल मिलता तो मैं कहता।
ज़रा-सी वहशते-दिल और दीवानेमें रख देना॥

दिलसे पूछो क्या हुआ था, और क्यों खामोश था।
आँख महवेदीद[9] थी इतना मुझे भी होश था॥

दिखाके जलवए-बातिलकी इक झलक ऐ हुस्न!
खुदाके बन्देको नाहक गुनाहगार किया॥

न जाने क्या समझकर मैं दरे-मस्जिदतक आया था।
यह किस धोकेमें मैंने भी जिबीं आकर यहाँ रख दी॥

हर शैमें तेरा नक्शा हर गुलमें तेरा जलवा।
इन आँखोंके खुलते ही क्या-क्या नज़र आता है॥

रहा जब मुद्दतों दैरो-हरममें।
समझमें आई बहकाया गया हूँ॥

---

[1]अभिलाषा कहनेका आनन्द; [2]हृदय-पात्र; [3]प्रेम मदिरासे; [4]हौसला; [5]निर्बलता; [6]कमज़ोरीसे; [7]तड़पती आहें; [8]काँपती; [9]देखनेमें लीन।

आये थे रोते हुए हम आलमे-ईजादमें[1]।
वाकिफे-राजे-निहां[2] थे सिर्फ गोयाई[3] न थी ॥

नसीमे-सुबहको[4] शिकवा[5] है मेरे नालोंसे।
खमोश गुंचोको क्यो गुदगुदा दिया मैंने ॥

दिल अगर हो मुतमइन[6] तो फिर कोई मुश्किल नहीं।
दूर हो जाती है उलझन खुद सुलझ जानेके बअद ॥
इज्तिराबे-दिलकी[7] हालत, हमनशीं[8] मुझसे न पूछ।
इक नया अफसाना छिड़ जाता है अफसानेके बअद ॥

प्रूफ देखते-देखते विदित हुआ कि आपका स्वर्गवास हो चुका है। खेद है कि पत्र लिखनेपर भी आपकी मृत्यु-तारीख हमें आपके सुपुत्रसे मालूम न हो सकी।

महजूर (विरही)

दिनको तारे दिखा दिये तूने।
ऐ शबे-इन्तिजार[9] क्या कहना ॥

१८ जुलाई १९५२

---

[1]संसारमे; [2]वास्तविकतासे परिचित, [3]बोलनेकी शक्ति; [4]प्रातःकालीन बयार, [5]शिकायत; [6]आश्वस्त, [7]हृदयकी तड़प, बेचैनीकी; [8]साथी, पड़ोसी, [9]प्रतीक्षाकी रुचि।

सैयद अनवर हुसेन 'आर्जूके पूर्वज औरंगजेबके शासनकालमें हिरातसे भारत आये और अजमेरमें रहने लगे। १८५७के विप्लवसे पूर्व वे लखनऊ चले गये और वही स्थायी रूपसे वस गये।

१८ फरवरी १८७२ ई० में 'आर्जू' लखनऊमे उत्पन्न हुए। ५ वर्षकी आयुमे मदर्से भेजे गये। अरवी-फारसीकी आपने शिक्षा प्राप्त की।

आपके पिता मीर जाकिरहुसेन 'यास' और वडे भाई यूसुफहुसेन 'कयास' अच्छे शाइरोमे शुमार किये जाते थे। घरेलू वातावरणका प्रभाव आपपर भी पडा, और आप भी चुपके-चुपके शेअर कहने लगे। एक रोज़ अपने एक शिष्यकी गजल आपके पिता 'यास' साहवने आपके वडे भाई 'कयास'को सशोवनके लिए दी। सशोधनके समय आप भी वडे भाईके समीप वैठे हुए थे। आप नही चाहते थे कि आपके इस शौकका पता किसीको लगे। मगर आपके मुँहसे यकायक निकल गया "भाईसाहव यह शेअर इस तरह कहा जाय तो कैसा रहे?"

भाईसाहवने आश्चर्यके साथ आपकी ओर देखा और सशोवन इतना पसन्द आया कि शेअर उसी तरह वना दिया। शेष अशआर भी आपकी सम्मतिपूर्वक सशोधित किये गये। यह सशोधित गजल जव आपके पिता 'यास' साहवकी नजरोंसे गुजरी और उन्हें वास्तविक वात वतलाई गई

तो वे उसी रोज़ आपको 'जलाल'[1] के पास ले गये, और उन्हींके चरणोमें छोड़ आये। आर्ज़ू तब १३ वर्षके थे।

उन दिनो शेअरो-सुखनके चर्चे आम थे। मुहल्ले-मुहल्ले और गली-कूचोमे मासिक मुशाइरे होते रहते थे। नवीन अभ्यासियोंके लिए तो यह शिक्षण-शिविरका काम देते थे। सबसे पहले एक मुशाइरेमें जो गज़ल 'आर्ज़ू' ने पढ़ी उसके दो शेअ़र ये हैं—

हमारा ज़िक्र जो ज़ालिमकी अंजुमनमें[2] नहीं।
जभी तो दर्दका पहलू किसी सुखनमें[3] नहीं॥
शहीदे-नाज़को[4] महशरमें[5] दे गवाही कौन?
कोई लहूका भी धब्बा मेरे क़फनमें नहीं॥

उन दिनो उत्साह बढानेवाले भी सर्वत्र मिलते थे। मुशाइरोमें तो किशोर 'आर्ज़ू'को उचित दाद मिली ही। बाहर भी लोग उन्हे प्रोत्साहन देने लगे। एक रोज़ एक साहबने यह मिसरअ़ देकर—

"उड़ गई सोनेकी चिड़िया रह गये पर हाथमें।"

फ़र्माया कि "अगर दस बरसमे भी तुम इसपर मिसरअ़ लगा दोगे तो मै तुमको शाइर मान लूंगा।" 'आर्ज़ू'ने अर्ज की—"दस बरसतक ज़िन्दा रहनेकी उम्मीद यहाँ किसे? यही नही मअलूम कि एक साँसके बअ़द दूसरी आयेगी भी या नही। मै अभी कोशिश करता हूँ, मुम्किन है कि मिसरअ़ लग जाये।"

---

[1]'जलाल' उन दिनो ख्यातिप्राप्त प्रामाणिक उस्तादोमे थे और उनका सर्वत्र तूती बोल रहा था। 'जलाल'का परिचय शेर-ओ-सुखन भाग १, पृ० ५९३-६०५ में दिया जा चुका है।

[2]महफिलमे; [3]वार्त्तालापमें; [4]प्रेयसीपर बलिदान हुए प्रेमीकी; [5]ईश्वरके न्यायालयमे।

थोडी देरमें ही दूसरा मिसरअ़ ऐसा चस्पाँ ि.या किपहला-बे-मअ़नी-सा मिसरअ़ भी चमक उठा—

दामन उस युसूफका[1] आया पुरज़े होकर हाथमें।
उड़ गई सोनेकी चिड़िया रह गये पर हाथमें॥

'आर्ज़ू'की किशोरावस्थामे ऐसी प्रतिभा देखकर विद्वानोने भविष्य-वाणी की कि 'आर्ज़ू' अपने समयके शाइरोमें श्रेष्ठ होगा। अभी ब-मुश्किल १८ वर्षके हुए थे कि उस्तादने अपने सभी शिष्योकी ग़ज़लोंके सशोधनका भार आपपर डाल दिया, और उस्तादकी मृत्यु (१९०९ ई०) के बअ़द आप ही को लोगोने उनका जाँनशीन (उत्तराधिकारी) मान लिया।

'आर्ज़ू'के तीन सकलन—१ 'फुगाने आर्ज़ू' २ 'जहाने आर्ज़ू' ३ 'सुरीली-बाँसुरी'—प्रकाशित हो चुके हैं। 'फुगाने आर्ज़ू'में उनकी प्रारम्भिक १५ वर्षकी अवस्थासे लेकर ३५ वर्षकी अवस्थातककी २६४ ग़ज़लोंका सकलन है। १९४५ मे प्रकाशित इसकी द्वितीयावृत्ति हमारे सामने है। 'जहाने आर्ज़ू'में ३५ वर्षकी अवस्थाके बाद कही हुई १८४ गज़लें हैं। १९४६ में प्रकाशित इसकी द्वितीयावृत्ति हमारे सामने है। 'सुरीली बाँसुरी' खेद है कि हमें प्राप्त न हो सकी। उसमें आपकी ऐसी सरल गज़लो और गीतोका सकलन है, जिनके निर्माणमें एक भी अरबी-फारसी शब्दका प्रयोग नही हुआ है। आपने नाटक कम्पनियोंके लिए ड्रामे भी काफी लिखे हैं। भारत-विभाजनके बाद आप पाकिस्तान चले गये थे। वहाँ १९५१ ई० को आपने समाधि पाई।

---

[1] सौन्दर्यसे ओत-प्रोत एक पैगम्बर थे।

कब दस्तेनिगर[1] ग़ैरका है जौहरे-ज़ाती[2]।
ममनून[3] नहीं पंजए-गुल[4] बर्गे-हिनाका[5]॥

दर्यूज़ागरे-हिर्स[6] न बन राहेतलबमें[7]।
दिल इश्कसे ख़ाली है तो कासा[8] है गदाका[9]॥

सदमा न सही मेरा, नादिम[10] तो हुए होंगे।
आँखोंमें न हों आँसू, माथेपै अ़रक[11] होगा॥

आके क़ासिदने[12] कहा जो, वही अक्सर निकला।
नामावर[13] समझे थे हम, वह तो पयम्बर[14] निकला॥
बाए-ग़ुरबत[15] कि हुए जिसके लिए ख़ाना-ख़राब।
सुनके आवाज़ भी घरसे न वह बाहर निकला॥

नादाँकी दोस्तीमें जीका ज़रर[16] न जाना।
इक काम कर तो बैठे, और ह़ाथ कर न जाना॥
नादानियाँ हज़ारों, दानाई इक यही है।
दुनियाको कुछ न जाना और उम्रभर न जाना॥
नादानियोंसे अपनी आफ़तमें फँस गया हूँ।
बेदादगरको[17] मैंने बेदादगर न जाना॥

दिलका जिस शख़्सके पता पाया।
उसको आफ़तमें मुब्तिला[18] पाया॥
नफ़अ अपना हो कुछ तो दो नुक़साँ।
मुझको दुनियासे खोके क्या पाया?

---

[1]आश्रित, दूसरोंका मुहताज, [2]निज-गुण, [3]आभारी, [4]फूलोंकी पखड़ी, [5]मेंहदीके पत्तोंका; [6]तृष्णाके कारण दर-दरका भिखारी; [7]अभिलाषाके मार्गमें, [8]पात्र; [9]भिक्षुकका, [10]शर्मिन्दा; [11]पसीना; [12]पत्रवाहकने, [13]पत्र ले जानेवाला, [14]ईश्वरीय-सन्देश लानेवाला; [15]हायरी मुसाफिरी; [16]नुकसान; [17]अत्याचारीको; [18]फँसा हुआ।

बेकसीमें[1] भी गुजर ही जायगी।
दिलको मैं और दिल मुझे समझा गया॥

ऐ निगहे-दिलफरेब[2]! क्या यह सितम कर दिया?
हौसले जब बढ़ चले रुख़को कम कर दिया॥

आज़ारे-जुदाईसे[3] वाकिफ न था दिल पहले।
जब तल्ख़ हुआ जीना उल्फ़तका मज़ा जाना॥

ऐ 'आर्जू'! इस बागमें फूलोंके कफससे[4]।
बेहतर हमें अपना वोह नशेमन[5] कि है ख़सका॥

ख़मोशी मेरी मअनीख़ेज़ थी ऐ 'आर्जू'! कितनी?
कि जिसने जैसा चाहा, वैसा अफसाना बना डाला॥

होके महवेदीद[6] खोये 'आर्जूने होश भी।
कोई पूछे तो यह ओ दीवाने! तूने क्या किया॥

बर्कने[7] की हर तरफ मेरे नशेमनकी तलाश।
चार तिनकोंकी बिनापर बाग़ सारा जल गया॥

कामयाबी खुदग़रज़की 'आर्जू' बेफैज़[8] है।
वोह हवा क्या जो सुरागे-कुश्तए-मंज़िल[9] हुआ॥

यह मेरी तौबा नतीजा है बुख्ल साक़ीका[10]।
ज़रा-सी पीके कोई मुंह ख़राब क्या करता?
यही थी ज़ीस्तकी[11] लज्ज़त यही थी इश्ककी शान।
शिकायते-तपिशो-इज़्तिराब[12] क्या करता॥

---

[1]असहायावस्थामें, [2]हृदयको लुभालेनेवाली निगाह, [3]विरह-रोगसे; [4]पिंजरेसे, [5]घोसला, [6]देखनेमें लीन, [7]बिजलीने, [8]व्यर्थ, बेफायदा, [9]वह पवन किस कामकी, जो मार्गके दीपकको बुझाकर रख दे, [10]साक़ीकी कंजूसीका परिणाम, [11]जीवनकी, [12]विरहज्वर, दाह और बेचैनीकी शिकायत।

मुझे मिटा तो दिया कब्ल अहदेपीरीके[1]।
सुलूक और दो रोज़ा शबाब[2] क्या करता॥

यह बहरे-इश्कका[3] तूफान और ज़रा-सा दिल।
जहाज उलट गये लाखों हुबाब[4] क्या करता॥

पड़े न होते जो ग़फ़लतके 'आर्ज़ू'! पर्दे।
ख़ुदा ही जाने यह जोशेशबाब क्या करता!

एक शौक़े-दिल इधर है, लाख अन्देशे उधर।
सोचकर कुछ ख़तमें लिखना फिर मिटाना ख़ुद-ब-ख़ुद॥

हौसले फ़िर बढ़ गये टूटा हुआ दिल जुड़ गया।
उफ़ यह ज़ालिम मुस्करा देना ख़फ़ा होनेके बअ़द॥

अपना जो बनाना है तो ओ दुश्मने-ईमाँ!
इतना भी न कर ज़ुल्म कि आजाये ख़ुदा यअ़द॥

ऐसी हसरत ही से बाज़ आना है ख़ूब।
जो मुझे मरगूब[5] उनको नापसन्द॥

ऐसी अँधेरी रातके सद्‌के हज़ार चाँद।
शर्मानेवाला जिसमें सरक आये डरके पास॥

उफरे बेदीद पढ़के सारा ख़त।
'कह दिया यह नहीं हमारा ख़त॥

हिम्मते-कोताहसे[6] दिल तंग ज़िन्दाँ[7] बन गया।
वर्ना था घरसे सिवा इस घरका हर गोशा[8] वसीअ़[9]॥

---

[1]वृद्ध होनेसे पूर्व; [2]यौवन; [3]प्रेम-नदीका; [4]बुलबुला; [5]प्रिय; [6]हिम्मतोंकी कमीके कारण; [7]तंग कारागृह, सकीर्ण हृदय; [8]कोना; [9]विशाल।

छोड़ दे दो गज़ जमीं, है दफ़्न जिसमें इक ग़रीब।
है तेरी मश्क़े-ख़िरामेनाज़को[1] दुनिया वसीअ़[2]॥
है यह सब किस्मतकी कोताही[3] वगर्ना 'आर्जू'।
बढ़के दामाने-तलवसे[4] हाथ है उसका वसीअ़॥

जादह[5]-ओ-मंज़िल[6] जहाँ दोनो हैं एक।
उस जगहसे है मेरा सहरा[7] शुरुअ़॥
वक़्त थोड़ा और यह भी तै नहीं।
किस जगहसे कीजिए किस्सा शुरुअ़॥
देखा ललचाई निगाहोंका मआल[8]।
'आर्जू', लो हो गया पर्दा शुरुअ़॥

जो मेरी सरगुज़िश्त[9] सुनते हैं।
सरको दो-दो पहर वह धुनते हैं॥
क़ैदमें माजराए-तनहाई[10]।
आप कहते है, आप सुनते हैं॥
आशियाँ कबतक और खुद कबतक।
वोह सिड़ी हैं जो तिनके चुनते हैं॥

झूठे वअ़देका भी यकीन आ जाये।
कुछ वोह इन तेवरोंसे कहते हैं॥

मुझ गमज़दाके पाससे सब रोके उठे है।
हाँ आप इक ऐसे हैं कि ख़ुश होके उठे है॥

---

[1]अठखेलियोंके अभ्यासके लिए; [2]विस्तीर्ण; [3]कमी, हीनता; [4]अभिलाषीके आँचलसे; [5-6]मार्ग और पड़ाव; [7]जंगल; [8]परिणाम; [9]आत्म-कहानी; [10]एकाकी जीवनकी बात।

मुँह उठके तो सब धोते हैं ऐ दीदए-ख़ूंबार[1]!
बिस्तरसे हम उठे हैं तो मुँह धोके उठे हैं॥

आरामके थे साथी क्या-क्या जब वक्त पड़ा तो कोई नहीं।
सब दोस्त हैं अपने मतलबके दुनियामें किसीका कोई नहीं॥

न तौबा[2] की है बज़ाहिर न छुपके पी है शराब।
बरी हूँ दाग़ेरियासे[3] वह पाकदामाँ[4] हूँ॥

तुम हो कि एक तर्ज़े-सितमपर नहीं करार।
हम हैं कि पाबन्द हरेक इम्तेहांके हैं॥
हों सर्फ़[5] तीलियोंमें कफसके[6] तो ख़ौफ है।
तिनकें जो मेरे उजड़े हुए आशियांके हैं॥

ख़ुदावन्दा! एवज़ मिन्नतपज़ीरीके[7] वोह जौहर दे।
ख़ुद अपने दर्दका इस दु:खभरी दुनियामें दरमाँ[8] हूँ॥

इस आलमे-इम्कांमें[9] क्या है जो है नामुम्किन।
ढूंढ़ो तो मिले उनका,[10] चाहो तो ख़ुदा मुम्किन॥

पर्दा जो दुईका उठ जाये फिर दो न रहें अफसाने यह[11]।
धोका है यह नामे-दैरोहरम, बुत एक ही है बुतख़ाने दो॥

लाता नहीं पैग़ाम कोई इसपै यह है हाल।
क़ासिदको दिया करता हूँ इनआम हमेशा॥

---

[1]रक्त रोनेवाले नेत्र; [2]प्रतिज्ञा; [3]दिखावटी धार्मिकतासे; [4]पवित्र; [5]-[6]पिंजरा बनानेके तीलियों केलिएकाम आये; [7]प्रार्थना एव स्तुति की स्वीकृति के बजाय; [8]इलाज; [9]संसारमें; [10]एक पक्षी जिसका अस्तित्व नहीं; [11]दीवानमें शब्द यहाँ 'दो' है। मालूम होता है कितावत गलतीसे दो जगह 'दो' हो गया है। हमने दूसरे 'दो'को 'यह' बना देनेकी बेअदबी की है।

सितमसे शमअ सरापा बयानेराज[1] हुई।
कटी जबान तो कुछ और भी दराज[2] हुई॥

फैल गई बालोंमें सफेदी चौंक जरा करवट तो बदल।
शामसे गाफिल सोनेवाले देख तो कितनी रात रही॥

ख़ुद चले आओ या बुला भेजो।
रात अकेले बसर नहीं होती॥
हम खुदाईमें हो गये रुसवा।
मगर उनको खबर नहीं होती॥
किसी नादांसे जो कही जाये।
बात वह मुख्तसर नही होती॥
जबसे अश्कोंने राज[3] खोल दिया।
चार अपनी नजर नहीं होती॥
आग दिलमें लगी न हो जबतक।
आँख अश्कोंसे तर नहीं होती॥

कफ़ससे ठोकरें खाती नजर जिस नख्लतक[4] पहुँची।
उसीपर लेके इक तिनका बिनाए-आशियाँ रख दी॥
सुकूनेदिल[5] नहीं जिस वक्तसे इस बज्ममें[6] आये।
जरा-सी चीज घबराहटमें क्या जानें कहाँ रख दी॥
बुरा हो इस मुहब्बतका हुए बरबाद घर लाखो।
वहींसे आग लग उट्ठी यह चिन्गारी जहाँ रख दी॥
किया फिर तुमने रोता देखकर दीदारका[7] वअदा।
फिर एक बहते हुए पानीमें बुनियादे-मकाँ[8] रख दी॥

---

[1]प्रेम-भेद बतानेको उद्यत; [2]बड़ी लम्बी, [3]प्रेम-भेद; [4]वृक्षतक; [5]हृदयको चैन; [6]महफिलमें; [7]सूरत दिखानेका; [8]मकानकी नींव।

दरेदिल[1] 'आर्ज़ू' दरवाज़ए-कअ़वेसे वेहतर था।
यह ओ ग़फलतके मारे! तूने पेशानी कहाँ रख दी?

शरअ़में अपनी वाइज़ो! हुक्म है मैकशीके दो।
"दे जो कोई हलाल है, ख़ुद जो पिये हराम है"॥

अव मुझको फ़ाएदा हो दवा-ओ-दुआ़से क्या?
वोह मुँहपै कह गये—"यह मरज़ ला-इलाज है"॥

इज़्ज़त कुछ और शै है, नुमाइश कुछ और चीज़।
यूँ तो यहाँ ख़रोसके[2] सरपर भी ताज है॥

मेरे ग़मने होश उनके भी खो दिये।
वोह समझाते-समझाते ख़ुद रो दिये॥

इक जाम-ए-वोसीदा हस्ती[3] और रूह[4] अज़लसे[5] सौदाई[6]।
यह तंग लिवास न यूँ चढ़ता ख़ुद फाड़के हमने पहना है॥

हिचकीमें जो उखड़ी साँस अपनी घबराके पुकारी याद उसकी—
"फिर जोड़ ले यह टूटा रिश्ता इक झटका और भी सहना है"॥

नतीजा एक ही निकला कि थी क़िस्मतमें नाकामी।
कभी कुछ कहके पछताये कभी चुप रहके पछताये॥

रहने दो तसल्ली तुम अपनी, दुख झेल चुके दिल टूट गया।
अव हाथ मलेसे होता क्या, जव हाथसे नावक[7] छूट गया॥

दो तुन्द[8] हवाओंपर वुनियाद है तूफ़ाँकी।
या तुम न हसीं होते या मैं न जवाँ होता॥

लुत्फ़े-वहार कुछ नहीं, गो है वही वहार।
दिल क्या उजड़ गया कि ज़माना उजड़ गया॥

---

[1]हृदय-द्वार; [2]मुर्ग़के; [3]शरीररूपी गली-सडी पोशाक; [4]आत्मा; [5]आरम्भसे; [6]दीवानी; [7]तीर; [8]तेज़।

दफ़अ़तन[1] तर्के-मुहब्बतमें[2] भी रुसवाई[3] है।
उलझे दामनको छुड़ाते नहीं झटका देकर॥

दिलकी कशिशको[4] अब भी, गुलशनसे है तअ़ल्लुक[5]।
कुछ पत्तियाँ कफस तक उड़-उड़के आ रही हैं॥

इम्तेहाँ इश्कमें मंजूर है, गमख्वारोंका।
इक जरा होशमें आजाऊँ तो दीवाना बनूँ॥

रोनेपै मेरे हँसते क्या हो? बेसमझे न दीवाना जानो?
दिल किससे लगाया है तुमने? तुम दर्द किसीका क्या जानो?

बातोंसे तसल्ली थी दिलको, वअ़देपै भरोसा हो न सका।
फिर हो गई वैसी ही हालत, जब पाससे वोह समझाके उठे॥

शबनमके[6] आँसुओंपर क्या हँस रहे हैं गुंचे[7]!
उनसे तो कोई पूछे कबतक हँसा करेंगे?

क्या सोजे-मुहब्बतने[8] जफ़ा[9] जब्तमें[10] की है।
दर[11] बन्द हैं और चारो तरफ आग लगी है॥

ताजे वोह फिरसे हो गये, गम जो फ़लकने थे दिये।
जिसने कि हँसके बात की, हम भी पलटके रो दिये॥

कहके यह और कुछ कहा न गया—
कि "हमें आपसे शिकायत है"॥

खींच लाया था यह किस आ़लमसे किस आ़लममें होश?
अपना हाल अपने लिए जैसे कोई अफसाना था॥

---

[1]यकायक, एकदम; [2]प्रेम-त्यागमें; [3]बदनामी, [4]आकर्षणको; [5]सम्बन्ध; [6]ओसके; [7]कलियाँ, [8]प्रेम-अग्निने, [9]आफत, बदी; [10]सन्तोप, सब्रमें; [11]द्वार।

वस्लका[1] ख़्वाहिशमन्द बने क्यों, हुस्नका सच्चा परवाना।
दिलसे लगी है लाग तो इकदिन, ख़ुद शोअ़्ला[2] बन जायेगा॥

इश्क़पर भी छा गईं रअ़्नाइयाँ[3]।
उफ़ तेरी तोड़ी हुई अँगड़ाइयाँ॥

वोह तो कुछ मुसकराके हो गये चुप।
एक उलझनमें पड़ गया हूँ मैं॥

उलफ़त भी अ़जब शै है, जो दर्द वही दरमाँ[4]।
पानीपै नहीं गिरता, जलता हुआ परवाना[5]॥

कुछ सहारा चाहती है आ़शिक़ीकी ज़िन्दगी।
बेनियाज़ी[6] तेरे सदके[7] नाज़[8] बेजा ही सही॥

मुझे रहनेको वोह मिला है घर कि जो आफ़तोंकी है रहगुज़र[9]।
तुम्हें ख़ाकसारोंकी[10] क्या ख़बर, कभी नीचे उतरे हो बामसे[11]?

जो तेरे अमलका चराग़[12] है, वही बेमहल[13] है तो दाग़ है।
न जलाके सुब्ह़से बैठ उसे, न बुझाके सो उसे शामसे॥

जमा हुए हैं कुछ हसीं, गिर्द मेरे मज़ारके।
फूल कहाँसे खिल गये दिन तो न थे बहारके॥

छीना था छलकता हुआ जाम, उसने झटककर।
क्या मुफ़्तका धब्बा मेरे दामनमें लगा है॥

तजरुबे सब हेच हैं, क़ानून सब बेकार हैं।
हर ज़माना इक नया पैग़ाम लेकर आये है॥

---

[1]मिलनका; [2]अंगारा; [3]मोहिनी; [4]इलाज; [5]पतंगा; [6]बेपरवाही, उपेक्षा; [7]न्योछावर; [8]सौन्दर्य-अभिमान; [9]मार्ग; [10]धूलमें मिले हुओंकी, सेवकोंकी; [11]ऊपरसे, कोठेसे; [12]सदाचार-दीप; [13]अव्यवस्थित।

घूप सह लेना है अच्छा, वारे-एहसाँ कौन उठाये ?
छाँव इक गिरती हुई दीवार है मेरे लिए॥

जो देखेगा रोते मुझे, तुमको हँसते।
मेरी बात छोड़ो तुम्हें क्या कहेगा ?
आँख उसने फिराके रुत पलट दी।
हँसते हुए फूल रो रहे हैं॥

बैठे तकते तो है, कनअँखियोंसे।
यह नहीं पूछते, खड़े क्यों हो ?

चुभते हुए देखा है न काँटा, न कोई फाँस।
ऐ साँस बता दे, यह है काहेकी खटक-सी॥

यह है तेरे घायलका अब साँस लेना।
छुरी इक कलेजेमें जैसे चुभो ली॥

किसने भीगे हुए बालोंसे यह झटका पानी।
झूमकर आई घटा टूटके बरसा पानी॥

आये दिन अच्छा नहीं एक बावलेको छेड़ना।
मर मिटेगा 'आर्ज़ू' जिस दिन उसे झक आगई॥

अपने लिए मतवाली है कैसी, यह न पूछो।
वोह आँख कि जो दूसरोंकी नींद उड़ा दे॥

रहते न तुम अलग-थलग हम न गुज़रते आपसे।
चुपके-से कहनेवाली बात कहनी पड़ी पुकारके॥

पूछी थी छेड़कर जो बात, कहने न दी वोह बात भी।
तुमने खटकती फाँसको छोड़ दिया उभारके॥

✓ तारा टूटते देखा सबने, यह नहीं देखा एकने भी।
किसकी आँखसे आँसू टपका, किसका सहारा टूटा है॥

✓ चुप एक पहेली है, सोचोगे तो बूझोगे।
तुमसे वही कहना है, जो सबसे छुपाना है॥

बता देगी भेद 'आर्ज़ू'! नींद उड़कर।
कि जो रात छोटी थी, अब क्यों बड़ी है॥

दो घड़ीको दे-दे कोई अपनी आँखोंकी जो नींद।
पाँव फैला दूँ गलीमें तेरी सोनेके लिए॥

मिट भी सकती थी कहीं, वे रोये छातीकी जलन।
आगको पिघला लिया फाहा भिगोनेके लिए॥

—फ़ुग़ाने-आर्ज़ूसे

आगई मंज़िले-मुराद[1], बाँगेदराको[2] भूल जा।
ज़ाते-ख़ुदामें यूँ हो महव[3], नामे-ख़ुदाको भूल जा॥*

सबकी पसन्द अलग-अलग, सबके जुदा-जुदा मज़ाक़।
जिसपै कि मर मिटा कोई, अब उस अदाको भूल जा॥

ज़ख़्मसे कम नहीं है, उसकी हँसी।
जिसको रोना भी अब नहीं आता॥

---

[1]अभिलषित यात्रा-स्थान, [2]घण्टीकी आवाज़; [3]लीन।

*होश किसीका भी न रख जल्वागहे-नियाज़में[1]।
बल्कि ख़ुदाको भूल जा सिज्द-ए-बेनियाज़में[2]॥

—'असग़र' गोंडवी

---

[1]ईश्वरके प्रासादमें, प्रेम-मन्दिरमे, [2]भक्तिकी तल्लीनतामें।

क्यों किसी रहबरसे[1] पूछूं अपनी मंज़िलका पता।
मौजे-दरिया[2] खुद लगा लेती हैं साहिलका[3] पता॥
राहबर रहज़न[4] न बन जाये कहीं, इस सोचमें।
चुप खड़ा हूँ भूलकर रस्तेमें मंज़िलका पता॥*

मैं चुप आसरा लगाये, और उन्हें यही बहाना—
"कि यह मुँहसे कुछ तो कहता, जो उमीदवार होता"॥†

इश्कमें सौ बार नाला आके लबतक रह गया।
बात अकेलेकी नहीं थी दो दिलोंका राज़ था॥

वोह कहते हैं "मैं तेरे घर मेहमाँ था"।
यह सच है तो ऐ बेख़ुदी[5] मैं कहाँ था?

नैरंगियाँ चमनकी तिलिस्मे-फ़रेब हैं।
उस जा भटक रहा हूँ जहाँ आशियाँ न था॥

पाबन्दियोंने खोल दी आँखें तो समझे हम।
आकर कफ़समें बस गये थे आशियाँ न था॥

जो दर्द मिटते-मिटते भी मुझको मिटा गया।
क्या उसका पूछना कि कहाँ था कहाँ न था॥

अबतक वह चारासाज़िए[6] चश्मेकरम[7] है याद।
फाहा वहाँ लगाते थे, चरका[8] जहाँ न था॥

---

[1]पथ-प्रदर्शकसे; [2]दरियाकी लहरे; [3]दरियाके किनारेका; [4]लुटेरा, [5]आत्म-लीनता; [6-7]चिकित्सककी कृपा; [8]चोट, घाव।

*छोड़ा न रश्कने कि तेरे घरका नाम लूँ।
हरइकसे पूछता हूँ कि जाऊँ किधरको मैं॥—ग़ालिब

†कहते हैं जब रही न मुझे ताक़ते-सुख़न—
"जानूँ किसीके दिलकी मैं क्योंकर कहे बग़ैर?"—ग़ालिब

हमको इतना भी रिहाईकी खुशीमें नहीं होश।
टूटी जंजीर कि खुद पाँव हमारा टूटा॥

पहले वाला-ए-ज़मीं[1] थे आ बसे[2] अब ज़ेरेखाक[3]।
तूलने मीआ़दके बदला है, ज़िन्दाँ[4] दूसरा॥

उढ़ा दी वादियए-गुरवतमें[5] चादर गर्द ने आकर।
मिला आखिर वही लिखवाके लाये थे कफन जैसा॥

जो कोई हद हो मुअ़य्यन[6] तो शौक, शौक नहीं।
वोह कामयाब है जो कामयाब हो न सका॥

बुरी सरिश्त[7] न बदली जगह बदलनेसे।
चमनमें आके भी काँटा गुलाब हो न सका॥

अ़दू[8] न थी मगर अन्धी जरूर थी बिजली।
कि देखे फूल न पत्ते न आशियाँ देखा॥

ज़मानेसे नाज़ अपने उठवानेवाले।
मुहब्बतका बोझ आप उठाना पड़ेगा॥
सज़ा तो बजा है, यह अन्धेर कैसा?
खताको भी जो खुद बताना पड़ेगा॥
मुहब्बत नहीं, आगसे खेलना है।
लगाना पड़ेगा, बुझाना पड़ेगा॥

खुदारा! न दो बदगुमानीका मौक़ा।
कहलवाके औरोंसे पैग़ाम अपना॥
हविसकार[9] आ़शिक भी ऐसा है जैसे—
वह बन्दा कि रखले खुदा नाम अपना॥

---

[1]ज़मीनके ऊपर; [2]बस गये; [3]ज़मीनके नीचे; [4]कैदखाना; [5]विदेशकी काननमें; [6]निश्चित; [7]आदत, चलन; [8]शत्रु; [9]कामलोलुप।

पलक झपकी कि मंज़र[1] ख़त्म था वर्क़े-तजल्लीका[2]।
ज़रा-सी नेअ़मते-दीद[3], उसका भी यूँ रायगाँ[4] जाना॥
समझ ले शमअ़से ऐ हमनशीं[5]! आदाबे-ग़मख़्वारी[6]।
ज़बाँ कटवानेवालेका है मन्सब,[7] राज़दाँ[8] होना॥

अल्लाह, अल्लाह हुस्नकी यह पर्दादारी देखिए।
भेद जिसने खोलना चाहा, वोह दीवाना हुआ॥

मेहमाँ-नवाज़[9], वादियए-ग़ुरबतकी[10] ख़ाक थी।
लाशा[11] किसी ग़रीबका उरियाँ[12] नहीं रहा॥
आँसू बना जिबींका अ़रक़[13] ज़ब्ते-अश्क़से।
बदला भी ग़मने भेस तो पिन्हाँ[14] नहीं रहा॥

ज़बाँका फ़र्क़ हक़ीक़त बदल नहीं सकता।
यह कोई बात नहीं, बुत कहा ख़ुदा न कहा॥

क़रीबे-सुब्ह यह कहकर अजलने[15] आँख झपका दी—
"अरे-ओ हिज्रके मारे तुझे अबतक न ख़्वाब आया"॥
दिल उस आवाज़के सदक़े, यह मुश्किलमें कहा किसने—
"न घबराना, न घबराना, मैं आया और शिताब[16] आया"॥
कोई क़त्ताल[17]-सूरत देख ली मरने लगे उसपर।
यह मौत इक ख़ुशनुमा पर्देमें आई या शबाब[18] आया॥*

---

[1]दृश्य; [2]सौन्दर्यरूपी बिजलीका; [3]देखनेकी अनुकम्पा; [4]व्यर्थ; [5]पड़ौसी, साथी, [6]सहानुभूतिकी रीति; [7]ओहदा; [8]भेदी, [9]अतिथिका सत्कार करनेवाली; [10]विदेशके अरण्यकी, यात्रा-मार्गकी, [11]शव; [12]नग्न, बेकफ़न, [13]मस्तकका पसीना; [14]छिपा हुआ; [15]मृत्युने; [16]शीघ्र; [17]घायलकरनेवाली; [18]यौवन।

*सँभाला होश तो मरने लगे हसीनोंपर।
हमें तो मौत ही आई शबाबके बदले॥—अज्ञात

मुअ़िम्मा[1] बन गया राज़े-मुहब्बत[2] 'आर्ज़ू' यूँ ही।
वोह मुझसे पूछते झिझके, मुझे कहते हिजाब आया॥*

जिसमें कैफ़े-ग़म[3] नहीं, बाज़ आये ऐसे दिलसे हम।
यह भी देना है कोई? मै तो न दी, साग़र दिया!
'आर्ज़ू' इकरोज़ ढा देता मुझे मेरा ही ज़ोर।
यह भी उसकी कारसाज़ी दिलमें जिसने डर दिया॥†

एक दिलमें ग़म ज़माने भरका, क्योंकर भर दिया।
ख़ूए-हमदर्दीने[4] कूज़ेमें समुन्दर भर दिया॥
आँख थी साक़ीकी जानिब, हाथमें जामे-तेही[5]।
मै तो क़िस्मतमें कहाँ? अश्कोंने साग़र भर दिया॥

साथ हर हिचकीके लबपर उनका नाम आया तो क्या?
जो समझ ही में न आये वह पयाम[6] आया तो क्या?
मैसे हूँ महरूम अब भी, गो शरीके-दौर हूँ।
पाए-साक़ी-से जो ठोकर खाके जाम आया तो क्या?

आ़शिक़ीने मत पलट दी हुस्नने खोये हवास।
उसने जितनी दुश्मनी की और प्यारा हो गया॥

---

[1]पहेली; [2]प्रेम-भेद; [3]ग़मका मतवालापन; [4]हमदर्दीकी आदतने; [5]ख़ाली गिलास; [6]सन्देश।

*ग़लत फ़हमियोंमें जवानी गुज़ारी।
कभी वोह न समझे, कभी हम न समझे॥
—सबा अकबराबादी

†मेरी हविसको ऐशे-दो आ़लम ही था कुबूल।
तेरा करम कि तूने दिया दिल दुखा हुआ॥
—फ़ानी बदायूनी

जवाब देनेके बदले वोह शक्ल देखते हैं।
यह क्या हुआ मेरे चेहरेको, अर्ज़-हालके बअ़द॥*

अदाशिनास निगाहोंने ऐसा कुछ देखा।
जवाबकी न तमन्ना रही सवालके बअ़द॥

नातवाँ[1] बीमारेग़म[2], उसपर थपेड़े मौतके।
बुझ गया आखिर चिराग़े-सुब्ह, लहरानेके बअ़द॥†

आफतमें पड़े दर्दके इज़हारसे हम और।
याद आ गये भूले हुए कुछ उसको सितम और॥
हम 'आर्ज़ू' इस शानसे पहुँचे सरे-मंज़िल।
ख़ुद लग़्ज़िशे-पा[3] ले गई दो-चार कदम और॥

माँग जो खोके आन-बान न माँग।
क़त्ल हो जा मगर अमान[4] न माँग॥

आलूदगीये-गर्दतमअ़से[5] ख़ुदा बचाये।
जाते हैं झाड़ते हुए दामन चमनसे हम॥

---

[1]कमज़ोर; [2]प्रेम रोगी; [3]पाँवोंकी लड़खड़ाहट; [4]जीवन-रक्षा; [5]अभिलाषारूपी धूलकी लिप्ततासे।

*तेरे सवालपर चुप हूँ इसे ग़नीमत जान।
कहीं जवाब न दे-दे कि मै नहीं सुनता॥
—शाद अ़ज़ीमाबादी

†जब उखड़ी साँस तो बीमारेग़म सँभल न सका।
हवा थी तेज़ चिराग़े-हयात जल न सका॥
चिराग़े-हुस्न तेरा और मेरा चिराग़े-दिल।
वह जलके बुझ न सका और यह बुझके जल न सका॥
—नानक लखनवी

मिली है इसलिए दो-चार दिनकी आज़ादी।
कि सर्फ़[1] करता है देखें यह इख़्तियार कहाँ?

'आर्ज़ू'! हो चुकी सौ मर्तबा दुनिया बेदार[2]।
और मैं सोई हुई तक़दीर लिये बैठा हूँ॥

मेरी नाकामियाँ रोती हैं ख़ुद मेरी जवानीपर।
हूँ एक जामे-तमन्ना[3] और मए-इशरतसे[4] ख़ाली हूँ॥

उनकी बेजा भी सुनूँ, आप बजा भी न कहूँ।
आख़िर इन्सान हूँ मैं भी, कोई दीवार नहीं॥

सुरूरे-शबका[5] नहीं, सुबहका ख़ुमार[6] हूँ मैं।
निकल चुकी है जो गुलशनसे वोह बहार हूँ मैं॥
करमपै[7] तेरे नज़र की तो ढह गया वह ग़ुरूर।
बड़ा था नाज़[8] कि हदका गुनाहगार[9] हूँ मैं॥

कौन दीवाना कहे इश्क़के दीवानेको।
गिरते देखा न बुझी शमअपै परवानेको॥[1]

---

[1]ख़र्च; [2]जाग्रत्; [3]अभिलाषारूपी गिलास; [4]ऐश्वर्यरूपी मदिरासे; [5]रात्रिकालीन नशा; [6]नशेका उतार; [7]कृपाओंपर; [8]घमण्ड; [9]पापी।

[1]बुझी हुई शमअपर परवाना तो नहीं जलता, परन्तु भारत-ललनाएँ अपने मृतक पतियोंके साथ जलती रही हैं। शेख़ सअदीने भारतकी सैर करते हुए लिखा था—

चूँ ज़नें-हिन्दी कसे दर आशिक़ी मर्दाना नेस्त।
सोख़्तन बर शमअे मुर्दन कारे हर परवाना नेस्त॥

प्रेममें हिन्दकी स्त्रियोंसे बढ़कर कोई नहीं। परवाना तो जलती हुई शमअपर ही जलता है, परन्तु भारतकी नारियाँ बुझे हुए चिराग़ (मृतक पति) पर जल मरती हैं।

उनको तो हर इक बातपर हँस देनेकी आदत।
क्या निकला जबाँसे हम इस उलझनमें पड़े हैं॥

न यह कहो "तेरी तकदीरका हूँ मैं मालिक"।
बनो जो चाहो ख़ुदाके लिए, ख़ुदा न बनो॥
अगर है जुर्मेमुहब्बत तो ख़ैर यूँ ही सही।
मगर तुम्हीं कहीं इस जुर्मकी सज़ा न बनो॥
मिले भी कुछ तो है बेहतर तलबसे इस्तग़ना[1]।
बनो तो शाह[2] बनो, 'आर्जू'! गदा[3] न बनो॥

दैरो-हरम[4] हुए तो क्या, है ये मकान बेमकीं[5]।
सर तो वहाँ झुकेगा जो तेरा हरीमे-नाज़[6] हो॥

क़ैद मज़बूत नहीं, दामो-क़फ़सकी[7] सैयाद!
रख वोह बर्ताव कि दिल माइले-परवाज़[8] न हो॥

रुकके लिया जो दम तो फिर, ख़ाम[9] है शौक़े-जुस्तुजू[10]।
जिसकी मददका हो यक़ीं, उसका भी आसरा न देख॥

हर दानेपै इक क़तरा, हर कतरेपै इक दाना।
इस हाथमें सुमरन है, उस हाथमें पैमाना॥
कुछ तंगिये-ज़िन्दाँसे[11] दिलतंग नहीं वहशी[12]।
फिरता है निगाहोंमें, वीराना-ही-वीराना॥

फ़स्ले-गुल बाग़में दिलकश नहीं सैयाद! अभी।
पर है बेज़ोर न कर क़ैदसे आज़ाद अभी॥

---

[1]निस्पृहता; [2]बादशाह, [3]भिक्षुक; [4]मन्दिर-मस्जिद; [5]रिक्त (ईश्वरसे शून्य); [6]स्थान (प्रेयसीका मकान); [7]जाल और पिंजरेका बंधन; [8]उड़नेको उद्यत; [9]व्यर्थ; [10]तलाशका शौक; [11]कारागृहकी संकीर्णतासे; [12]पागल।

हुस्ने-सीरतपर[1] नज़रकर, हुस्ने-सूरतको[2] न देख।
आदमी है नामका गर खू[3] नहीं इन्सानकी॥
ध्यान आता है कि टूटा था, गलतफहमीमें अहद[4]।
यादगार इक है तो धुँधली-सी मगर किस शानकी॥

उठ खड़ा हो तो वगोला है, जो वैठे तो गुवार[5]।
ख़ाक होकर भी वही शान है, दीवानेकी॥
'आर्ज़ू'! ख़त्म हक़ीक़तपै हुआ दौरे-मजाज़।
डाली कअवेकी विना, आड़से वुतख़ानेकी॥

क्यों शौक़े-तलवसे वाज़ रहें, अंजामेमुहब्बत क्यों सोचें?
इक दिलका वहलावा तो है, सव दर्द-सरी वेकार सही॥

सवव वग़ैर था हर जब्र क़ाविले-इलज़ाम।
वहाना ढूँढ लिया, देके इख़्तियार मुझे॥
किया है आग लगानेको वन्द दरवाज़ा।
कि होठ सीके वनाया है राज़दार मुझे॥

ज़ाहिद! वोह उन आँखोंकी टपकती हुई मस्ती।
पत्थरमें गढ़ा डालके पैमाना वना दे॥

यह तो वात उनके समझनेकी है ऐ गैरते-इश्क!
हम कहें क्यों? न उठेगा गमे-हिज्राँ हमसे॥

नालाँ ख़ुद अपने दिलसे हूँ दरवाँका[6] क्या कहूँ!
जैसे विठा गया है, कोई पाँव तोड़के॥
क्या जाने टपके आँखसे किस वक़्त ख़ूने-दिल।
आँसू गिरा रहा हूँ जगह छोड़-छोड़के॥

---

[1]सुन्दर स्वभारपर; [2]सुन्दर मुखको, [3]स्वभाव, आदत; [4]प्रतिज्ञा; [5]धूल; [6]पहरेदारको।

भले दिन आये तो आज़ार[1] बन गया आराम।
कफसके तिनके भी काम आ गये नशेमनके॥
मिटाके फिर तो बनानेपर अब नहीं क़ाबू।
वोह सर झुकाये खड़े है, क़रीब मदफनके[2]॥*

हमें इक रोज़ यह भी देखना है 'आर्जू' मरकर।
कि ख़ुश होता है कौन और कौन मातमदार होता है॥

क्यो उसकी यह दिलजोई[3], दिल जिसका दुखाना है।
ठहराके निशानेको क्या तीर लगाना है?
अन्दाज़े-तग़ाफ़ुलपर[4] दिल चोट तो खा बैठा।
अब उनकी निशानीको, उनसे भी छुपाना है॥
कम-ताक़तिये-नाला अश्कोंसे मदद ले-ले।
बेरब्त कहानीमें, पैवन्द लगाना है॥

किसी जा गर्दमें मोती, कहीं है गर्द मोतीमें।
तेरी राहोंको ऐ तकदीर! हमने ख़ूब छाना है॥

ग़ुबार उठता है यह कहता हुआ गोरेग़रीबांसे[5]—
"जहांमें एक दिन सबका यही अंजाम होना है"॥

फिर 'आर्जू'को दरसे[6] उठा, पहले यह बता।
आख़िर ग़रीब जाये कहाँ और कहाँ रहे?

---

[1]सकट; [2]कब्रके, [3]दिलकी बात पूछना, दिलको ख़ुश करनेवाली बातें; [4]उपेक्षाके अन्दाज़पर; [5]क़ब्रिस्तानसे; [6]दरवाज़ेसे।

*मिलाकर ख़ाकमें भी हाय! शर्म उनकी नहीं जाती।
निगह नीची किये वोह सामने मदफनके बैठे हैं॥
—असीर लखनवी

था शौक़े-दीद[1] तावे-अ़-आदावे-बज़्मेनाज़[2]।
यअ़नी बचा-बचाके नज़र देखते रहे॥
अहले-क़फ़सका[3] खौफ़-ज़दा[4] शौक क्या कहूँ?
सूए-चमन[5] समेटके पर देखते रहे॥

पाँवको लग़ज़िश[6] है, लबपर शोरे-नोशा-नोश[7] है।
जितनी पैमानेमें अब बाकी है, उतना होश है॥

इश्क दिलमें शोअ़लाफ़गन[8], चश्मे-तरहें[9] अश्क-रेज़[10]।
एक ही शै[11] और कहीं पानी किसी जा आग है॥

आँख जिस दिनसे लगी है, आँख लगना जुर्म है।
उसकी वैसी ही सज़ा भी होगी जैसा जुर्म है॥

वे राहनुमा डाला है, जिस राहपै दिलने।
इतनी है खतरनाक कि रहज़न[12] भी नहीं है॥

गम दिया है कि मसर्रत[13] दी है, सबमें इक तरहकी लज़्ज़त दी है।
हँस न इतना कि खुशी गम हो जाये, शै हरइक हस्व ज़रूरत दी है॥

अलअमाँ मेरे ग़मकदेकी शाम।
सुर्ख़ शोअ़ला सियाह हो जाये॥*
पाक निकले वहाँसे कौन जहाँ।
उज़्रख्वाही गुनाह हो जाये॥

---

[1]देखनेका चाव; [2]महफिलके अदब-कायदेका खयाल रखते हुए; [3]कैदियोंका; [4]भयमिश्रित; [5]उपवनकी ओर; [6]थिरकन, कम्पन; [7]शोरो-गुल; [8]दहकता हुआ; [9]भीगे नेत्र हैं; [10]आँसू बहानेवाली; [11]वस्तु; [12]लुटेरा; [13]खुशी।

*मेरे ग़मखानए-मुसीबतकी।
चाँदनी भी सियाह होती है॥—'जिगर' मुरादाबादी

इन्तहाए-करम[1] वोह है कि जहाँ।
बेगुनाही गुनाह हो जाये॥

जाँचकर तावे-नज़रको[2] रूएजानाँ[3] देखिए।
देख सकिए कौंदती बिजली तो हाँ-हाँ देखिए॥
—जहाने आर्ज़ूसे

साकिया! चश्मेकरमका[4] वक़्त होगा कौन-सा?
जामे-दिल[5] खाली है, जामे-जिन्दगी[6] लबरेज़[7] है॥

१५ जुलाई १९४९

---

[1]कृपाकी हद; [2]देखनेकी शक्तिको, [3]प्रेयसीकी सूरत; [4]कृपा-दृष्टिका; [5]हृदय-पात्र; [6]जीवन-पात्र; [7]पूर्ण, भरा हुआ।
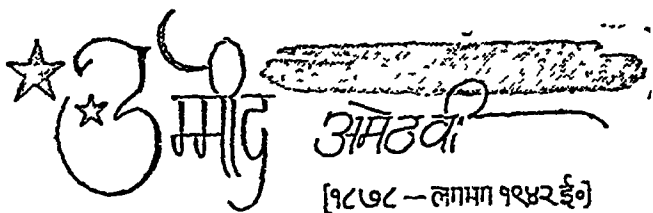
मुहम्मदअली 'उम्मीद' सुलतानपुर ज़िलेके उमेठगढ क़स्बेमे ३ फ़रवरी १८७८ ई० में पैदा हुए। आप १८९३ मे लखनऊ चले गये। फ़ारसी-उर्दू दोनोमे शेअ़्र कहते है। आप उर्दू शाइरीमे 'जलालके' शिष्य थे। मगर आप फारसीके क्लिष्ट और अव्यवहारिक शब्दोको उर्दूमे ठूँसनेका प्रयत्न करते थे। जो कि उस्तादको नागवार गुजरता था। एक दिन उस्तादने फर्माया—"हज़रत ! आप वही मिर्ज़ा नौशा (गालिब) की तरह झाड़-झंकाडमे चले जा रहे है। मुझे आपका यह असलूबे-बयान पसन्द नही।"

परिणामस्वरूप आप उर्दूका कलाम भी अपने फारसी उस्तादको दिखाने लगे।

आपके स्वयं पसन्दीदा अशआर 'निगार' जनवरी-फरवरी १९४१ में प्रकाशित हुए थे, उनमे-से चन्द हम यहाँ साभार उद्धृत कर रहे है—

अब तो ऐसा भी नहीं कोई जो उनसे पूछे—
"आपने खोके मुझे, ग़ैरको पाया कैसा"?

आपसे रूठके 'उम्मीद' कहाँ जायेंगे?
वे बुलाये अभी आते है मनाना कैसा?

मजबूरियाँ भरी है मेरे इख़्तियारमें।
और इख़्तियार कहते है किस इख़्तियारको?

कोई हमसे न हम किसीसे ख़ुश।
कौन हो ऐसी ज़िन्दगीसे ख़ुश॥

क्या हम अपनी ख़ुशीसे नाख़ुश हैं।
तुम हो क्यों मेरी नाख़ुशीसे ख़ुश?

ख़ुशनसीबीका उसकी क्या कहना।
तुम हो दुनियामें जिस किसीसे ख़ुश॥

वअ़दा कलका है, लेकिन ऐ 'उम्मीद'!
तुम नज़र आते हो अभीसे ख़ुश॥

'उम्मीद'! रो दिये तो क्या लुत्फ़ दिल्लगीका?
इतना ही गुदगुदाओ आये हँसी जहाँ तक॥

रोई शबनम, गुल हँसा, ग़ुंचा खिला, मेरे लिए।
जिससे जो कुछ हो सका उसने किया मेरे लिए॥
आ़म है यूँ तो मेरी बरबादियोंका वाकेआ़।
यह भी तो कह दें कि कोई मर मिटा मेरे लिए॥
हँसनेवाले रो दिये और रोनेवाले हँस पड़े।
दिलके हाथों जो न होना था हुआ मेरे लिए॥

उस निगाहे-लुत्फ़ ही से क्यों न चलकर पूछिए।
कौन-सी है वोह ख़ता जो अ़फ़्के[1] काबिल नहीं?

मुहब्बतमें हर चन्द जीका ज़ियाँ[2] है।
मगर मैं यह बातें कहाँ देखता हूँ॥

---

[1]क्षमा योग्य, [2]घाटा, नुकसान।

यही तेरी जन्नत है? ऐ तेरी क़ुदरत!
कहाँकी बहारें कहाँ देखता हूँ?

नाम सुनकर ख़ुशीका ऐ 'उम्मीद'!
रंज होता है अब ख़ुशी कैसी?

फ़र्ते-सुजूदे-ग़ैरसे[1] ख़स्ता है जब वोह संगेदर।
अपनी जिबीने-शौकको दाग़ कोई लगाये क्यों?

वफ़ा[2]ओ-महरो[3]-मुरव्वत,[4] सदाक़तो[5]-इन्साफ़[6]।
ख़बर नहीं कि यह बातें हैं किस ज़मानेकी॥
वोह ज़ूद[7]-रंज है और ज़ूद-रंज भी कैसा?
जो रूठ जाये तो जुरअत न हो मनाने की॥

ख़ुशी तो उनकी ख़ुशी है कि जिससे सब ख़ुश हैं।
हमारे दिलकी ख़ुशी क्या? हुई-हुई न हुई॥
यह और बात है रंजीदा हो गये 'उम्मीद'।
तेरी तरफ़से तो ख़ातिरमें कुछ कमी न हुई॥

कलतक जो पूछता तो इक बात भी थी ज़ालिम!
अब किसको पूछता है? 'उम्मीद' अब कहाँ है?

वोह आख़िर रो दिये क्यों? मैंने तो इतना ही पूछा था—
"कभी 'उम्मीद' को हँसते हुए भी तुमने देखा है?"

अरे सूदो ज़ियाँ[8] देखा नहीं जाता मुहब्बतमें।
यह सौदा और सौदा है यह दुनिया और दुनिया है॥

---

[1]दूसरोंके अधिक सिज्दा करनेसे; [2]नेकी, भलाई; [3]रहम, दया; [4]लिहाज; [5]सचाई; [6]न्याय; [7]शीघ्र नाराज़ होनेवाला; [8]लाभ-हानि।

अजीब बात है 'उम्मीद' दिलकी बातोंका।
न एअ़तबार उन्हें है, न एअ़तबार मुझे॥

कलतक तो उनके वअ़दए-फ़रदाका[1] उज्र था।
अब आज क्या अजलसे[2] बहाना करेंगे हम॥
समझे न थे कि एक दिन ऐसा भी आयगा।
हँसनेपर अपने आप ही रोया करेंगे हम॥

यह लुत्फ़े-ज़ौक़े-असीरी[3] नहीं कि ऐ सैयाद!
कफ़समें आग लगा दें हम आशियाँके लिए॥

ज़िंदगी है अपने क़ब्ज़ेमें न अपने बसमें मौत।
आदमी मजबूर है और किस क़दर मजबूर है॥

नाज़[4] है यह कि मुहब्बतमें बड़ा सब्र किया।
पूछिए, सब्र न करते तो भला करते क्या?

दिलकी उलझन न पूछिए 'उम्मीद'।
हम न ख़िल्वतके[5] हैं न महफ़िलके॥

अफ़साने मैं भी रहमते-हक़के[6] सुना किया।
इक गोशेमें[7] अलग मै-ओ-साग़र लिये हुए॥

आप कल गुज़रे हैं जिस राहगुज़रसे[8] पहले।
वहीं बैठा है कोई जाके सहरसे[9] पहले॥

---

[1]भविष्यका वअ़दा; [2]मृत्युसे; [3]क़ैद होनेके शौकका आनन्द; [4]घमण्ड; [5]एकान्तके; [6]ईश्वरीय कृपाके; [7]कोनेमें; [8]मार्गसे; [9]सुबहसे।

फिर इन्तिज़ारकी लज़्ज़त नसीब हो कि न हो।
ख़ुदा करे कोई ख़तका जवाब रहने दे॥

तसव्वुरातकी दुनिया है अपने मतलबकी।
कुछ और दिन अभी रुख़पर[1] नक़ाब[2] रहने दे॥

ख़याल और किसीका अगर नहीं, न सही।
तुझे तो चैनसे तेरा शबाब[3] रहने दे॥

कहनेके लिए ख़िज़्रो-मसीहाकी भी सुनलो।
लेकिन ग़में-हस्तीकी दवा और ही कुछ है॥

हर हविसनाकको[4] सौदा[5] है नज़रबाज़ीका[6]।
आपका जलवा अब ऐसा भी न अरज़ाँ[7] हो जाय॥

जो देखें तो तड़पें न देखें तो तरसें।
यह सूरत है देखें जो सूरत किसीकी॥

जो बस हो तो ख़ुदको भी ख़ुदसे छुपायें।
हैं ऐसे भी शर्मो-हया करनेवाले॥

टूटा तो तिलस्म 'उम्मीद'! उन शर्मगीं आँखोंका।
आप अपने ही को देखा ज़ालिमने मगर देखा॥

हँसते हैं यूँ ख़ूबिये-तक़दीरपर अपनी।
तू और कुछ ऐ रहबरे-कामिल न समझना॥

तूर हो या कलीम हो मुझको तो है यह देखना।
इश्क़ो-हविसका[8] फ़ैसला तेरी नज़रने क्या किया?

---

[1]मुखपर; [2]पर्दा; [3]यौवन; [4]कामुकको; [5]पागलपन, लालसा; [6]घूरनेका; [7]सस्ता, आमफहम, [8]प्रेम और कामुकताका।

पहले तो मुझको गम यह था, आहमें कुछ असर नहीं।
अब तो मुझे यह रंज है, हाय असरने क्या किया॥

हुबाबो-मौजको[1] भी देखकर आँखें नहीं खुलतीं।
ग़ज़बकी नींदमें डूबा हुआ है नाख़ुदा[2] मेरा॥

कैसके[3] हुस्ने-तसव्वुरकी[4] करे तसदीक़[5] कौन ?
वर्ना अब महमिलमें[6] कोई है, न जब महमिलमें था॥

कहाँका हश्र किसकी दाद इक ख्वाबे-परीशाँ था।
खुली जब आँख तो अपना ही हाथ अपना गरेबाँ था॥
मुझे मेरे तसव्वुरने[7] बड़ा धोका दिया वर्ना।
किसीका मेज़बाँ[8] था मैं न कोई मेरा मेहमाँ था॥
ख़ुदा मअ़लूम क्या वअ़दा है उस जाने-तग़ाफ़ुलसे[9]।
कि अब जीना बड़ा मुश्किल है मर जाना तो आसाँ था॥

अल्लाहरे फरेबे-तमन्ना[10] कि बार-हा[11]।
अपने ही ख़तको लेके पढ़ा नामाबरसे[12] आप॥

'उम्मीद'! पासे-चश्मे-मुरव्वतका[13] हो बुरा।
दिल ले गये वोह कह न सके कुछ ज़बाँसे हम॥

परस्तिशके[14] काबिल है ज़र्रा-ज़र्रा मेरी हस्तीका।
मगर यह बात कहनेकी नहीं शेख़ो-बरहमनमें॥
बतायें क्यों निकलवाये गये 'उम्मीद' कअ़बेसे!
वहाँ भी कोई शै पोशीदा थी हज़रतके दामनमें॥

---

[1]बुलबुले और लहरोंको; [2]मल्लाह, [3]मजनूंके, [4]सुरुचिपूर्ण चिन्तनको; [5]प्रमाणित; [6]पर्देमें; [7]ख़यालने; [8]आतिथ्य सत्कार करनेवाला; [9]उपेक्षा भावी प्रेयसीसे, [10]अभिलाषाओंका फरेब; [11]बार-बार; [12]डाकियेसे; [13]आँखोंकी लिहाज़के ख़यालका, [14]पूजने योग्य।

मरहूने-इल्तिफाते-मसीहा[1] नहीं हूँ मैं।
आख़िर बुरा ही क्या है जो अच्छा नहीं हूँ मैं॥

बिगड़ बैठे अगर 'उम्मीद' उस जाने-तमन्नासे।
तअज्जुब क्या कभी ऐसा भी होता है मुहब्बतमें॥

हिसाब क्या करमे-बेहिसाबका[2] तेरे।
हमारी हसरते-दिलका[3] अगर शुमार नहीं॥

कहीं वोह शोख़ न सुनता हो चुप रहो 'उम्मीद'!
जफ़ाशेआ़र[4] तो है गो वफ़ाशेआ़र[5] नहीं॥

न साफ़ इकरारका पहलू न साफ इंकारकी सूरत।
बड़े धोके दिये तेरे हिजाबे-नीम हाइलने[6]॥
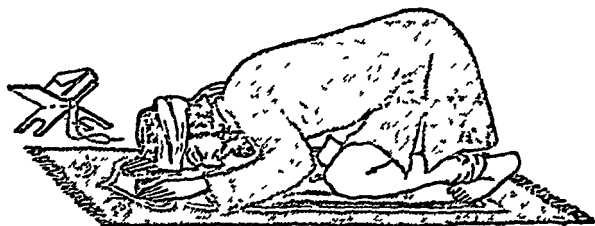
आबिद

२८ फरवरी १९५२

गुनाहसे[7] हूँ ख़िजिल[8] लेकिन, कभी तेरी तरह ज़ाहिद!
ख़ुदा बनकर नहीं की है ख़ुदाकी बंदगी मैंने॥

---

[1]ईसाके एहसानका आभारी; [2]अनगिनत कृपाओं-उपकारोंका; [3]दिलकी इच्छायें असंख्य हैं; [4]ज़ालिम, ज़ुल्म ज़ुल्म करना तो जानता है; [5]नेकी, भलाई करना नहीं जानता; [6]अर्द्ध लज्जाके आजानेने; [7]भूलोंसे, पापोंसे; [8]शर्मिन्दा।

सैयद अलीनकी 'सफी' ३ जनवरी १८६२ ई० को लखनऊमें उत्पन्न हुए। आपके पिता सैयद फज़लहुसेन अवधके अंतिम वादशाहके विश्वास-पात्रोमें थे। आपके पूर्वज शम्सउद्दीन अल्तमश वादशाहके शासन-कालमें ग़ज़नीसे आकर दिल्लीमे आवाद हुए, फिर वहाँसे फ़ैज़ावाद चले गये। ५ वर्षकी अवस्यासे अरवी-फारसीका अभ्यास आरभ हुआ। मैट्रिकतक अंग्रेजी पढी। हकीमीकी ओर भी रुचि थी, अत. उसका भी अध्ययन किया। कुछ दिनो अग्रेज़ीके अध्यापक रहे। जून १८८३ में दीवानी अदालतमें नौकरी की और १९२२ ई० मे पेशन लेकर साहित्य-सेवामे लीन रहे। १९५० ई० मे आपका निघन हो गया।

जामेआ मिल्लियाके वार्पिकोत्सवोपर हुए मुशाइरोमें दो वार आपके मुखारविन्दसे कलाम सुननेका सौभाग्य हमें भी प्राप्त हुआ है। यह संभवतः १९३५ और १९३६ की वात है। आपकी शरीफाना वज़अ-कितअ् और वोलने-चालने, उठने-वैठनेका ढग इतना आकर्षक था कि आज भी वह दृश्य ज्यों-का-त्यो आँखोंके सामने फिर रहा है। आपके हमराह आपके छोटे भाई 'ज़रीफ' लखनवी भी थे। जिनकी मिज़ाहिया गजलोने दर्शकोको हँसाते-हँसाते लोट-पोट कर दिया था।

सैयद 'सफी'का शाइरीमें तो उस्तादाना मर्तवा है ही, वे मानवताके नाते भी वहुत ऊँचे थे। १८७५ ई० से उन्होने शाइरी प्रारंभ की थी।

वे किसीके शिष्य नही थे। स्वय अभ्यासद्वारा ही वे इतने बढ़े थे। 'अज़ीज'-जैसे ख्याति प्राप्त उस्ताद आपके ही शिष्य थे।

आपका एक ग़ज़लोका, दो नज्मोके दीवान छप चुके है। आपकी क़ौमी नज्मोने बहुत ख्याति पाई, और उसके एवज़में मुस्लिम-समाजने आपको 'लिसान-उल-कौम' (कौमकी जबान) की उपाधि भेट की। आप लखनऊकी साहित्यिक सभा 'बहारे-अदब' के एक अर्सेतक प्रधान रहे। आपने फ़ारसीमे भी कलाम कहा है। लखनऊके उस्तादोमे आपका मर्तबा बहुत ऊँचा था। आपके कितने ही शिष्योके दीवान प्रकाशित हो चुके है।

आपने लखनवी रगको नया आबो-रग दिया और उसे कृत्रिमतासे हटाकर वास्तविकताके समीप लाये। आपके कलाममे रगीनी, भाषामें लोच और भावोमे प्रफुल्लता पाई जाती है। आपके कलामसे यह अनुमान लगाना कि यह किसी लखनवीका कलाम है, मुश्किल है।

आपने पहले-पहल यह शेअर कहा—

निकले है तीन नाम मिरे तिफ़्ले-अश्कके[1]।
नूरे-निगाह[2], लख्ते-जिगर[3], यादगारे-दिल[4]॥

यहाँ चन्द गज़लोके अशआर दिये जा रहे है—

कैसी-कैसी सूरतें ख्वाबे-परीशाँ[5] हो गईं?
सामने आँखोंके आईं और पिन्हाँ[6] हो गईं॥

जोर ही क्या था जफ़ाए-बाग़बाँ[7] देखा किये।
आशियाँ[8] उजड़ा किया, हम नातवाँ[9] देखा किये॥

---

[1]आँसूरूपी पुत्रके; [2]नेत्र प्रकाश; [3]कलेजेका टुकडा (पुत्र); [4]हृदयकी स्मृति; [5]बुरे स्वप्न; [6]ओझल; [7]मालीके अत्याचार; [8]घोसला, नीड़, [9]दुर्बल, अशक्त ।

कुछ रेज़ाहाए-शीशए-दिल[1] भी हैं फ़र्शे-राह[2]।
रखिए क़दम ज़रा दमे-रफ़्तार[3] देखकर॥

फ़लकतक[4] हमने माना आहमें कूवत[5] है जानेकी।
मगर फ़ुर्सत कहाँ इस गमकदेमें[6] सर उठानेकी॥

ज़िंदगी मुझ पर-शिकस्ताकी[7], असीरे-दामकी[8]?
यूँ तो मेरी चीज़ है, लेकिन मेरे किस कामकी?

ज़िन्दगीका माहसल[9] क्या है बतादूँ मैं 'सफी'!
इन्तिज़ार उसका अभी तक जो बला आई नहीं॥

कसू-मपुरसीका[10] वोह आलम कि इलाही तौबा!
दम भी निकले तो नहीं पूछनेवाला कोई॥

मआले-ज़िंदगी[11] यह थी कि सुनकर वाकेआ मेरा।
रहा कुछ देर सन्नाटा-सा ऐवाने-सितमगरमें[12]॥

मैकदेसे चला गया मस्जिद।
अरे तौबा! यह क्या किया मैंने?

जो किस्मतमें जलना ही था, शमअ़ होते।
कि पूछे तो जाते किसी अंजुमनमें॥

बज़्मे-साक़ीमें ज़रा हुश्यार बैठें आज मस्त।
कल यहीं पहलूसे मेरा शीशए-दिल उठ गया॥

न ख़ामोश रहना मेरे हम-सफीरो[13]!
जब आवाज़ दूँ तुम भी आवाज़ देना॥

---

[1]दिल-रूपी शीशेके कण; [2]मार्गमें; [3]चलते समय, [4]आस्मानतक; [5]बल, शक्ति; [6]दु:खी स्थानमें; [7]पर टूटे हुए की; [8]जालमें फँसे हुएकी; [9]उद्देश्य; [10]अपेक्षाका; असहायावस्थाका, [11]जीवन-परिणाम; [12]अत्याचारीके महलमें; [13]एकही प्रकारकी बोली वालो, साथियो।

ग़ज़ल उसने छेड़ी मुझे साज़ देना।
ज़रा उम्रे-रफ़्ताको[1] आवाज़ देना॥

—आजकल फ़रवरी १९४६

तू भी मायूसे-तमन्ना[2] मेरे अन्दाज़में है।
जब तो यह दर्द पपीहे तेरी आवाज़में है॥

तालिबे-दीदपर आँच आये यह मंजूर नहीं।
दिलमें है वर्ना वोह बिजली जो सरे-तूर नहीं॥

दिलसे नज़दीक है, आँखोंसे भी कुछ दूर नहीं।
मगर इसपर भी मुलाक़ात उन्हें मंजूर नहीं॥

छेड़दे साज़े-अनलहक़[3] जो दुबारा सरे-दार।
बज़्मे-रिन्दाँमें[4] अब ऐसा कोई मन्सूर[5] नहीं॥

हमको परवाना-ओ-बुलबुलकी रक़ाबतसे[6] ग़रज़?
गुलमें वह रंग नहीं, शमअमें वोह नूर नहीं॥

कभी "कैसे हो सफ़ी?" पूछ तो लेता कोई।
दिल-देहीका[7] मगर इस शहरमें दस्तूर नहीं॥

दर्दे-आग़ाज़े-मुहब्बतका[8] अब अंजाम नहीं।
ज़िन्दगी क्या है, अगर मौतका पैग़ाम नहीं॥

नज़र हुस्न-आशना[9] ठहरी वोह ख़िलवत[10] हो कि जलवत[11] हो।
जब आँखें बन्द कीं तसवीरे-जानाँ[12] देख लेते हैं॥

वोह खुद सरसे क़दमतक डूब जाते हैं पसीनेमें।
मेरी महफ़िलमें जो उनको, पशेमाँ[13] देख लेते हैं॥

---

[1]बीती उम्रको; [2]निराश; [3]मैं ही सत्य (ईश्वर) हूँ का तान; [4]मद्यपोंमे; [5]सूफ़ी (देखें हमारा शब्दकोष); [6]प्रतिस्पर्द्धासे; [7]अर्थात् हृदयकी बात पूछनेका; [8]प्रारंभिक प्रेमके दर्दका; [9]सौन्दर्य्य पारखी; [10]एकान्त; [11]मजमअ, महफ़िल; [12]प्रियतमाका चित्र; [13]शर्मिन्दा।

'सफी' रहते हैं जानो-दिल फिदा[1] करनेपै आमादा[2]।
मगर उस वक़्त, जब इन्साँको इन्साँ देख लेते हैं॥

सुनेगा कौन? सुनी जायेगी 'सफी' किससे।
तुम्हारी राम-कहानी यह ज़िंदगी भरकी॥

इन्सानको उसने ख़ाकसे पाक[3] किया।
जी-हौसला-ओ-साहेबे-इद्राक[4] किया॥
पहले तो बनाया उसे गंजीनए-इल्म[5]।
फिर गंजको[6] पोशीदा-तहे-ख़ाक[7] किया॥

—शाइर मई-जून १९४५ ई०

क्योंकर यहाँ तुम्हारी तबीअ़त बहल गई।
इतनी ही ज़िंदगी हमें ऐ ख़िज़्र[8]! खल गई॥
जब एक रोज़ जानका जाना ज़रूर है।
फिर फ़र्क़ क्या वह आज गई, ख़्वाह कल गई॥

जब दम निकल गया ख़लिशे-ग़म[9] भी मिट गई।
दिलमें चुभी थी फाँस जो दिलसे निकल गई॥

फूल ऐ दश्ते-जुनूँ[10]! कौन चुने दामनमें।
तेरे काँटे ही बहुत हैं मेरे बिस्तरके लिए॥

इन्सान मुसीबतमें हिम्मत न अगर हारे।
आसाँसे वह आसाँ है, मुश्किलसे जो मुश्किल है॥
दुनियाकी तरक़्क़ी है, इस राज़से[11] वाबस्ता[12]।
"इन्सानके क़ब्ज़ेमें सब कुछ है अगर दिल है॥"

---

[1]न्योछावर, प्रदान; [2]प्रस्तुत, हाज़िर; [3]पवित्र, उच्च; [4]साहसी एवं विवेकी; [5]ज्ञान-भंडार; [6]भंडारको; [7]क़ब्रमें गाड़ दिया; [8]एक पैग़ाम्बर; [9]दुखोंकी फाँस; [10]उन्मादका वन; [11]भेदसे; [12]सबंधित।

कुछ भी न हर्फ़ कर सके हस्तीए-मुस्तआ़रमें[1]।
हो गई ख़त्म ज़िन्दगी मौतके इन्तिज़ारमें॥

खुलते ही आँख इश्क़ने हुस्ने-अदापै[2] जान दी।
आई क़ज़ा[3] शबाबमें[4], देखी ख़िज़ाँ बहारमें!
भूले हुए ज़हे-नसीब[5] अब भी जो याद आ गये।
फ़ातिहाको[6] आये कब, जब ख़ाक नहीं मज़ारमें॥

हमारी आँखसे जब देखिए आँसू निकलते हैं।
जिबींकी[7] हर शिकनसे[8] दर्दके पहलू निकलते हैं॥

ख़मोश रहने दो ग़मज़दोंको, कुरेदकर हाले-दिल न पूछो।
तुम्हारी ही सब इनायतें हैं, मगर तुम्हें कुछ ख़बर नहीं है॥
उन्हींकी चौखट सही, यह माना, रवा[9] नहीं बेबुलाये जाना।
फ़क़ीर उज़लतगुज़ीं[10] 'सफ़ी' है, गदाए-दर्योज़ागर[11] नहीं है॥

उफ़-री नासाज़िए-दिल[12], एक ज़माना गुज़रा।
ज़ोअ़फ़[13] अब तक वही डूबी हुई आवाज़में है॥

बेक़रारी दिले-बीमारकी अल्ला-अल्ला।
फ़र्शे-गुलपर[14] भी न आना था, न आराम आया॥

जौरे-दरबाँकी[15] तो कुछ भी न हुई तहक़ीक़ात।
मेरे ही सर मेरी फ़रियादका इलज़ाम आया॥

आईने-मुहब्बत[16] हैं बहुत बाइसे-तक्लीफ़[17]।
ऐ काश जहाँसे कोई यह रस्म उठा दे॥

---

[1]माँगी हुई ज़िन्दगीमें; [2]सौन्दर्यके हाव-भावोंपर; [3]मौत; [4]जवानीमें; [5]अहोभाग्य; [6]मृत्यु शोककी प्रार्थनाको, [7]माथेकी; [8]सिकुड़नसे; [9]उचित, मुनासिब; [10]एकान्तवासी; [11]दर-दरका भिखारी; [12]दिलकी बीमारी; [13]कमज़ोरी; [14]फूल-शैय्यापर; [15]पहरेदारके ज़ुल्मकी; [16]प्रेमके नियम; [17]कष्टके कारण।

शबे-निशातका[1] पिछला पहर था ऐ ग़ाफ़िल !
जिसे शबाब[2] समझता था, वह शबाब न था ॥

वोह आहे-सर्द[3] हूँ निकले जो एक टूटे हुए दिलसे ।
सरापा[4] दर्द हूँ और दर्दका खुद अपने दरमाँ[5] हूँ ॥

जो चीज़ नहीं बसकी फिर उसकी शिकायत क्या ?
जो कुछ नज़र आता है, अच्छा नज़र आता है ॥

क़फस ले उड़ूँ मैं हवा अब जो सनके ।
मदद इतनी ऐ बाले-परवाज़[6] देना ॥

—केसरकी क्यारी

१५ नवम्बर १९५१

द्वितीय संस्करणके लिए

वोह आलम[7] है कि मुँह फेरे हुए आलम[8] निकलता है ।
शबे-फुर्कतके ग़म झेले हुओंका दम निकलता है ॥

इलाही खैर हो उलझनपै-उलझन बढ़ती जाती है ।
न मेरा दम, न उनके गेसुओंका खम निकलता है ॥

कयामत ही न हो जाये, जो पर्देसे निकल आओ ।
तुम्हारे मुँह छुपानेमें तो यह आलम[9] निकलता है ॥

शिकस्ते-रंगे-रुख[10], आईनये-बेताबिए-दिल[11] है ।
ज़रा देखो तो क्योंकर ग़मज़दोंका दम निकलता है ॥

---

[1]आनन्दमयी रात्रिका; [2]युवकोचित सौन्दर्य; [3]ठंडी साँस; [4]पूर्णरूपेण [5]इलाज; [6]उडनेकी क्षमता रखनेवाले पर; [7]दशा, हालत; [8]संसार-दुनिया, [9]भेद-स्थिति, [10]मुँहकी उदासी, [11]बेचैन दिलका दर्पण है ।

निगाहे-इल्तिफ़ाते-मेहर[1] और अन्दाज़े-दिल[2]-जोई।
मगर इक पहलुए-बेताबिये-शबनम निकलता है॥

'सफ़ी' कुश्ता[3] हूँ नापुरसिशोंका[4] अहले-आलम[5] की।
यह देखो कौन मेरा साहिबे-मातम[6] निकलता है॥

—नकूश फरवरी १९५६ ई०

ज़ोर ही क्या था जफ़ाए-बाग़बाँ देखा किये।
आशियाँ उजड़ा किया, हम नातवाँ देखा किये॥

---

[1]कृपादृष्टि; [2]हृदयको सान्त्वना देनेका ढग; [3]मिटा हुआ; [4]उपेक्षाओंका, अनादरका; [5]दुनियावालों द्वारा; [6]संवेदक।

मिर्ज़ा मुहम्मदहादी 'अज़ीज़'का जन्म लखनऊमें १८८२ ई० में हुआ। आपके पूर्वज शीराज़के रहनेवाले थे। वे वहाँसे आकर पहले कश्मीरमें रहे, फिर स्थायी रूपसे लखनऊमें बस गये। आपके वंशमें कई पीढियोंसे योग्यतम विद्वान् होते आये हैं। आपके पिता अ़ल्लामा मिर्ज़ा मुहम्मदअ़ली आपको सात वर्षका छोड़कर जन्नतनशीन हो गये थे। ५ वर्षकी आयुमें आपका विद्यारम्भ हुआ और अ़रबी-फारसीकी पूर्ण योग्यता प्राप्त की।

अजीज़ सादगी-पसन्द, बेतकल्लुफ और मिलनसार थे। विनयी, सहृदय और हास्यप्रिय थे। आपकी शाइरीके सम्बन्धमें हज़रत साकिब लखनवी फर्माते हैं—"अजीज़की तबिअ़त निहायत पुरदर्द वाकअ़ हुई है। हर शेअ़रसे हसरतका इज़हार होता है। कमाल यह है कि आपने मीरो-ग़ालिबकी तक़लीद (अनुसरण) करते हुए अपने खास रंगको हाथसे नहीं जाने दिया है। ज़बानकी सफाई, मज़ामीनकी रफअ़त (उड़ान) और बयानकी सलासत (प्रवाह) मअ़नी आफ़रीनी और नुक्तारसी (सार-गर्भितता)से दस्तोगरेबाँ है।"[1]

अजीज़के बहुत-से शिष्योंमें-से कुछ ख्यातिप्राप्त शाइर ये हैं—'असर' लखनवी, 'जोश' मलीहाबादी, 'आशुफ्ता' लखनवी, 'जिगर' बरेलवी,

---

[1]गुलकदा : दीबाचा पृ० १६।

'रशीद' लखनवी, जगमोहनलाल 'रवाँ', 'शेफ़्ता' लखनवी, 'कैफ़ी' लखनवी।

इनके ख्यातिप्राप्त शिष्योंमे-से 'असर' लखनवीका परिचय तो इसी भागमें दिया गया है। शेष जो इनमे-से बहुत ख्यातिप्राप्त है, उनका उल्लेख शाइरीके नये दौरमे क्रमानुसार किया जायगा।

'अ़ज़ीज़' हज़रत 'सफ़ी' लखनवीके शिष्य थे, परन्तु गुरु-शिष्यमें किसी बातको लेकर नाचाकी हो गई थी। आपकी कविताओंका दीवान 'गुलकदा' १९३६मे प्रकाशित द्वितीय संस्करण हमारे समक्ष है। इसमे आपकी १९०५से १९१८ तककी गजलोका सकलन १४४ पृष्ठोमे किया गया है। उनमे-से १२१ अशआर चुनकर पेश किये जा रहे है। २ अगस्त १९३५ को आपका निधन होगया।

अपने मरकज़की[1] तरफ़ माइलेपरवाज़[2] था हुस्न[3]।
भूलता ही नहीं आ़लम[4] तेरी अँगड़ाईका॥

जो यहाँ महवेमासिवा[5] न हुआ।
दूर उससे कभी ख़ुदा न हुआ॥
अ़हदमें[6] तेरे ज़ुल्म क्या न हुआ।
ख़ैर गुज़री कि तू ख़ुदा न हुआ॥
यूँ-ही घुट-घुटके मिट गया आख़िर।
उक़दए-दिल[7] किसीको वा[8] न हुआ॥
न मिली दादे-ज़ब्तेइश्क़ 'अ़ज़ीज़'!
वोह कभी सब्रआज़मा न हुआ॥

---

[1]केन्द्रकी, लक्षकी; [2]उडनेमें दत्तचित्त; [3]रूप; [4]मत्तता, शोभा, अन्दाज़; [5]ईश्वरसे अतिरिक्तमे लीन; [6]जमानेमे, अधिकारके दिनोमें; [7]दिलका भेद; [8]प्रकट।

ख़याल तक भी उधर ऐ ख़ुदा नहीं जाता।
मरीज़ेगमका तसव्वुर[1] किया नहीं जाता॥
बयाने-हुरमते-सहबा[2] सही, मगर ऐ शेख़!
तेरी ज़बानसे उसका मज़ा नहीं जाता॥

हर इक क़दम तेरे कूचेमें एक आलम है।
कहाँतक अब मैं चलूँगा? चला नहीं जाता॥
हुजूमे-शौकका[3] बस मुख़्तसर यह क़िस्सा है।
कि जो मैं चाहता हूँ, वह कहा नहीं जाता॥

ज़बाँ बयान करे मुद्दआ-ए-दिल[4] क्योंकर?
किसीका हाल किसीसे कहा नहीं जाता॥
वोह सरज़मीन जहाँपर मज़ार है मेरा।
उधरसे अब कोई दर्द-आश्ना नहीं जाता॥

कुछ इन्तहा[5] भी है? लो, बन्द हो गईं आँखें।
निगहने काम किया जबतक इन्तिज़ार किया॥
सितम है लाशपर उस बेवफ़ाका यह कहना—
"कि आनेका भी किसीके न इन्तिज़ार किया॥"
किसीने नज़अकी[6] इस तरह गुत्थियाँ सुलझाईं।
सिरहाने बैठके हर साँसका शुमार किया॥
कुछ इसमें मसलहते-ज़ौके-ज़िन्दगी[7] भी थी।
'अज़ीज़' वअ़देका उसके जो एअ़तबार किया॥

दिलको जहाँ सुकून[8] हुआ जिस्म सर्द था।
वोह मुद्दते-हयात[9] थी जब तक कि दर्द था॥

---

[1]ध्यान; [2]अंगूरी शराबकी प्रशंसा; [3]अभिलाषाओंकी भीड़का; [4]हृदयाभिलाषा; [5]हद, सीमा, अन्त; [6]मृत्युकी अन्तिम घड़ियोंकी; [7]जीवनाभिरुचिका हित; [8]सन्तोष, चैन; [9]जीवन-काल।

हर आह खींचती है तनावें फ़लककी अब।
वोह दिन गये कि हौसिलए-ज़ब्ते-दर्द[1] था॥
मुड़-मुड़के देखता था मैं वहशतमें बार-बार।
कोई तो मेरे साथ बयाबाँ-नवर्द[2] था॥

गिला[3] क़िससे? जब उसको इज़्तिराबे-दिल[4] पसन्द आया।
ख़ुदा ही को अज़लसे[5] शेवए-बिस्मिल[6] पसन्द आया॥
रगे-जाँने[7] वहीं की बढ़के हिम्मतकी क़दमबोसी[8]।
जहाँ हमको ख़याले-दूरिये-मंज़िल[9] पसन्द आया॥
ज़रा यह इन्तिख़ाब[10] उसकी निगाहेनाज़का[11] देखो।
कि आँसू बन रहा था जो वह ख़ूने-दिल पसन्द आया॥

आगे ख़ुदाको इल्म है क्या जाने क्या हुआ।
बस उनके मुँहसे याद है उठना नक़ाबका॥
मिन्नतकशे-असर[12] न हुई शुक्र है दुआ।
बढ़ता बगर्ना शौक दिले-बे-हिजाबका[13]॥

ऐ सकूनेमौत[14]! कोई जागनेकी हद भी थी?
सुबहे-हिज्र[15] आख़िर मेरी आँखोंमें ख्वाब[16] आ ही गया॥
है मुहब्बतकी नज़रमें क्या मज़ा ख़ुद देख लो।
चार आँखें जब हुईं तुमको हिजाब[17] आ ही गया॥

---

[1]दर्दको छिपानेका साहस; [2]अरण्यारोही; [3]शिकायत; [4]दिल का तड़पना; [5]अनादि कालसे, मनुष्य-सृष्टिके प्रारम्भसे; [6]अर्द्धमृतकपन; घायलपन; [7]जीवनकी नसोंने; [8]पाँव चूमे; [9]लक्ष्यकी दूरीका विचार; [10]चुनाव; [11]गर्वीले नेत्रोंका, मग्रशूकाना नज़रका कमाल; [12]प्रभावका आभारी, असरवाली; [13]निर्लज्ज हृदयका; [14]मृत्युकी शान्ति; [15]विरहके प्रभातमें; [16]नींद; [17]हया, शर्म।

किया हैं किसने याद अल्लाहो अकबर! अब असीरोंको[1]!
कि तोड़ा जा रहा है कुफ़्ल[2] जंगआलूदा[3] ज़िन्दाँका[4]॥

उनसे करता है दमे-नज़अ्[5] वसीयत यह 'अज़ीज़'—
"ख़ल्क़[6] रोयेगी मगर तुम न परीशाँ होना॥"

विसाले-दाएमी[7] क्या है? शबे-फ़ुरक़तमें[8] मर जाना।
क़ज़ा[9] क्या है? दिलीजज़्बातका[10] हदसे गुज़र जाना[11]॥
निसार[12] इस बचपनेके और इस नाज़ुक दिमाग़ीके।
सियह-बालोंसे अपने नींदमें ख़ुद आप डर जाना॥
इन्हीं टूटी हुई क़ब्रोंमें है एक तुरबते-बेकस[13]।
ज़रा मुँह फेर लेना जानेवाले जब उधर जाना॥

झेंपते क्यों हो, जो सर-ता-ब-क़दम[14] देखते हैं।
यह कोई और नहीं है, तुम्हें हम देखते हैं॥

उसकी शामे-ग़मपै सदके हो मेरी सुबहे-हयात।
जिसके मातममें तेरी ज़ुल्फ़ें परीशाँ हो गईं॥

वाइज़! तेरी ज़बानसे सुनता तो ज़िक्रे-हूर[15]।
इतना ख़याल है कि कोई बदगुमाँ न हो॥

ख़ुदा दुश्मनको दिखलाये न यूँ बीमारकी हालत।
मगर अब आ गये हो तुम तो दमभर देखते जाओ॥

---

[1]बन्दियोंको, [2]ताला, [3]जंग लगा हुआ; [4]कारागृहका; [5]मृत्युके समय; [6]जनता; [7]स्थायी (अमर) मिलन; [8]विरह-रात्रिमें; [9]मृत्यु; [10]हृदयाभिलाषाओंका; [11]सीमा लाँघना; [12]न्योछावर; [13]असहायकी समाधि, [14]सरसे पाँवतक, [15]स्वर्गस्थ अप्सराओंका वर्णन।

फहते हैं चारागरोंसे[1] दमे-नज़अ[2] —
"है यह जागा हुआ सो लेने दो॥"
ज़ब्ते-गिरयाका[3] न दो हुक्म मुझे।
दिलमें कुछ दाग है धो लेने दो॥

ख़ुदा जाने दिले-नाकाम, क्या हो?
हमारा देखिए अंजाम क्या हो?

कहके बीमारसे यह बुझ गई शमअ—
"रात होती है यूँ बसर देखो॥"

दैरोकअबेमें[4] फ़र्क क्या है 'अज़ीज़'!
सिर्फ़ पाबन्दियाँ हैं मजहबकी॥

सारी ख़िलक़त[5] हश्रमें[6] अपनी तमाशाई हुई।
दादख्वाहीको[7] गये थे उल्टी रुसवाई हुई॥

वाँ नामावरकी[8] ख़ाकका भी अब पता नहीं।
बैठे हैं इन्तिज़ारमें हम याँ जवाबको॥

मुझे वे इख़्तियार आता है रोना।
न पूछो ज़िन्दगी क्योंकर बसर की॥

मेरे रोनेपै यह हँसी कैसी?
ऐ सितमगर! यह दिल्लगी कैसी?

इक ख़ुदाई जान देनेके लिए तैयार है।
क्या क़यामत है कमरसे बाँधना शमशीरका॥

---

[1]चिकित्सकोसे; [2]मृत्युके समय; [3]विलाप रोकनेका, आँसू पीनेका; [4]मन्दिर-मस्जिदमें; [5]जनता; [6]ईश्वरीय न्यायालयमें; [7]न्याय चाहनेको; [8]सन्देशवाहककी।

हम तो दिल ही पर समझते थे बुतोका[1] इख़्तियार।
नसबे-कअबेमें[2] भी अबतक एक पत्थर रह गया॥
दिलकी बेचैनी कोई देखे ज़रा इस बज़्ममें[3]।
जब कोई आया तो मैं ज़ानू[4] बदलकर रह गया॥
जा चुके अहबाब[5] रोकर उठ चुकी मातमकी सफ़[6]।
आप कब आये कि जब ख़ाली मेरा घर रह गया॥
देख लो दुनिया चलो शहरे-ख़मोशाँ[7] अब 'अज़ीज़'!
क़ाबिले-दीद[8] इक यही दिलचस्प मंज़र[9] रह गया॥

रब्ते-देरीनासे बाक़ी है तअ़ल्लुक़ फिर भी।
लाख कअबेसे बनाये कोई बुतख़ाना जुदा॥

कब पूछते हैं आके मिज़ाजे-मरीज़े-इश्क़।
जब बदनसीब बातके क़ाबिल नहीं रहा॥*

मेरा मातम फक़त था रौनक़े-ग़मख़ानए-हस्ती।
रही आबाद दुनिया भी रहा जबतक कि ग़म मेरा॥
'अज़ीज़' अब कौन-सा वक़्त आ गया? क्या होनेवाला है?
कि वोह ख़ुद पूछते हैं हाल-आकर दम-ब-दम मेरा॥

ख़ुदाका काम है यूँ तो मरीज़ोंको शिफ़ा[10] देना।
मुनासिब हो तो इकदिन हाथसे अपने दवा देना॥
शिगाफ़[11] इक हो चला तुरबतमें[12] जाँ आने लगी मुझमें।
ज़रा ऐ जानेवाले! क़ब्रपर फिर मुस्करा देना॥

---

[1]मअ़शूक़ोका; [2]काबेकी नीवमें; [3]महफ़िलमें; [4]घुटने; [5]इष्ट-मित्र; [6]रुदन करनेवालोंकी पंक्ति; [7]मरघटकी ओर; [8]दर्शनीय; [9]दृश्य; [10]आरोग्यता; [11]सूराख़; [12]क़ब्रमें।

*कहते हैं जब रही न मुझे ताक़ते-सुख़न।
"जानूँ किसीके दिलकी मैं क्योंकर कहे बग़ैर॥" —ग़ालिब

मेरी मैयतपै किस दअ़वेसे वोह कहते हुए आये—
"हटा देना ज़रा इन रोनेवालोंको हटा देना॥"

पैदा वह बात कर कि तुझे रोएँ दूसरे।
रोना ख़ुद अपने हालपै यह ज़ार-ज़ार क्या?
रुक जाये बात-बातपर जिस नातवाँकी साँस।
ऐसे मरीज़े-ग़मका भला एअ़तबार क्या॥

यह कहके लगाई है किसी शोख़ने ठोकर—
"देखूँ तो कोई कब्रसे क्योंकर न उठेगा॥"

बढ़ गये कुछ और उनके हौसले।
रोनेवालोंको हँसाना ही न था॥
कल ज़माना ख़ुद मिटा देता जिन्हें।
ऐसे नक़्शोंको मिटाना ही न था॥
वेपिये वाइज़को मेरी रायमें।
मस्जिदे-जामअ़में जाना ही न था॥

नया-नया जो किसी शोख़का शबाब[1] आया।
उठाके आईना देखा तो ख़ुद हिजाब[2] आया॥
तमाम अंजुमने-वअ़ज़[3] हो गई वरहम[4]।
लिये हुए कोई यूँ साग़रे-शराब आया॥
मरीज़े-हिज्रकी[5] ऐसोंको क़द्र[6] क्या होगी?
उठे हैं नींदसे जब सरपै आफ़ताब[7] आया॥

राह जाते-जाते दर्दे-दिल उसको सुना दिया।
फिर कुछ ख़बर नहीं कि जवाब उसने क्या दिया।

---

[1]यौवन, रूप; [2]लाज; [3]उपदेश-सभाएँ; [4]तितर-बितर, जनशून्य; [5]वरह-रोगीकी; [6]चिन्ता; [7]सूर्य।

बेताब होके ज़ोअ़फ़में[1] भी आँख खोल दी।
जब गोशए-नकाब[2] किसीने हटा दिया॥

वोह दिले-बेख़ुद ख़ुदा बख़्शे मुझे याद आ गया।
जब कोई अँगड़ाइयाँ लेता हुआ सोकर उठा॥
हँस रहा है देखकर यह कौन तुझको देरसे।
सर उठा ऐ दिलसे बातें करनेवाले सर उठा॥

क्या बताऊँ उसकी चश्मे-नाज़का आ़लम 'अ़ज़ीज़'!
मैकदेमें हुस्नके छलका हुआ पैमाना था॥

जो मैं ज़िन्दा भी हो जाता तो फिर फ़ुरक़तमें[3] मर जाता।
वोह आते थे तो उनको लाशपर आने दिया होता॥
लहू रोती है चश्मे-इबरत[4] इस बेदादे-गुलचींपर[5]।
अभी फूलोंको अपने रगपर आने दिया होता॥

ख़ाक क्यों छान रहा है बतला।
था भी दिल पास तेरे याद तो कर॥
वोह तसल्ली ही सही ऐ सैयाद!
कुछ मुअ़य्यन[6] मेरी मीआ़द तो कर॥

ग़ाफ़िल फ़रेफ़्ता[7] है चमनकी बहारपर।
गुल हँस रहे हैं ह़स्तिए-बे-एअ़तबारपर[8]॥
वअ़दा किया था "ख़्वाबमें सूरत दिखाएँगे"।
सोया किया हमेशा इसी एअ़तबारपर॥
उठनेको तेरे दरसे उठा तो मगर न पूछ।
जो कुछ गुज़र गई दिले-बेइख़्तियारपर॥

---

[1]कमजोरीमे, [2]नकाबका कोना; [3]विरहमें, [4]नसीहत लेनेवाली आँख; [5]फूल तोडनेवालेके ज़ुल्मपर; [6]निर्धारित; [7]अनुरक्त, [8]क्षणभगुर जीवनपर।

यह अपना-अपना मुकद्दर यह अपना-अपना नसीब।
ज़मानेभरको हँसाये, हमें रुलाये बहार॥
कलीसे फूल बना, फूलसे बनी मिट्टी।
वोह इब्तिदाए-बहार[1] और यह इन्तिहाए-बहार[2]॥

काश! सुनते वोह पुर असर बातें।
दिलसे जो की थीं उम्रभर बातें॥

क़फ़समें[3] जी नहीं लगता है आह फिर भी मेरा।
यह जानता हूँ कि तिनका भी आशियाँमें[4] नहीं॥

भला ज़ब्तकी भी कोई इन्तिहा है?
कहाँतक तबिअ़तको अपनी सम्भालें?

मर गया बीमारे-उल्फ़त उनसे इतना कहके बस—
"जाइए अब आपसे कोई गिला बाक़ी नहीं॥"

लो वह भी सर झुकाये हुए साथ-साथ है।
यूँ भी किसीकी लाश उठी है ज़मानेमें॥
वोह दिन गये 'अ़ज़ीज़' कि हँसते थे रात-दिन।
मिलता है चैन दिलको अब आँसू बहानेमें॥

रूहको जिस्ममें ग़नीमत जान।
एअ़तबार इसका क्या? रही न रही॥

यकीन है मुझे मुलाकात उससे हो जाये।
तेरी तलाशमें पहले जो आप खो जाये॥

---

[1] बहारका प्रारम्भ; [2] बहारका अन्त; [3] पिंजरेमें; [4] घोंसलेमें।

करते 'अज़ीज़' नाज़िश[1] रहमतपर उसकी फिर क्यों ?
तअ़ज़ीर[2] भी वोह देता जब हम गुनाह करते ॥

शर्म कि उसने मुझको गलेसे लगा लिया।
मायूसिये-निगाह[3] अजब काम कर गई ॥

याद आ ही जाता है कभी नासेहका[4] कौल भी—
"सब कीजिए जहाँमें मुहब्बत न कीजिए ॥"

कहती है रूह[5] "आई है जितनी कि हिचकियाँ—
उतनी ही मैंने ठोकरें खाई है राहकी ॥"

महशरमें[6] उनको देखके अल्लाहरी खुशी।
तरदीद[7] कर रहा हूँ खुद अपने गवाहकी ॥
उड़ती हुई यह खाक, परेशान यह हवा।
तशरीह[8] है 'अज़ीज़'के हाले-तबाहकी ॥

देखकर जानिबे-बिस्मिल[9] वह किसीका कहना—
"खुद-ब-खुद उसके तड़पनेपै हँसी आती है ॥"

लाख आबादियाँ निसार[10] इसपर।
अल्लाह-अल्लाह यह किसकी तुरबत[11] है ?
जिस तरह चाहो दरसे[12] उठवा दो।
एक बेकसकी[13] क्या हकीकत है ॥

उनको सोते हुए देखा था दमे-सुबह कभी।
क्या बताऊँ जो इन आँखोंने समाँ देखा है ॥

---

[1]गर्व; [2]दण्ड, [3]निराश दृष्टि; [4]नसीहत देनेवालेका; [5]आत्मा; [6]ईश्वरीय न्यायालयमे; [7]विरोध, असत्य सिद्ध; [8]भाष्य; [9]घायलकी ओर; [10]न्योछावर; [11]समाधि; [12]दरवाज़ेसे; [13]असमर्थकी।

कोई इस बेकसीसे रोता है?
इश्क़के दिलमें दर्द होता है॥
जिसके मरनेकी हो ख़ुशी तुमको।
ऐसी मय्यतमें[1] कौन रोता है?

ताबूतको[2] अज़ीज़के आहिस्ता ले चलो।
टुकड़े सब उस शहीदे-मुहब्बतकी लाश है॥

मुहब्बतके जरीदेसे[3] हमारा नाम कट जाता।
तो इतनी सब्रकी कूवत[4] भी रुख़सत हो गई होती॥
अभी तहतक हक़ीक़तकी नज़र पहुँची नहीं ज़ाहिद[5]!
नज़र बुनियादमें कअ़बेकी इक बुतख़ाना आता है॥
ख़ुदा जाने वोह क्यों शर्माके उठ जाते हैं महफ़िलसे?
क़रीबे-शमअ़ जब परवानेपर परवाना आता है॥

बालींपै[6] मेरी कहके किसीने यह खोले बाल—
"देखें तो इम्तियाज़[7] उसे शामो-सहरमें[8] है॥"

मंज़रे-जज़्बात[9] है ख़िलवतसराए-दैर[10] भी।
कअ़बेवालो! फ़र्ज़ है तुमपर वहाँकी सैर भी॥

हम उसी ज़िंदगीपै मरते हैं।
जो यहाँ चैनसे बसर न हुई॥

दिलने दुनिया नई बना डाली।
और हमें आजतक ख़बर न हुई॥

---

[1]अर्थीपर; [2]अर्थीको; [3]प्रेमकार्यालयसे; [4]शक्ति; [5]विरक्त, परहेजगार; [6]सिरहाने; [7]पहचान, होश; [8]सुबह-शाममें; [9]भावुक दृश्य; [10]मन्दिर का एकान्त स्थान।

दमे-आख़िर लिखे थे जिसमें अपने तजरुबे तुमको।
वोह ख़त्ते-शौक़ देखूँ किसके-किसके काम आता है?

यह कहके बज़्मे-नाज़में इक जाम पी लिया।
"कबतक रखें उमीद शराबे-तहूरकी[1]॥"
होता नहीं है कोई ज़मानेमें क्या जवाँ।
अल्लाह कोई हद है तुम्हारे ग़ुरूरकी॥

हिफ़ाज़त करनेवाले ख़िरमनोंके[2] मुतमइन[3] बैठें।
तजल्ली बर्क़की[4] महदूद[5] मेरे आशियाँ[6] तक है॥

यह कहके ख़त्म शमअ़ने की मुद्दते-हयात—
"कबतक अकेला क़ब्रपर रोया करे कोई॥"

अँगड़ाई लेके किसने यह चटकाई उँगलियाँ?
दो हिचकियोंमें ख़त्म जो बीमार हो गया!

हूँ आ़लमे-हैरतमें जीता हूँ न मरता हूँ।
अब दिलकी यह हालत है हँसते हुए डरता हूँ॥

चुटकियाँ लेकर न पूछो दर्दे-दिल कुछ कम हुआ?
जब हटाया हाथ तुमने फिर वही आ़लम हुआ॥
मर गया था मैं नज़ाकत देखकर जिनकी 'अ़ज़ीज़'।
हैफ़ उन्हीं हाथोंसे महफ़िलमें मेरा मातम हुआ॥

'अ़ज़ीज़' इस क़दर हमने सिज्दे किये।
ख़ुदा उनको आख़िर बना ही दिया॥

---

[1]पवित्र शराबकी; [2]खेतोंमें पड़े हुए अन्नके ढेरके, [3]शान्तिसे, इत्मीनानसे; [4]बिजलीकी कौन्द, [5]सीमित; [6]घोंसला।

इशरतकदेको[1] ख़ानए-वीराँ[2] बनाएँगे।
छोटा-सा अपने घरमें बयाबाँ बनाएँगे॥

माना दलीलेसौदा[3], गर है फ़िज़ूल बकना।
दीवाना था अगर मैं नासेहको क्या हुआ था?

बैठे हैं दालोंपै वोह शिकवोंके दफ्तर हैं खुले।
ऐ अजल! फिर जा कि मरनेकी हमें फ़ुर्सत नहीं॥
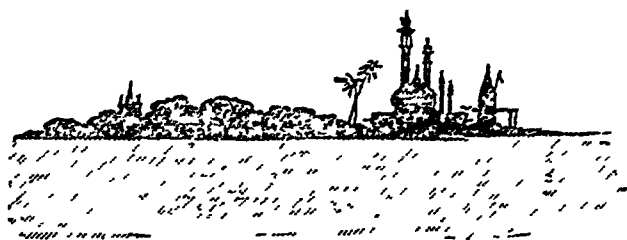
जेहनमें आया न फ़र्के-इम्तियाज़ी[4] आजतक।
मुद्दतों देखा है हमने कअ़बा भी और दैर भी॥

१३ दिसम्बर १९५० ई०

---

[1]सुखनिवासको; [2]वीराना, उजड़ा घर; [3]पागलपनकी पहचान; [4]मुख्य भेद, खास फ़र्क।

मुंशी नौवतराय 'नज़र' लखनऊके कायस्थ परिवारमें १८६६ ई० में उत्पन्न हुए और १९२३ ई० में स्वर्गस्थ। मध्यवर्ती युगके प्रसिद्ध महाकवि 'मुस्हफी'[1] की शिष्य परम्परामें उत्पन्न आगा 'मज़हर' के १८८४ ई० में शिष्य वने। आपका समस्त जीवन भरण-पोषणकी चिन्ताओं और इष्ट-वियोगमे विलखते हुए व्यतीत हुआ। कलमके मज़दूर थे। १८९७ ई० में आपने 'खदगे-नज़र' मासिक पत्र प्रकाशित किया, जो कि अर्थाभावके कारण सात वर्ष वाद वन्द कर देना पडा। १९०५ ई० में आप कानपुरके 'ज़माना' मासिक पत्रके सपादकीय विभागमें चले गये। वहाँसे १९१० मे प्रयाग जाकर इण्डियन प्रेससे 'अदीव' प्रकाशित किया। प्रयागमें एक वर्ष रहे, फिर कुछ दिन वाद 'ज़माना' आफिसमें रहे। कुछ दिनों वाद 'अवध' लखनऊ की सपादकी मिल गई थी।

उदर-पोपणके लिए इधर-उधर मारे-मारे फिरने और घोर परिश्रमके कारण स्वास्थ्य चौपट हो गया। स्वासके भी पुराने रोगी थे।

'नज़र' आर्थिक चिन्ताओंके साथ-साथ सन्तानवियोगसे भी पीडित रहे। लडका कोई हुआ नही। एक लडकी, एक नवासा, एक वूढी माँ

---

[1] मुस्हफीका परिचय और कलाम शेर-ओ-सुखन प्रथम भागमे दिया जा चुका है।

घरकी जीनत थे। नवासेको प्यार-दुलार करके समस्त ग़मोको भुलाये रहते थे। भाग्यको यह सुख भी सह्य न हुआ। नवासा भी उनकी गोदसे छीन लिया।

थमो-थमो कि इस उजड़े मकाँका था यह चिराग़।
बहारपर था इसी नौनिहालसे[1] यह बाग़॥
न होगा अब मुझे हासिल कभी जहाँमें फराग़[2]।
तमाम उम्र दिले-नातवाँ[3] है और यह दाग॥
फ़ुग़ाने-बुलबुले-जाँ[4] दिलके पार होती है।
'नज़र'के बागसे रुख़सत बहार होती है॥

और सचमुच उनके घरसे बहार रुख़सत हो गई। थोड़े दिन बाद बूढ़ी माँ भी चल बसी। पडोसमे एक बच्चा था, उसको लाड-प्यार करके साथ सुलाके नवासेके गमको भुलानेका प्रयत्न करने लगे तो एक रोज़ वह भी छतसे गिर कर मर गया। 'नज़र' इस सदमेको बर्दाश्त न कर सके और स्वयं भी यह शेअ़्र कहकर इस व्यथा भरी ज़िन्दगीसे किनारा कर गये—

ऐ इनक़लाबे-आ़लम! तू भी गवाह रहना।
काटी है उम्र हमने पहलू बदल-बदलकर॥

'नज़र' का कलाम व्यथासे ओत-प्रोत है। आप शाइर ही नही, अच्छे आलोचक और पत्रकार भी थे। आपकी कलमी तसवीर रशीदहसन साहब यूँ खीचते है—

"नज़र" मियाना कद थे। दुबले-पतले, गन्दुमीरंग—लिबासमे सादगी, मिज़ाजमें नफासत, नमूदो-नुमाइशसे हद दर्जे मुज्तनिब[5]। गुरूरो-

---

[1]नवविकसित पौधेसे; [2]चैन; [3]निर्बल हृदय; [4]दिलरूपी बुलबुलकी आह, चीत्कार; [5]आत्म-विज्ञापनसे दूर।

तकव्वुर छूतक न गया था। 'नज़र' जितने अच्छे शाइर थे, उससे ज्यादा अच्छे इन्सान थे। जितने उम्दा शेअर कहते थे, वैसे ही खुशनवीस-ओ-मुसव्विर भी थे। शतरंजका भी शौक था।"

'नज़र' लखनऊके उस युगमे उत्पन्न हुए थे, जब कि वहाँ खारिजी[1] शाइरीका बोलबाला था। जिसकी वजहसे लखनऊ आजतक बदनाम है। गो वहाँ वर्त्तमान युगमे एक भी शाइर खारिजी रंगका अनुयायी नही है, और एक-से-एक बेहतर शाइर उत्पन्न करनेका लखनऊको सौभाग्य प्राप्त है। फिर भी पुराना दाग मिटाये नही मिटता। यह माना कि नज़रके युगमें खारिजी शाइरीके विरोधमें चारों तरफ आवाज़ें उठने लगी थी। लेकिन लखनऊके शाइरोंपर इस विरोधका बहुत कम असर हुआ था। प्रचलित परम्पराके विरुद्ध कहना हर-एकके वसकी बात नही। इसी विरोधके कारण 'यगाना' चगेज़ी-जैसा ज़बर्दस्त और निर्भीक शाइर तिरस्कृत और उपेक्षित करके बर्बाद कर दिया गया, तब सर्व-साधारणकी तो बिसात ही क्या थी?

'नज़र'की विशेषता यही है कि उन्होने उस वातावरणमे भी शुद्ध शाइरीके दामनको हाथसे नही छोड़ा। हज़रत रशीद हसन खाँ लिखते है—

"नज़र अपने मआसिर (समकालीन)से इसलिए मुम्ताज़ (श्रेष्ठ) हैं कि उन्होने माहौल-ओ-पसन्दे-ज़माना (वातावरण और जनताकी रुचि) को बिलकुल नही देखा। मज़ाक़े-आमियाना (आम जनताकी रुचि) की पैरवी करके फतवाए-उस्तादी-ओ-सुखनवरी (उस्तादी और शाइरीकी घर्मांशा) लेना गवारा नही किया, बल्कि रूहे-शाइरी (शाइरीकी आत्मा) को अपनाया। सस्ती शुहरतसे रू-कश होकर लताफते

---

[1] खारिजी अथवा लखनवी शाइरी क्या है, यह विस्तारपूर्वक 'शेरो-सुखन' प्रथम भागमें उल्लिखित हुआ है। पाँचवें भागमें भी सिहावलोकनमे ज़िक्र आया है।

ख़याल-ओ-सदाकते-वयानकी अकलीमपर तसर्रुफ (वास्तविक कलापर ध्यान केन्द्रित) किया। यह ज़रूर है कि 'नज़र'को इसकी कीमत वहुत गिराँ देनी पडी। यअनी लखनऊने अपना रवायती सुलूक (परम्परा-का व्यवहार) दुहराया। उनकी शाइरीकी तरफसे ऐसी आँखें फेर ली, जैसे कि वे शाइर ही नही थे। सदहा मुशाइरोको नुमायाँ किया, लेकिन 'नजर' का नाम लेना भी तौहीने-अदव (साहित्यका अपमान) समझा। आज आपको वहाँकी महफिलोमें सवका तज़किरा (इतिहास) मिलेगा। उनका भी जो किसी एअतवारसे इसके मुस्तहक (अविकारी) नही। लेकिन 'नजर' का नाम किसी उनवानके तहत भी (शाइर, आलोचक, पत्रकार, चित्रकार, आदिमे) न आयेगा। जैसे कि इस नामका कोई शाइर वहाँ गुज़रा ही नही। हद यह है कि आज कोई शख्स उनका मजमूअए-कलाम (शाइरीका सकलन) देखना चाहे तो नही देख सकता। कितना वड़ा अलमीया (दु.ख) है कि उस शख्सका दीवानतक मुरत्तव न हो सके, जो सही मअनोमे लखनऊके लिए निशानेराह (मीलका पत्थर) था, और इसलाहकी इब्तिदा करनेवाला। ऐसे शाइरका ज़िमनी तौरपर भी तज़किरा न आ सके जो मज़ाके-आमसे गुरेज़ाँ (सस्ती जनरुचिसे परे) था और 'मीर' का मोअतकिद (अनुयायी)।···'नज़र' की ना-कदरी लखनऊकी जिवींपर यादगारे-दाग रहेगी।

'नज़र'के कलाममें वोह सादगी और दर्द ज़रूर है जो मीर-ओ-दर्दका सरमाया है। 'नज़र'की ज़वानमें वेहद लोच है और तर्ज़े-अदामे वलाका सोजोगुदाज़। हर शेअ़र असरमें डूवा हुआ होता है। 'नज़र'के कलामकी एक वोह खुसूसियत, जो उन्हें अपने मआ़सिरीन (समकालीनो) से वुलन्दतर कर देती है, यह है कि तमाम कलाममें इब्तज़ाल-ओ-रकीक (ज़लील, हकीर, आ़म कमीनापन) की एक मिसाल भी नही मिल सकती। एक शेअ़र भी ऐसा नही मिलेगा, जिसमे मज़ाके-आमियानाका शाइवा भी हो। हद यह है कि कोई गज़ल ऐसी नही मिलेगी, जिसमे एक भी शेअर भर्तीका हो और

अपने मअ़यारसे गिरा हुआ। एक पैराय-ए-बयान भी ऐसा नही मिलेगा, जो कि उस ज़मानेके रंगसे मिलता जुलता हो। कही भी वस्लो-हिज्रका सोकियाना (बाज़ारी स्त्रियो सबधी) बयान नही मिलेगा, और एक जगह भी मुहमिल इस्तिआ़रात (न समझमे आनेवाली उपमाएँ) और फरसूदा तख़ैयुलात (घटिया कल्पनाओ) का परतव नज़र नही आयेगा। यह वोह ख़ूबी है जो हरेकको नसीब नही होती।"[1]

फ़ना[2] होनेमें सोजे-शमअ़की[3] मिन्नतकशी[4] कैसी ?
जले जो आगमें अपनी उसे परवाना कहते हैं॥

अभी मरना बहुत दुश्वार है ग़मकी कशाकशसे[5]।
अदा हो जायगा यह फ़र्ज़ भी फ़ुर्सत अगर होगी॥

मुआफ ऐ हमनशीं[6]! गर आह कोई लबपै आ जाये।
तबीअ़त रफ़्ता-रफ़्ता ख़ूगरे-दर्दे-जिगर[7] होगी॥

मुजस्सिम[8] दाग़े-हसरत[9] हूँ, सरापा नक़्शे-इबरतका[10]।
मुझे देखो! यही अंजाम है, आख़िरको उलफतका॥

सुन लो कि रंगे-महफिल कुछ मोअ़तबर[11] नहीं है।
है इक जबान गोया, शमए़-सहर[12] नहीं है॥

मुद्दतसे ढूंढ़ता हूँ मिलता मगर नहीं है।
वोह इक सकूने-ख़ातिर[13] जो बेशतर[14] नहीं है॥

---

[1]'निगार' सितम्बर १९४९, पृ० ३९-४४; [2]मरनेमें; [3]दीप-शिखाकी जलन; [4]ख़ुशामद; [5]खीचातानीसे; [6]पडौसी, मित्र; [7]जिगरके दर्दकी अभ्यस्त; [8]पूर्ण-रूपेण; [9]अभिलाषाओका दाग; [10]नसीहतका सरसे पाँवतक आकार हूँ; [11]विश्वस्त; [12]सुबहका दीपक; [13]पूर्ण शान्ति; [14]अक्सर, अधिकांश।

यूँ तो दिलको कभी करार न था।
अब बहुत बेकरार रहता है॥

दिलकी हालत नहीं बदलनेकी।
अब यह दुनिया नहीं सम्भलनेकी॥

बस एक नजर और कि अब ख़त्म है क़िस्सा।
फिर होगी न तुमको मेरे मरनेकी ख़बर भी॥

हुई है क्या जाने क्या बुराई, क़फ़ससे पाते नहीं रिहाई।
गुलोंकी बूतक न उड़के आई, इधरकी शायद हवा नहीं है॥

इतनी ही रह गई है अब काएनात[1] दिलकी।
देखोगे जब तुम आकर कुछ इज़्तिराब[2] होगा॥

न हुई जल्वा-गहे-नाज़की[3] वुसअ़त[4] मअ़लूम।
गो मैं हर ज़र्रेको एक दीदए-हैराँ[5] समझा॥

तबाही दिलकी देखी है जो हमने अपनी आँखोंसे।
हो अब कैसी ही बस्ती हम उसे वीराना कहते हैं॥

कोई मुझ-सा मुस्तहक़्क़े-रहमो-ग़मख़्वारी[6] नहीं।
सौ मरज़ हैं और बज़ाहिर कोई बीमारी नहीं॥

इश्क़की नाकामियोंने इस क़दर खींचा है तूल।
मेरे ग़मख़्वारोंको अब चारा-ग़मख़्वारी नहीं॥

क़फ़ससे छुटके हुआ बाग़-बाग़ दिल कैसा?
बहार दे गया उजड़ा हुआ नशेमन भी॥

---

[1]पूंजी; [2]बेचैनी; [3]माशूक़के सौन्दर्य-सदनकी; [4]विशालता; [5]चकित दृष्टि; [6]दया-पात्र।

ख़िज़ाँ अंजाम है सबकी, बहारे चन्द रोज़ाकी।
बहुत रोता हूँ सूरत देखकर गुलहाए-खन्दाँकी[1]॥

पर्दा उठा दे इक दिन तू ऐ हिजाबे-हस्ती[2]!
पाता हूँ उसको दिलमें देखा मगर नहीं है॥

आते-आते रुक गया है, दम जो मुझ दिलगीरका।
आह भरकर मुन्तज़िर हूँ आहकी तासीरका॥

वोह एक तुम कि सरापा बहारो-नाज़िशे-गुल[3]।
वोह एक मैं कि नहीं सूरत-आशनाये-बहार[4]॥
ज़मींपै लाल-ओ-गुल बनके आशिकार[5] हुआ।
छुपा न ख़ाकमें जब हुस्ने-ख़ुदनुमाए-बहार॥

तमल्लुक[6] -गुलो-शबनम है राज़े-उलफत[7] भी।
उन्हें हँसाये, जहाँतक हमें रुलाये बहार॥

दिल था तो हो रहा था, एहसासे-ज़िन्दगी[8] भी।
ज़िंदा हूँ अब कि मुर्दा, मुझको ख़बर नहीं है॥
मरनेपै जिस्मे-ख़ाकी[9] क्या साथ रूहका[10] दे।
राहे-अ़दममें[11] ग़ाफ़िल! गर्दे-सफर[12] नहीं है॥
बेसाख़्तगीये-जोशेजुनूं[13] दाद-तलब[14] है।
चल निकले हैं, गो हमने बयाबाँ[15] नहीं देखा॥
सोज़ाँ[16] ग़मे-जावेदसे[17] दिल भी है जिगर भी।
इक आहका शोअ्ला[18] कि इधर भी है उधर भी॥

---

[1]विकसित फूलकी, [2]जीवनकी शर्म, [3]वहारकी सम्पूर्ण शोभा लिये हुए; [4]वहारसे परिचित; [5]प्रकट; [6]सम्बन्ध, [7]प्रेमका भेद; [8]जीनेका आभास, [9]मट्टीका बना शरीर, [10]आत्माका, [11]परलोक-मार्गमे, [12]धूल-मिट्टी; [13]उन्मादका नि.सकोच जोश, [14]शावासीके योग्य, [15]जगल; [16]जलता हुआ; [17]स्थाई व्यथासे, [18]चिनगारी, ।

वोह् अंजुमने-नाज[1] है और रंगे-तग़ाफुल[2]।
याँ मरहलए-आह[3] भी, अन्दोहे-असर[4] भी॥
वोह शमअ़ नहीं है, कि हों इक रातके मेहमाँ।
जलते है तो बुझते नहीं हम वक़्ते-सहर[5] भी॥
जीनेके मज़े देख लिये तेरी बदौलत।
अब-ओ दिले-नाकामे-तमन्ना[6] कहीं मर भी॥

अपनी शबे-हिजराँमें[7] नहीं दख़्ले-तग़ैय्युर[8]।
बातिल[9] है यहाँ फ़ल्सफ़ए-शामो-सहर[10] भी॥
सुनता हूँ कि ख़िरमनसे[11] है बिजलीको बहुत लाग।
हाँ एक निगाहे-ग़लत-अन्दाज इधर भी॥

मेरी सूरत देखकर क्यों तुमने ठंडी साँस ली?
बेकसोंपर रहम आईने-सितमगारी[12] नहीं॥

हर तरफ़से यह सदा आती है मुल्के-हुस्नमें—
"यह वोह दुनिया है जहाँ रस्मे-वफ़ादारी नहीं।"

सवादे-शामे-ग़मसे[13] रूह थर्राती है क़ालिबमें[14]।
नहीं मअ़लूम क्या होगा, जो इस शबकी[15] सहर[16] होगी॥
क़फ़ससे छूटकर पहुँचे न हम, दीवारे-गुल्शनतक।
रसाई आशियाँतक किस तरह बेबालो-पर होगी॥

---

[1]प्रेयसीकी महफ़िल; [2]उपेक्षा-भाव; [3]आहकी समस्या; [4]आहके असर न होनेका दु:ख; [5]प्रात:काल; [6]अभिलाषामें असफल हृदय; [7]वियोगरात्रिमें; [8]परिवर्त्तनका इख्तियार; [9]निरर्थक; [10]सन्ध्या-प्रात:कालकी दार्शनिक चर्चा; [11]खलिहानसे; [12]अत्याचारका नियम; [13]ग़मरूपी सन्ध्याकी कालिमासे [14]शरीरमे; [15]रात्रिकी; [16]सुबह।

नज़र लखनवी

फ़कत इक साँस बाकी है, मरीज़े-हिज्रके तनमें।
यह काँटा भी निकल जाये तो राहतसे बसर होगी॥

हर कदमपर बाग़े-आलममें बिछा है दामे-हुस्न[1]।
कौन ऐसा है जिसे ज़ौके-गिरफ़्तारी[2] नहीं॥
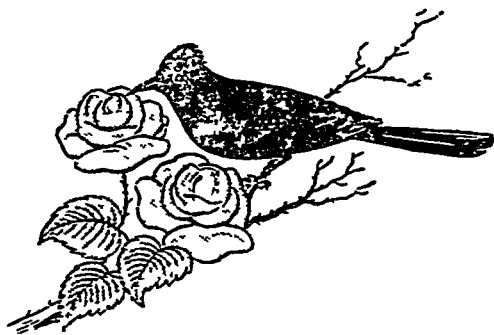
जहाँमें चार दिन रहकर फकत बूए-वफा देना।
गुलोंसे मैं सबक लेता हूँ आईने-मुहब्बतका[3]॥

२५ फरवरी १९५२

---

[1]सौन्दर्य-जाल; [2]बन्दी होनेका चाव; [3]प्रेमधर्मका।

सैयद अहमद 'नातिक' मुहम्मद अब्दुल वशीर 'वास्ती' बिल्गरामीके पुत्र थे। आपके पूर्वज बगदादसे भारत आये थे। नातिक १८७८ ई० मे लखनऊमे जन्मे और वही शिक्षा प्राप्त की। यूनानी हिकमतका पेशा करते थे। खेद है कि पूर्वी पाकिस्तानके चटगाँवमे १९५१ ई० मे आपकी मृत्यु हो गई। आप गज़लके माने हुए उस्ताद थे।

आपके स्वय के पसन्दीदा अशआर निगार जनवरी १९४१ मे छपे थे, उनमे-से चन्द यहाँ साभार दिये जा रहे है—

अपना-अपना हाल कह लेने दो 'नातिक' सबको तुम।
जानता है वह कि किसके दिलमें कितना दर्द है॥

जो न सँभला इब्तिदाए-इश्कमें[1]।
फिर वह आखिरतक सँभल सकता नहीं॥

गुजारी देखने में उसको सारी जिन्दगी मैंने।
मगर यह शौक है देखा नहीं गोया कभी मैंने॥
मुहब्बत एक मुद्दतसे है, यह मअ़लूम होता है।
तुम्हें हर चन्द पहिली बार देखा है अभी मैंने॥

मैकशो मैकी कमी-वेशीपै इतना जोश है।
यह तो साकी जानता है किसको कितना होश है॥

---

[1]प्रेमके प्रारम्भमे।

कह रहा है शोरे-दरियासे समन्दरका सुकूत[1] —
"जिसका जितना जर्फ़[2] है उतना ही वोह ख़ामोश है ॥"

इब्तिदासे[3] आजतक 'नातिक' यही है सरगुज़िश्त[4]।
पहिले चुप था, फिर हुआ दीवाना, अब बेहोश है ॥

किये जा याद सारी उम्र उस हल्लाले-मुश्किलको[5]।
किसी दिन एक हिचकीमें गिरह खुल जायगी दिलकी ॥

मुबारक तुमको जलवा, और चश्मे-ख़ूँफ़िशाँ[6] मुझको।
तेरा नज़्ज़ारा करलूँ, इस क़दर फ़ुर्सत कहाँ मुझको ॥

वोह बेनक़ाब कहीं बेनक़ाब होता है।
कि आफ़ताब ख़ुद अपना हिजाब[7] होता है ॥

मजाल किसकी जो दे साथ उसकी मंज़िलतक।
कहीं वही न हो, सूरत बदलके रहबरकी[8] ॥

सबसे बेहतर मैं, कि मेरा ज़िक्र उस महफ़िलमें है।
मुझसे बेहतर वोह कि जिसको याद उसके दिलमें है ॥
मुझसे छुप सकती नहीं है आपकी कोई अदा।
दिल मेरा आईना है और आपकी महफ़िलमें है ॥

राज़[9] अगर कौनैनके[10] ज़ाहिर हुए 'नातिक' तो क्या।
काश वोह मअ़लूम हो जाये जो उसके दिलमें है ॥

---

[1] शान्त वातावरण; [2] पात्रता, गौरव; [3] प्रारम्भसे, शुरूअ़से, [4] स्थिति; [5] मुश्किल हल करनेवालेको; [6] रक्त बरसानेवाली आँखें; [7] पर्दा; [8] पथ-प्रदर्शककी; [9] भेद; [10] दोनो संसारके।

या जुदाईके है दिन नजदीक या मरनेके दिन।
कह रहे है वोह कि अब कोई जफ़ा बाक़ी नहीं॥
डूबता हूँ मैं मदद मेरी करे जो कोई हो।
मुझको एहसासे-खुदा[1]-ओ-नाखुदा[2] बाक़ी नहीं॥

ऐ शमअ! तुझपै रात यह भारी है जिस तरह।
मैंने तमाम उम्र गुजारी है इस तरह॥

उन जफ़ाओं पर भी दिल क्या जाने क्यों गिरवीदा[3] है?
इश्क़ है इक राज[4] जो आशिक़से भी पोशीदा[5] है॥

जौक़े-फ़नाका[6] भी कोई हासिल[7] नहीं रहा।
मरता हूँ मैं कि मरनेके क़ाबिल नहीं रहा॥

छुपकर हवाके झोंकोंमें आती हैं बिजलियाँ।
'नातिक़'! चमन यह रहनेके क़ाबिल नहीं रहा॥

सर आँखोंपर ग़मे-दुनिया-ओ-उकबा[8]।
मगर अब दिलमें गुंजाइश कहाँ है॥

वोह नाजुक वक़्त आया आख़िरकार।
कि हर रंग अब तबिअ़तपर गिराँ है॥

दिल-शिकन[9] साबित हुआ हर आसरा मेरे लिए।
कोई दुनियामें नहीं मेरे सिवा मेरे लिए॥
शाहराहे-आमसे[10] रुसवाइये-मंजिल[11] न कर॥
कुछ नई राहें निकाल ऐ रहनुमा,[12] मेरे लिए॥

[1-2]ईश्वरका और मल्लाहका ज्ञान; [3]अनुरक्त; [4]भेद; [5]छिपा हुआ; [6]मृत्युके शौकका; [7]लाभ; [8]लोक-परलोककी चिन्ता; [9]दिलको चोट पहुँचानेवाला; [10]आम रास्तेसे; [11]मंजिलकी बदनामी; [12]मार्ग-दर्शक।

दैरो-हरममें[1] बहस थी यह दिल कहाँ रहे?
आखिरको तय हुआ कि यह बेखानुमाँ[2] रहे॥

सौ तीर जमानेके एक तीरे-नजर तेरा।
अब क्या कोई समझेगा दिल किसका निशाना है॥

यह असर आया कहाँसे इक शिकस्ता[3] साजमें।
तेरी ही आवाज है मजलूमकी[4] आवाजमें॥

तबस्सुम[5] उनके लबपर एक दिन वक्ते-अ़ेताब[6] आया।
उसी दिनसे हमारी जिंदगीमें इन्कलाब आया॥
चलो देखें तो 'नातिक' अपनी हदसे बढ़ न आया हो?
उठा है शोर कअ़्बेमें कि इक खाना-खराब आया॥

'नातिक'से चलो पूछ लें असरारे-मुहब्बत[7]।
फिल्जुमला ग़नीमत है कि दीवाना नहीं है॥

निगाहें बाग़बाँकी बार-बार उठती है उस जानिब[8]।
गिरे जाते है एक-एक करके सब तिनके नशेमनके[9]॥

कभी दामाने-दिलपर दाग़े-मायूसी नहीं आया।
इधर वअ़्दा किया उसने, उधर दिलको यकीं आया॥
मुहब्बत-आश्ना दिल मजहबो-मिल्लतको क्या जाने?
हुई रोशन जहाँ भी शमअ़् परवाना वहीं आया॥

मेरी जानिबसे उनके दिलमें किस शिकवेपै[10] कीना[11] है।
वोह शिकवा जो जबाँ पर क्या अभी दिलमें नहीं आया॥

---

[1]मन्दिर-मस्जिदमे, [2]बग़र घरबारके; [3]टूटे हुए; [4]पीड़ितकी; [5]मुसकान; [6]क्रोधके समय; [7]प्रेम-भेद; [8]तरफ़, [9]नीडके, घोंसलेके; [10]शिकायतपर; [11]मैल, रंजिश।

हयाते-बेखुदी[1] कुछ ऐसी ना महसूस[2] थी 'नातिक'।
अजल[3] आई तो मुझको हस्तीका यकीं आया॥

मज़ेपै किस्सा आया था कि नज़्मे-ज़िंदगी[4] बिगड़ा।
कहाँपर ख़त्म कर दी बेवफ़ाने दास्ताँ मेरी॥

दिलमें है सरमायए-कौनैन[5] राहतके[6] सिवा।
दोनों आलम है मेरे कब्ज़ेमें किस्मतके सिवा॥

आवाज़े-दिलकश उसकी दिलमें छुपी है ऐसी।
धीमे सुरोंका नग्मा हर साँसकी सदा है॥

जब्त करना चाहिए जो जब्त हो सकता नहीं।
आँखमें आँसू भरे बैठा हूँ रो सकता नहीं॥

जोशे-गिरिया[7] और अँधेरी रात है।
क्या घटा है क्या भरी बरसात है॥

देखकर उनको, नज़रमें यह असर होता है।
जिस तरफ देखिए इक हुस्न नज़र आता है॥

सकून[8] जबसे है ख़तरा यह दिलको हरदम है।
कहीं वोह पूछ न बैठें कि दर्द क्यों कम है?

इक क़यामत है इबारत[9] आपके वअ़्दोंकी भी।
दिन गुज़रते जायेंगे मअ़्नी बदलते जायेंगे॥

हम सुख़न[10] उससे रहूँ 'नातिक' मेरा मतलब यह है।
वर्ना कुछ मअ़्नी नहीं होते मेरी तकरीरके॥

---

[1]तल्लीन ज़िन्दगी; [2]अनजानी-सी; [3]मौत; [4]जीवन-व्यवस्था; [5]लोक-परलोककी निधि; [6]चैनके; [7]रोनेका जोश; [8]चैन, आराम; [9]भाष्य, अर्थ, मतलब; [10]बात करता रहूँ।

जवाबे-साफ सुनकर पागया सब कुछ फ़कीर उनका।
सदा देनेंसे मतलब था फकत आवाज सुन लेना॥

उनके तेवर भी न विगड़े बात भी अपनी बनी।
हाल हम कहते रहे वह दास्ताँ समझा किये॥

बर्क़ से क्या हमको चश्मक, बाग़बाँसे क्या खलिश।
बात यह है आशियाँको आशियाँ समझा किये॥

गिरता है कोई आगमें क्या कीजिए? मगर—
शबनमको[1] आफताबकी[2] कुरबत[3] पसन्द है॥

अपने ही पैरवोसे[4] हुआ हो जो पाएमाल।
मैं राहमें वोह नक्शे-कदम[5] हूँ मिटा हुआ॥

खुशी-नाखुश मुझे जन्नतमें बसर करना है।
इक ज़रा रंग तबीअतका बदलना होगा॥

इक सुनहरी सतर थी जिसकी शुआए-बर्क़तूर[6]।
आज वोह खत साहेबे-मेअराजके नाम आ गया॥

शायद कुबूल होनेका वक़्त आ गया करीब।
ताकत जवाब देने लगी हर सवालमें॥

गुरबतकी[7] बेकसीपर[8] कर लूंगा सब्र यारब!
वापिस मगर न करना इस हालसे वतनमें॥

गर्क़ कर देती है किश्ती, नाखुदाकी[9] बेखुदी[10]।
छोड़ दे वह मैकदा साक़ी जहाँ मदहोश है॥

---

[1]ओसको; [2]सूरजकी; [3]नजदीकी, [4]अनुयायियोंसे, [5]चरण चिह्न; [6]तूर पर्वतपरकी बिजलीकी किरण; [7]परदेशकी; [8]असहाय स्थितिपर; [9]मल्लाहकी; [10]अज्ञानता, बेहोशी।

सफ़रमें सईए-कामिल[1] हो तो निकले राह मंजिलकी।
कि दरियाकी रवानीसे विना[2] पड़ती है साहिलकी॥

बढ़ी न क़तरेकी वुसअ़त[3] हुबाबसे[4] आगे।
मगर दिखा तो गया इक झलक समन्दरकी॥

गदाए-मैकदा[5] था अब हूँ मैं शेख़े-हरम[6] 'नातिक'।
कहीं ऐसा न हो पहचान ले कोई यहाँ मुझको॥

१६ फरवरी १९५२ ई०

---

[1]पूर्णरूपेण प्रयत्न; [2]नीव; [3]विस्तार; [4]पानीके बुलबुलोंसे; [5]मदिरालयका भिक्षुक; [6]मस्जिदका शेख।

मौलाना अली हैदर तबातबाई 'नज़्म' लखनऊमे १८५० ई० के करीब उत्पन्न हुए। आप अपने युगके अरबी-फारसीके ख्यातिप्राप्त विद्वान थे। जब वाजिदअलीशाह कलकत्तेके मटियाबुर्जमें नज़रबन्द थे, तब आप ही उनके साहबज़ादोंके शिक्षक थे। नवाबकी मृत्युके बाद हैदराबाद कॉलेजके प्रोफेसर नियुक्त हुए और उस पदपर ३० वर्षतक आसीन रहे। वहाँसे आपको पेंशन मिली और नवाब हैदराबादने आपको युवराजका शिक्षक बनाकर गौरव प्रदान किया। साथ ही नवाब हैदरजगका खिताब भी अता फर्माया। उस्मानिया यूनिवर्सिटी स्थापित होनेपर आपकी सेवाये वहाँ भी ली गई और वहाँसे विदेशी भाषाके अनुदित ग्रन्थ जितने भी प्रकाशित होते थे, उन्हे प्रेसमें जानेसे पूर्व आप निरीक्षण करते थे। 'शरर', 'साहा' और महाराज किशनप्रसाद 'शाद'-जैसे ख्यातिप्राप्त साहित्यिक आपके ही शिष्य थे। आपने अंग्रेज़ी कविताओंको उर्दूमें इतने लालित्यपूर्ण और स्वाभाविक ढगसे नज़्म किया है कि वे अनुवाद न मालूम होकर उर्दूकी ही निधि बन गई है। उनका उल्लेख नज़्मोंके इतिहास (शाइरीके नये दौर) में किया जायगा। यहाँ तो केवल आपके चन्द गज़लोंके अशआर इतिहासका क्रम बनाये रखनेके लिए दिये जा रहे है। आप दागके रगमें बेहतरीन कहनेवालोमें-से एक थे। आपका २३ मई १९३३ ई० को निधन हो गया।

न शोख़ीकर[1] ह्याकी वज़अ़में[2] अब फ़र्क़ आता है।
गुबार ऊँचा न हो जाये कहीं हम ख़ाकसारोंका[3]॥

कहाँतक रास्ता देखा करें हम बर्क़-ख़िरमनका[4]।
लगाकर आग देखेंगे तमाशा अब नशेमनका॥

अदाए-सादगीमें कंघी-चोटीने ख़लल डाला।
शिकन[5] माथेपै, गेसूमें[6] गिरह, अबरूमें[7] बल डाला॥

आगया फिर रमज़ाँ क्या होगा?
हाय ऐ पीरेमुग़ाँ! क्या होगा?

कहने सुननेसे ज़रा पास आके बैठ गये।
निगाह फेरके त्योरी चढ़ाके बैठ गये॥
निगाहे-यास[8] मेरी काम कर गई अपना।
रुलाके उट्ठे थे वोह मुस्कराके बैठ गये॥

लिहाज़ इतना अभीतक हज़रते-नासेहका बाक़ी है।
वोह जो कुछ-हुक्म फर्माते हैं, कह देते हैं हम 'अच्छा'॥

बन्दा तो इस इकरारपै बिकता है तेरे हाथ।
लेना है अगर मोल तो आज़ाद न करना॥

इस छेड़में कोई जो न मरता हो तो मर जाये।
वअ़दा है कहीं और, इरादा है कहीं और॥

क़ाबूसे नफ़्से-बदको[9] निकलने कभी न दे।
फिर शेअ़र है, जो यह सगे-दीवाना[10] छुट गया॥

---

[1]चुलबुली अदाएँ न दिखा; [2]लाजमे निर्लज्जताका आभास होने लगा है; [3]सेवकोंके हृदय कहीं आपे-से बाहर न हो जाये; [4]खलिहान जलाने-वाली बिजली का; [5]बल; [6]भवोंमें; [7]जुल्फोंमे; [8]निराश नजर; [9]इन्द्रिय-विकारोंको; [10]पागलकुत्ता।

लाया है कोई साथ, न ले जायगा कोई।
दौलत हो और आदते-एहसाँ[1] न हो, तो क्या?

एहसान ले न हिम्मते-मर्दाना छोड़कर।
रस्ता भी चल तो सब्जए-बेगाना[2] छोड़कर॥

आँखोंमें पड़के कहती है यह ख़ाके-रफ़्तगाँ[3]।
"सुर्मा जरूर दीदए-इबरतमें[4] चाहिए॥"

न देख अन्दाज आईनेमें अपना, पूछले हमसे।
जमाने भरसे अच्छा और तेरे सरकी कसम अच्छा॥

—शेअरुल्-हिन्द पहला भाग
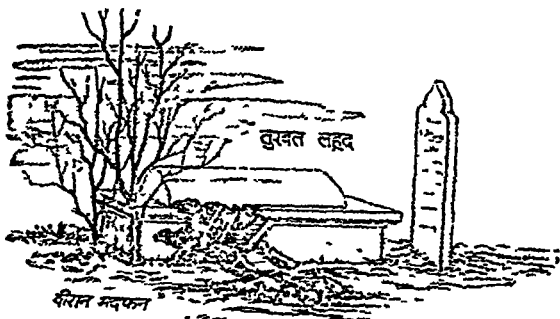
जवाब नामेका[5] कासिद[6] मजारपर[7] लाया।
कि जानता था उसे तावे-इन्तजार[8] नहीं॥

७ नवम्बर १९५१

---

[1]परोपकारी भावना, [2]हरी भरी घासको; [3]मार्गकी धूल; [4]नसीहतकी आँखोंमें, [5]पत्रका, [6]पत्रवाहक; [7]कब्रपर; [8]प्रतिक्षा सहनकी शक्ति।

2073

शेर-ओ-सुख़न

भाग ३-४

[मौजूदा दौरके ग़ज़ल-गो-शाइरे-आज़म]

पुरातन शाइरीका कायाकल्प और लोकोपयोगी भावोका समावेश, पवित्र प्रेमकी आराधना, नारीका सम्मान और १६०१ से १६५७ ई० तककी घटनाओंका गज़लपर प्रभाव

तीसरा भाग

[देहलवी रंगके सर्वश्रेष्ठ शाइर]

१. 'शाद' अज़ीमाबादी
२. अमरनाथ 'साहिर'
३. दत्तात्रिय 'कैफ़ी'
४. 'आज़ाद' अन्सारी
५. 'हसरत' मोहानी
६. 'फ़ानी' बदायूनी
७. 'वहशत' कलकत्तवी
८. 'यगाना' चंगेज़ी
९. 'अमजद' हैदराबादी
१०. 'आसी' गाज़ीपुरी
११. 'असगर' गोण्डवी
१२. 'जिगर' मुरादाबादी

चौथा भाग

[दाग स्कूलके उस्ताद शाइर]

१. 'सीमाब' अकबराबादी
२. लब्भूराम 'जोश'
३. 'नातिक' गुलाठवी
४. नवाब 'साइल'
५. 'आगाशाइर' क़िज़लबाश
६. 'बेख़ुद' देहलवी
७. 'नूह' नारवी
८. 'अहसन' माहरहरवी
९. 'नसीम' भरतपुरी
१०. 'बेख़ुद' बदायूनी
११. 'आसी' उदनी
१२. 'शाग़ल' देहलवी
१३. 'अहसान' रामपुरी आदि ३१ शाइर

इनके अतिरिक्त महरूम, ताजवर नजीबाबादी, अकबर हैदरी आदिका कलाम

मूल्य प्रत्येक भागका तीन रुपया